

रूप रसिकदेव और उनका साहित्य

(बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी)

: की :

पी-एच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

सन् 1999 ई०

शोधार्थी

मदनप्रताप सिंह चौहान

एम. ए.

निर्देशक

द्वाराका प्रसाद मीतल

एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्
सेवानिवृत्त, अध्यक्ष हिन्दी विभाग
बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी



प्रारम्भ

हिन्दी साहित्य में भी का जन्म सम्पूर्ण रहा है। इस जन्म का साहित्य
जैसे साम्प्रदायिक वर्गों से प्रभावित रहा है। उनमें उच्च जाति का हिन्दू और
हिन्दू सम्प्रदाय की सामर्थ्य थी। भी इस जातीय साहित्य पर हजराचार्य,
रामानुजचार्य, महाचार्य, निम्बार्कचार्य, बल्लभाचार्य, केशव स्वामी
चित्तरंजन, और वसन्त की का बड़ा प्रभाव रहा है। प्रभु का और वसन्त
का भी जन्म योगदान रहा है। हजराचार्य के ज्ञानवादी वर्ग के कारण
जन्म को किया मानकर वेदा यज्ञी प्रवृत्ति की प्रचार हुआ। ऐसी
व्यवस्था में व्यवस्था थी कि मान्य की कोमली वृत्ति का परिवर्तन कर
उन्होंने प्रेरणा जगकर ही औरमान्य वर्गों की ओर आकर्षित की।
और जन्म को भी उसी प्रभु का वर्ग मानकर उनमें तत्त्व का आरोपण है।
ऐसे वर्ग में निम्बार्कचार्य ने केवल केवल भिन्ना भिन्न वर्गों की स्थापना
की। यह के। भी है और अहिंसा भी है निम्बार्कचार्य के निम्बार्क सम्प्रदाय
में कृष्ण के साथ राजा की वृत्ति की स्थापना हुई। राजा को कृष्ण से
बदल कहाया गया। दोनों के निर्वर्तनर का वर्णन हुआ, जन्म उत्पत्ति
की पृष्ठ भूमि में उनकी श्रद्धा का वर्णन को सांख्यिक वर्ग से किया गया।
उत्पत्ति सम्प्रदाय भारतीय संस्कृति में है। लोकसंस्कृति का यह उत्पत्ति उत्पत्ति
होता है। यह प्रचार हिन्दी साहित्य अनुसार वर्ग प्रवृत्ति की ओर आकर्षित
हुआ। निम्बार्कचार्य प्रवृत्ति, प्रवृत्ति हुआ वर्ग का सामाजिक वर्ग। लोक से
उत्पत्ति सम्प्रदाय स्थापित हुआ।

निम्बार्क सम्प्रदाय का मुख्य साहित्यपरमो संस्कृत में लिखा गया।
परन्तु साधारण जन्म के लिये यह मुख्य था अहिंसे हिन्दी में निम्बार्क
साहित्य के प्रभु का प्रमाण हुआ। उनकी सांख्यिक प्रभु के विचारों
को हिन्दी में सम्प्रदाय उत्पत्ति सांख्यिक वर्ग। की औरमान्य वेदा ने
साधारण की स्थापना की जिन्होंने निम्बार्क सम्प्रदाय के चित्तरंजन का जो स्था
पना। वे भी प्रभावकारी मान्य है। जिन्होंने जन्म हिन्दू को और हिन्दूने
निम्बार्क साहित्य का बड़ा प्रचार किया। उनकी के का हिन्दू का संस्कृत वर्ग

जिनोंने अपने गुरु की आज्ञा की । अपने गुरु की प्रज्ञा में तब उनके प्रसादके ज्ञान के रूप में * हरिबोध कान्त * प्रभु की रक्षा की । प्रभु के लोक उत्तरी से दक्षिण स्थान का सम्बन्ध स्थापित कर युक्त वाराणासी को जो उनके इन उक्तों में पूरे विचार व्यंजितों का कार्य दिया । इन उक्तों में * बुद्ध उत्तम भिक्षुता * में पूजा । श्रीलालिती में श्रीलालिती का कार्य तथा * नित्य विचार पदावली में * नित्यविचार का कार्य हुआ । इस सत्त्व देव के प्रभावशाली मातृका के जोर रागरागिणियों के कदम पदावली में प्रभाव में बड़ी प्रौढ़ रक्षा की । उनका आदित्य ज्ञान होते हुए भी गुरु की साम्प्रदायिक भेदों तक नहीं था । उनके प्रकार प्रकार के तब का जो जो पदार्थ के लिये वह आवश्यक था कि उस पर लौकिक दिया जाय । यह लौकिक प्रबन्ध साम्प्रदायिकता की प्राप्ति के लिये तथा उनके आदित्य पर लौकिक प्रकाश पड़ेगा । जहाँ ये विचार पर कार्य होना निश्चित आवश्यक था । किन्तु लौकिक मोक्ष है वह ही की मोक्ष उद्भावनाओं को प्रकाश में लाया गया है ।

यह लौकिक प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में इस सत्त्व देव के विचार ज्ञान, ज्ञान के, गुरुत्व, ज्ञान का स्वरूप एवं जीवन पर प्रकाश पड़ता है । इस सत्त्व देव के सम्बन्ध में विचार निम्न है। द्वितीय अध्याय में इस सत्त्व देव के आदित्य का विचार दिया गया है जहाँ बताया गया है कि उन्होंने हरिबोध कान्त, बुद्ध उत्तम भिक्षुता, श्रीलालिती, नित्य विचार पदावली, और कृतकर्म की रक्षा की । कृतकर्म उपलब्ध नहीं है । अन्य वारों प्रभु के सम्बन्ध में स्वीकृत विचार रख दिया गया है।

तृतीय अध्याय में इस सत्त्व देव के आदित्य की पुण्य भूमि एवं श्रीलालिती पर प्रकाश डाला गया है । श्रीलालिती पर प्रकाश डालते हुए साम्प्रदायिक एवं साम्प्रदायिक स्थिति पर प्रकाश डाला गया है । साम्प्रदायिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुए लोक सम्प्रदायों पर प्रकाश डाला गया है। निम्नार्थक सम्बन्धी आदित्य में इस सत्त्व देव की जो ज्ञान निश्चित विचारण है।

सूर्य के साथ में नए सौर्य देव के दार्शनिक सिद्धांतों पर प्रकाश डाला गया है। जल, धूप, बुद्धिमान आदि के सम्बन्ध में बताया गया है। कुछ चीजों के अध्ययन पर प्रकाश डालते हुए नए सौर्य देव के दार्शनिक पर प्रकाश डाला गया है।

पंचम अध्याय में हम सत्यदेव के भक्ति पर प्रकाश डाला गया है। भक्ति की व्याख्या करते हुए भक्ति के प्रकार पर प्रकाश डाला गया है। निम्नार्थ का श्रुत्यावली भक्ति भावना पर प्रकाश डालते हुए हम सत्यदेव की भक्ति भावना बताई गई है। भक्ति साराधन, उन्मत्त, नागावाधार, कर्माका निरमेता, पर प्रकाश डालते हुए कृष्ण भक्ति के सम्बन्ध में बताया गया है। निम्नार्थ का श्रुत्यावली के भक्ति सम्बन्धी वाक्य विज्ञान सेवा, कर्माव, ना श्रुत्यावली निरमेता उन्मत्त, भक्ति सार सती के सर्व कर्म दिया गया है।

कल्याण कल्याण में इस सत्सङ्ग देव के कल्याण पर प्रकाश डाला गया है।
 उर्ध्व विष्णु को विद्वत् सम्माना गया है। उनसे भाव फल, राग, भाव, उन्म
 विद्वान को सम्माना गया है। जगत्तर विद्वान व गुणों पर प्रकाश डाला गया है।
 इस सत्सङ्ग देव का निम्नार्थ साधुवाद में कल्याण निम्नार्थ दिया गया है।
 इस सत्सङ्ग देव की उन्म कृतियों में कल्याण की गर्व है जो में बताया गया है कि
 इस सत्सङ्ग देव का विद्वत् साहित्य में क्या प्रदेय रहा । इस प्रकार समूचे
 शोध प्रबन्ध में इस सत्सङ्ग देव के सम्पूर्ण साहित्य पर विद्वान प्रकाश डाला गया है।

[illegible]

Handwritten signature: *AS 4/14 (12/4/20)*
 [Redacted signature area]

अनुक्रमिका

स्व रतिक देव और उनका साहित्य

प्राथमिक भाग

स्व रतिक देव जी का जीवन वृत्त

	<u>पृष्ठ संख्या</u>
प्रारम्भिक	1 - 3
अनुक्रमिका	4 - 6
1- स्व रतिक देव का उल्लेख करने वाली रचनाएँ	1 - 4
2- स्व रतिक देव की कृतियों में उपलब्ध जीवन सम्बन्धी सामग्री	5
3- जन्म तिथि	6
4- निधन स्थान	7 - 8
5- शास्त्र की	9
6- वैवाहिक जीवन	10
7- गुरुत्व	11 - 17
8- शास्त्र परम्परा	18
9- विविध व्यक्तियों से स्व रतिक देव का सम्बन्ध	19
10- वात्सल्य एवं व्यावहारिक जीवन	20 - 24
11- स्वभाव एवं चरित्र	25
12- जीवनोन्मत्त	26

द्वितीय भाग

स्व रतिक देव जी का साहित्य

1- साहित्यिक विवरण	27
2- प्रामाण्यता का विवरण	27
3- प्रमुख परिचय :-	
1- हरिद्वार वात्सल्य	28 - 33
2- वृद्धत्व मणिमान	34 - 38
3- लीला विवरण	39 - 43
4- निर्यादिकार वदामनी	44 - 48

4- ग्रन्थों का निम्नार्थ साहित्य में स्थान

पृष्ठ संख्या
44 - 53

तृतीय अध्याय

स्व रतिक देव के साहित्य की पृष्ठ भूमि एवं परिस्थितियाँ

1- भक्ति आन्दोलन	54 - 57
2- सामाजिक स्थिति	57 - 58
3- राजनीति की स्थिति	58 - 61
4- धार्मिक स्थिति	62
- शक्तिधारा का उत्पन्न	63
- रामानुजाचार्य का भी सम्बन्ध	64 - 65
- मध्वाचार्य का मध्य सम्बन्ध	66 - 67
विष्णु स्वामी सम्बन्ध	68 - 70
निम्नार्थ सम्बन्ध	71 - 72
बालार्थ सम्बन्ध	73 - 74
वैतन्ध सम्बन्ध	75 - 76
रत्नविमल सम्बन्ध	77
हरिदास सम्बन्ध	78
निम्नार्थ सम्बन्ध सम्बन्धी साहित्य एवं स्व रतिक देव	79 - 96

चतुर्थ अध्याय

स्व रतिक देव के दार्शनिक सिद्धांत

आचार्य निम्नार्थ के दार्शनिक सिद्धांत -	97 - 98
कर्म, ज्ञान, प्रकृत	98 - 101
प्रकृत का, मुक्ति का	101 - 103
पृष्ठ भूमि का अध्यात्मिक पक्ष	104 - 109
स्व रतिक देव के दार्शनिक पक्ष	110 - 119

पंचम अध्याय

स्व रतिक देव का शक्ति पक्ष

पृष्ठ संख्या

1 - शक्ति की व्याख्या	120 - 126
2 - शक्ति का विज्ञान	127 - 137
3 - निम्बार्क सम्प्रदाय की शक्ति भावना	138 - 139
4 - स्व रतिक देव की शक्ति भावना	150 - 158
5 - निम्बल जिराहना	159 - 160
6 - उन्नयना	161 - 164
7 - नाम जटार	165 - 167
8 - वर्णाश्रम नियमेशता	168
9 - धर्म का ह्याटार	169 - 170
10 - गुण शक्ति	171 - 173
11 - निम्बार्क सम्प्रदाय के शक्ति सम्बन्धी बाह्य विधान :- - सेवा, समाज, साम्प्रदायिक, नैतिक, उत्तम, तिलक, कंठो	174 - 194

षष्ठ अध्याय

स्व रतिक देव का कौट्य पक्ष

1 - वर्ण विभाग	185 - 195
2 - शास्य पक्ष	196 - 197
3 - रत्न	198 - 200
4 - शास्य	201 - 208
5 - अन्य विधान	209 - 210
6 - उत्तमकार योजना	211 - 218
7 - गुण	219 - 220
8 - स्व रतिक देव की का निम्बार्क सम्प्रदाय में स्थान	221 - 222
9 - स्व रतिक देव की को अन्य कविता से तुलना	223 - 224
10 - हिन्दु साहित्य की स्व रतिक देव की का उद्देश	225 - 226

साहित्य ग्रन्थ सूची

- संस्कृत ग्रन्थ	227
- हिन्दु ग्रन्थ	228 - 229

प्रथम अध्याय

रूप रसिक देव जी का जीवन वृत्त

स्वराष्ट्रिक देश की का बीका मुल्य

स्वराष्ट्रिक देश का उत्थित करने वाली रणनीति - प्रथम साहित्य का विकास -
डॉ० एल० ए०

इन चीजों के उपरान्त यह सम्प्रदाय के एक अन्य महान कवि हैं, श्री स्वराष्ट्रिकीय की - श्री स्वराष्ट्रिकीय की श्री दक्षिणी एवं प्रविण ग्राहण कृतोत्पन्न माना जाता है । ३६ वर्ष की अवस्था में मयूरा में उन्होंने श्री स्वराष्ट्रिक देश की का विस्तृत स्वीकार किया, किन्तु यह कथुवि है कि श्री स्वराष्ट्रिक की का स्वराष्ट्रिक की का विस्तृत स्वीकार किया किन्तु यह कथुवि है कि स्वराष्ट्रिक की का स्वराष्ट्रिक की का विस्तृत ग्रहण करने के लिए मयूरा पहुँचे तो वहाँ विदित हुआ कि स्वराष्ट्रिक की की पुस्तु तो फुटी है, किन्तु उन्होंने प्रविण की कि का एक वाच्य स्वराष्ट्रिक की के दली नहीं कर हुँगा कोई कार्य नहीं कहेंगा । यह विस्तृत किया जाता है कि उनकी यह प्रविण के कारण श्री स्वराष्ट्रिक की को फुट होना पड़ा, और उन्हें विविध पूर्वक संक-दीक्षा की के उपरान्त उन्होंने अपना दिव्य स्वरूप धुप्य किया । इसके उपरान्त स्वराष्ट्रिकीय की का सम्प्रदाय का सम्प्रदाय में विवेक हुआ । स्वराष्ट्रिक देश की में तीन भाग्य प्रत्यक्ष हैं । एक मुहूर्तस्तम भाग्यवाच, दूसरा स्वराष्ट्रिक यज्ञमय और तीसरा नित्य विचार भक्तवती । यह सम्प्रदाय के स्वराष्ट्रिकीय की का श्री सम्मान है, यह कारण नहीं है, क्योंकि उनकी रक्षा में मायुर्वी और की वही है श्री स्वराष्ट्रिक की में मिलती है । यही नहीं भाग्य भादवे हमें जाने पुरा है श्री अधिक मिलता है । उनकी श्री रक्षा कोई भी पर देता नहीं है - विदित होता है - किन्तु श्री प्रवाद ही । कि होन्वर्ग का दली उन्होंने किया है यह नविम्य होन्वर्ग है । प्रथम और बारिद का स्वर प्रवृत्त रूप है, किन्तु यह कवि ने " स्वायत्त " का वर्णन करने में श्री एक नया होन्वर्ग प्रवृत्त किया है, यह पद में विविध होता है —

स्वायत्त-वर्ण, वर्णन - वर्णन का कार्य ।

श्रीट मुहूर्त, मुहूर्त, पीताम्बर, मयू वाचिनि वस्तुओं ॥

मीदिन - माछ छव उर ठपर, म्हु क पांति छव ।
 मुरही गरव कोर बुनि बुनि, सक - मोर बुनपाव ।।
 हन पर कुवा करि छरि नानी नीर - नेह-कर छवि ।
 "स्परसिक" यह सोना निरख, बन-न-नेन बिरामे ।।

निम्बार्क सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य - डा० प्रेमारायण श्रीवास्तव
"प्रेमन्द"

श्री स्परसिकीय की का प्रविष्ट प्राज्ञता कुलीन
 की कृष्ण मङ्गल कवि हुए हैं । वास्तविक वे ही भेष्टिक, ज्ञाता ही,
 दीक्षारानी तथा श्री राधाकृष्ण के परम उपासक थे । वे दक्षिण देश
 की होकर जल उपासक की भूमि पुन्यावन में बानी थे । पुन्यावन में
 जाकर जब बानी की हरिष्यासके की की कीति सुनी तो आप अपने उन्नी
देवकी दीक्षा लेने की बलिदान करने लगे । मरम्भ परन्तु दीक्षा
 लेने के पूर्व ही जब उन्नी हरिष्यासके के गौरीकाम नमन का समाचार
 मिला तो वे व्याकुल होकर संज्ञा हीन हो गये । कहा जाता है कि इनके
 इस भावार्थ में कुछ गुरु गुणानुवाद के रूप में "श्रीहरिष्यासकामुख"
 का प्रस्तुटन हुआ था । उन्नी तथा श्री हरिष्यासके ने दिव्यदेह कारण
 कर कौटुम्बिक संन थे उन्हें देवकी दीक्षा प्रदान की । इस प्रकार वे
 पक्षराजीय की परम्परा के निम्बार्कीय मङ्गल बन गए । वे वाचार्थ परशुराम
 देव के समानार्थिक थे । का: आपका जन्म सम्वत् १५६० वि० स्वीकार किया
 जाता है । इनके द्वारा लिखित तीन ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं - श्रीहरिष्यास
 वशाकृत, पुस्तुतल मणिनाथ और हीठा विज्ञान तथा नित्यविहार
 पदावली ।

१ - पुन्य साहित्य का इतिहास - डा० सत्येन्द्र पृष्ठ सं० १०६- १०७

२ - निम्बार्क सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य डा० प्रेमारायण श्रीवास्तव
 पृष्ठ २६४

श्री ह्परशिवदेव एक अद्वितीय रहस्य मन्त्र थे। श्री
 हरिश्चन्द्रदेव विरचित दिव्यमहावाणी को प्रकट करने के लिये ही मानी
 उनका अवतारण हुआ था । परम गौरव एवं रहस्य की परिपाटी के ज्ञाताओं
 में उनकी शक्ति एवं वाचा की वीरता ही होगी । श्री अधिकारी साहब
 उनकी शरण में पहुँचे उन्हें अनेक मात्र दे ही उन्होंने सुन के लिये का अनुमति
 करा दिया । वस्तुतः ये श्री प्रिया प्रियम की दिव्य रहस्य मानी
 वाचावत् रहस्यमय मानी ही ह्परशिव रूप है मन्त्र पर अवतरित हुई
 है ।^१

१ - दिव्यार्थ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य -

डा० प्रेमनारायण श्रीवास्तव पृ० २६४-२६५

मित्र कन्वु विनोद :-

मित्र कन्वु विनोद नाम ३ पु० १५६ में बुन्दावन
माबुरी की कर्वा की गयी है। वहाँ की रू स्परसिक्केस की के
सम्बन्ध में लिखा है -

पु० में० शीव में० इनकी एक पुस्तिका 'बुन्दावन -
माबुरी' का पता पठा है। जालास नागरी प्रचारिणी सभा में
पुछाया गया किन्तु वहाँ की जी एक पता नहीं पठा।

मित्र कन्वुजी ने यशवाणी का रक्ता काष्ठ सम्बन्ध
१५६० माना है। स्परसिक्केस में 'बी बुन्दावन माबुरी' के कन्वु
में उसका काष्ठ सम्बन्ध १५६० बताया है।

२ - स्व रक्षिक देव की कृपियों में उपलब्ध जीवन सम्पत्ती सामग्री -

श्री हरिध्यास यज्ञाभूष में कई स्थलों पर आपने श्री परशुराम देवाचार्य की का नामोल्लेख किया है जिससे पता चलता है कि आप उनके सग सम्पत्तिक थे । आप श्री परशुराम देवाचार्य से श्रोति हैं या कोई हों परन्तु जिस समय आपने हरिध्यास यज्ञाभूष की रचना की उस समय श्री परशुराम देवाचार्य आचार्य विंशत्यन पर विराजमान थे । उनका समय जीक पट्टे परधानों के आचार पर वि० सं० १५१५ से १५५० तक माना जाता है । "हरिध्यास कृन्दासन माधुरी" में उल्लिखित श्री स्वरक्षिक की का वि० सं० १५५० की मुक्ति मुक्त प्रतीय लीला है । श्री स्वरक्षिकीय के विरचित छीछाविंशति की कृन्दासन माधुरी में उनके पूर्ण करने के संक्ष १५५० का विवरण निम्न प्रकार आया है -

पदार्थिक सत्यादिवा मासीजन जासीव ।

यह प्रकल्प पुरन पयो, कुंठा एम दिन जीव ।।

आपने दक्षिण समय के एक दक्षिणात्य देवद्विजों की संज्ञा किया था । नात्यकाष्ठ है श्री श्रीरावा सर्वेश्वर प्रभु एवं उनके नाम । प्रव कृन्दासन । में आपकी स्वाभाविक निष्ठा थी, जब किशोर अवस्था पूर्ण होती ही आप श्री कृन्दासन मधुरा का गये थे । उस समय रक्षिक रावराक्षस श्री हरिध्यास देवाचार्य छीछा विस्तार कर चुके थे, किन्तु आपकी परम निष्ठा के कारण व्यक्त होकर उन्होंने आपको दर्शन दार उपदेश किया ।

१ - छीछा विंशति श्री कृन्दासन माधुरी स्वरक्षिकीय पृ० २४-८२

२ - श्री कृन्दासन माधुरी - स्वरक्षिकीय - भूमिका पृ०

श्री प्रकल्पमरण देवान्ताचार्य

३ - कर्म-विधि

श्री हरिश्चासदेव ने ब्रह्माणा में महाबाणी की रक्षा की ।
 भिक्षु-मुनी ने उनका रक्षाकारु संवत् १५१७ माना है । श्री हरिश्चासदेव
 की के शिष्य कपरसिन्धु श्री ने " श्री मुन्दासन मासुरी के वन में उनका
 रक्षा कारु संवत् १५५७ बताया है । दिव्य महाबाणी को फाट कर ले
 लिये ही उनका कलार हुआ था । परम नीच रक्षक - स्व की परिपाटी
 के आवाज में उनकी समस्त रक्षी बाका कीर्त नहीं था, जो बाधकारी बाधक
 उनकी छाया में लगे उन्हें संभल दे ही उन्होंने कुम्भ केरि का अनुभव करा
 दिया । वे श्री प्रिया-प्रियम की दिव्य सत्परी का बाधावा रक्षित भी
 कर्मोन्म ही कपरसिन्धु के रूप में मृत्यु पर फाट हुए थे ।

४ - निवास स्थान

स्परशिक्रिय महात्मा न वापि के वसिष्ठाजी ब्राह्मण थे ।

उनके पूर्वज बहुत समय से इस देश में वा बसे थे । इसलिए उनकी शिक्षा भी वहीं देश में हुई । उनकी वाहन-वाह भी थी (बूँदर या मरु) । देवताधियों की ही ही गई । ये जन्म से ही वैश्विक श्रद्धा भूत का - पालन करते रहे । धीरे धीरे ये संसार से उदासीन हो कर तीर राधा-कृष्ण ही देवा तथा माफ्ता में रहने लगे ।

देवी राधाकृष्ण की ज्वा सुने में उत्पन्न रहते थे । जहाँ पर भी कृष्णोपासक भक्तों का सम्मेलन हुआ वही ज्वा भी वहाँ से उठकर उपवास कर देते थे । ये ३६ वर्ष तक वही प्रकार कर में रहे । बाद में एक स्वप्न में परमात्मने आज्ञा की कि अब तुम भी हरिष्ठास देवाचार्य की शरण में जाओ । उन्होंने भी हरिष्ठास देवाचार्य का स्वीकृत प्राप्त हुन रहा था । इसलिए वे प्रार्थना होकर देवी हरिष्ठास देवाचार्य की शीव में मगुरा पहुँचे । किन्तु उस समय भी हरिष्ठास देवाचार्य अपनी हीला संवरण कर परमधाम प्यार कुँ थे । उनके शिष्य भी परशुराम देवाचार्य मगुरा में भूत टीला पर विराजमान थे । उन्होंने उन परशुराम देवाचार्य से भी हरिष्ठास देवाचार्य के सम्बन्ध में पूछा तो उन्होंने कसमक कसा कि भी महाराज ही भी पीछे फिर कुँ परमधाम प्यार कुँ हैं । यह सुनकर स्परशिक्रिय नृसिंह होकर फिर गये ।

श्री परशुराम देवाचार्य ने बीरे बीरे का स्वागत देकर हाथी से लगाया ।
 स्मरतिष्ठान ने कहा कि मैं तो उन्हीं महाराज की तरफ में जाऊंगा
 बाहे प्राण रहें या न रहें । कलक कुल धारण कर मैं प्राण त्याग दूंगा ।
 ऐसा कहकर वे रत्नासन से उठकर उनका व्यान करने लगे । वही प्रकार
 जब पांच दिन बीत गये तो श्री हरिध्यास देवाचार्य ने फूट होकर दली
 पड़े । हरिध्यास देवाचार्य ने कहा कि मेरे मैं लाम्हे उड़ा हूँ । हन्तानि
 मेरे लीकर का देहा ही आनामुकुट श्री हरिध्यास देवाचार्य की दिव्य
 रूप में लम्हे लाम्हे पाया । हन्तानि पुनः लीकर आम्हाने पंखों की ।
 श्री हरिध्यास देवाचार्य ने पंख लंकार कर श्री महाबाणी का उपदेश
 किया और नित्य धाम की उपासना कराई । हन्तानि श्री हरिध्यास
 देवाचार्य की महाबाणी का प्रचार किया ।

५ - काव्य दोष

श्री हरिव्यास यज्ञाश्रम की पुनिका में लिखा है " इनके काव्य दोष " नीचे काव्य " काव्य तक भिन्न है । दिन में एक यज्ञ " श्री हरिव्यास यज्ञाश्रम " इस प्रकार काव्य दोष है और दूसरे काव्य का नाम " गुरुतुल्य - मणिमाड " है इसमें काव्य काव्य [नाथ सुखा ५ श्री वेदनी] है उमाकर काव्य काव्यी [नाथ श्रीगुरु सुखा २२] एक है इस यज्ञाश्रम की मगधान के यज्ञाश्रम के यज्ञ नाथ राम रामनिधी में वर्णित है ।

" इनके काव्य दोषों काव्य का नाम " नित्य विहार फदावती है । इसमें श्री नाथ रामरामनिधी में श्री राधाकृष्ण के नित्य विहार के एक ही बीच पद है " गुणकार में जादि में ही यह बात लिखी है - यथा " हस्तव बीच फदावती " काव्य संग्रह बार । लिख करत ही यह मना लिख पद नित्य विहार ।।

१ - श्री हरिव्यास यज्ञाश्रम की पुनिका पृष्ठ ३

श्री मत्स्य भूविनायक पदाभिज्ञानित वेष्णव रामकन्दराय एवं यज्ञाश्रम के उत्सव कर्ता कदावती -

२ - श्री हरिव्यास यज्ञाश्रम की पुनिका पृष्ठ ४ -

श्री मत्स्य भू वेनायक पदाभिज्ञानित वेष्णव रामकन्दराय एवं यज्ञाश्रम के उत्सव कर्ता कदावती ।

६ - बंश परिष्कार

स्मरहितमित्र की की शापना कबूली थी । आपकी बेगनी रख
उपासकी में आप धिरेधीरे थे देखीये -

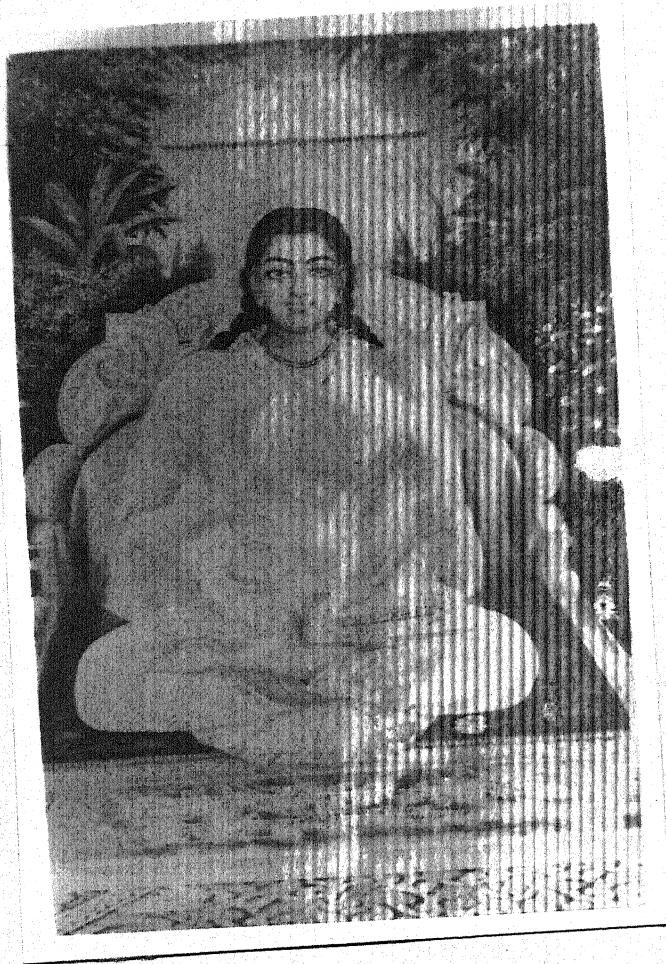
हे हरिनाम सदा सर्वोपरि की परछी पर भेद लीं मन ।
सुर के नीचे न शेष के ऊपर नौकर लीं लोचन लीं मन ।।
छाँट फाँट करके धिरेधीरे की नीर की नैष्ठिक लीं नहीं मन ।
एक ही नीर है एक सिटी पर भी हरिनाम के बाद पर मन ।।

उनके कम कम सदा ग्रामादि के नाम का ठीक ठीक
पता लगाना बहुत उचित है । उन कम के नवास्थापन पर धिरेधीरे नीर
परिष्कार रक्षित लीं है । वे अपनी पूर्ववस्था के ग्रामादि का पता हत्यादि
नहीं दिया करते थे । वे अपनी कीर्ति के निमित्त भी कोई काम नहीं करना
चाहते थे ।

आप बहिष्कार काम के एक बहिष्कार नैष्ठिक विस्तृत के
है । बाल्यकाल है की भी राधादेवस्वर प्रभु एवं उनके नाम (प्रभु कुन्दावन)
में आपकी स्वाभाविक निष्ठा थी । इसलिए किसी कल्याण पूर्ण लीं की
आप कुन्दावन - पुरा नाम है ।

१ - प्रकाशकीय दशम्य - श्री लीलाविजयि - माधुरीदास -

काव्यशार पृष्ठ १



गुरुवर श्री हरिव्यासदेव जी

गुरुत्व

गुरु की सर्व साधनों की कुंजी कहा गया है। सर्वसाधनों के मूल गुरु ही है। निर्गुण - सगुण ब्रह्म के उपासकों में सगुण की भाविता का परम नाम गुरु है। श्री हरि के चरणों पर गुरु बसाया कर सकते हैं, पर गुरु के लक्ष्य होने पर साक्षात् परब्रह्म की सहायता करने में कामी हैं। सर्व प्रकार के प्रयत्न करके गुरु की प्रशंसा करने का उपाय ब्रह्मना पाविके। गुरु की साक्षात् हरि ही हैं। का - कल और कर्त है निष्कल नाव पूर्ण गुरु की सेवा करनी पाविके। श्री स्वराध्याय की ने साक्षात् के आरम्भ में कभी गुरुदेव श्री हरिध्यासदेव का "सकल कर्म के नाम" कह कर सर्व प्रथम स्मरण किया कि उन्होंने कभी गुरु की प्रशंसा में हरिध्यास महापुरुष प्रथम की रक्षा की है। स्व-राध्याय में गुरु की नित्य स्तुति कादि और कालिब कहा है। उनके गुरु श्री हरिध्यास देव की नित्य सभी सभी परिकर में श्री हरिध्यास सत्कारी के रूप में सेवा समीक्षा विधान रखी है। वे ही बलि

१ - प्रथम सुपरि हरिध्यास, सकल कर्म के नाम ।

द्विज यह कथा है कथन, हीता विधि नाम ।। - हीताविधि १

२ - का का श्री हरिध्यास नु, नित्य हरिध्यास नाम ।

हीता विधि २५३

कृताण्ड के रीत हैं। पर कृपारमैस्वर की पुण्यी पर कर्त्तव्य होने पर आप भी उनकी कृपानुसार स्वल्प धारण कर प्रकट होते हैं। मर्कटों के मुखपट्टियों के पाँव भी आप ही हैं। आपने श्री हरिप्रिया सखरी के रूप में प्रकट होकर रत्नियों के प्रति नित्य विचार रख का प्राकृत्य कर उनके मन-मुरों को मर्कट का दिया है। श्री गुरुदेव की सम्पूर्ण मुक्तियों की सुन्दर मुकुटमणि के रूप में दीपायमान हो रहे हैं।

श्री स्फुरतिस्वर ने गुरु की निम्न सम्प्रदाय का वाचार्थ बदल कर उन्हें शक्तिमान मानवत्वरूप माना है। श्री हरिप्रिया देव की निम्न सम्प्रदाय का वाचार्थ करने का वात्सल्य वहाँ गुणादीत कथा बल-रक्षक से परे निम्नादीत से है। स्फुरतिस्वर निम्नार्थ सम्प्रदाय के वाचार्थों की ही निम्न सम्प्रदायस्व वाचार्थ कही हैं। क्योंकि ये वाचार्थ सत्त्वगुण रवीगुण और तनीगुण से उभरा जाता है। गुरु - चरणों का कष्टमय ग्रहण कर लेने पर सब कुछ सुख हो जाता है। वेद का वाक्य के वाचार्थों में कि किना गुरु के मन्त्रान की प्राप्ति उभरा - वाच्य है।

१ - यहाँ श्री हरिप्रियासु निमित्त ही गुरु शि - शिष्टाविति २०१२

२ - का का श्री हरिप्रियासु से मर्कट पुन मनीष।

उच्छा विपुल हरिप्रिया प्रकट रूप धरने - शिष्टाविति ४२

३ - प्रकट रत्नों रत्न धार सुख कृत्य नित्य विचार - यही ४४२

४ - निमित्त मर्कट कृत्य, मन्त्र प्रार मुधार - यही ४५१२

५ - वाचार्थ श्री गुरु निम्न सम्प्रदायस्व वाचार्थ हैं श्री वाचार्थमय रूप -

६ - श्री गुरुनाम निम्न सम्प्रदायस्व वाचार्थन की - है - शिष्टाविति ५०४२

- हैं और श्री यह नाम उभरा नहीं, श्री वाच्य कर्म वाच्य होत होत

रक्षक होत रक्षक होत परवाणी गुना होत श्री श्री निम्नार्थ सम्प्रदाय

वाक्य वाच्य होत, एवं ही यह सुख निमित्त कथा निमित्त नहीं श्री वाचार्थ

कभी प्रकट में निमित्त प्रकट हैं - शिष्टाविति ५०४०३०

७ - निमित्त कथास्व शिष्टाविति ५०४०३० निमित्त कथा कथा मन्त्रान की प्राप्ति वाक्य

श्री श्री गुरु की वाच्य शिष्टाविति ५०४०३० निमित्त कथा गुरु मन्त्रान की

प्राप्ति नहीं - शिष्टाविति - ५०४०३०

रूप-रहितत्व ने " श्री हरिव्यास यज्ञाभूष " में सर्वत्र गुरु की महत्त्व का नाम दिया है । किन्तु वे गुरु नाम का एक बार ही उच्चारण करने पर भी राधाकृष्ण मंत्र के ही बार काय का फल मिलता है ।^१ त्रिगुणात्मिका प्रकृति पर जो स्वल्प गुरु की धेरी का कर रखी है ।^२ गुरु की हरि रूप से माया का वाक्य प्रथम कर त्रिगुणात्मक जल का विस्तार करती है । माया उनकी दाहि बाँकर उनसे प्रण-कर्मों का संघाल करती है ।^३

माया के कारण जीवात्मा बांधारित माया नीच रूपी नीच कर्माकार में गटक्या रहता है । जब तक परमात्म-स्वरूप गुरु ज्ञान का प्रकाश उसे नहीं मिलता, जब तक लाल बहामाँकार दूर नहीं होता । काः काहे - रोहि - उठे - बैठे निरन्तर परमात्म गुरु का ही भक्त चिन्तन करना चाहिए । पूर्ण परात्मा गुरु एक रूप हीकर भी लोक रूपों में अन्तार धारण करती है । श्री कृष्णका मन्द के रूप में भी वे ही प्रकाशित हो रहे हैं । श्री युक्त का नित्य विचार भी उन्हीं से प्राप्त है । कहेयः एक ही परमात्म ज्ञान-वाणी नीच रूप में प्रकाशित हो रहा है ।^४ गुरु कृपा से ही सुखीभाषना जल बाँधोभाषना का रहस्य समझ में आ सकता है ।

१ - एक बार हरिव्यास रचना किन्ही उत्तार ।

श्री श्री राधाकृष्ण की मंत्र कर्मा ती बार - हरिव्यास यज्ञाभूष पृ० ४१ ३३

२ - रूप रहित हरिव्यास पु, बाँकारव कर काय ।

जुल प्रकृति धेरी मर, त्रिगुण प्राप्ता काय ॥ हरिव्यास यज्ञाभूष ४१४३

३ - रूप-रहितहरिव्यास पु, बाँकारव हरिराम ।

माया का विस्तारणी, बाधु पलीला काय ॥ पृ० ४१४४

४ - जने ही हरिव्यास मरि, रोहि ही हरिव्यास ।

उठत बैठत फिरत ही - स्मास स्मास हरिव्यास ॥ पृ० ४१४५

५ - एक रूप हरिव्यास पु है लोक अन्तार ।

श्री कृष्णका मन्द श्री वरन्धी निर विहार ॥ पृ० ४१४६

६ - श्री राधाकृष्ण उपाधना श्री कृष्णका नाम ।

श्री हरिव्यास कृपा किता पूरेन होय व काय ॥ पृ० ४१४७

की रूप रसिक के के अनुसार वास्तविकता यह है कि
 की हरि की विराट् सत्ता के रूप में की गुरु की विराजमान हैं ।
 गुरु अपने उपदेशों से शायक का मन सांसारिक मोह नाथा से बटाकर
 ईश्वरीयमान करते हैं । गुरु कृपा से ही शायक जात्यात्मिक काम में
 प्रसिद्ध हर गोविन्द के गुरु मान का जानन्दानुभव कराता है । इच्छि
 गुरु की कृपा ही प्रदान के गोविन्द की नहीं ।

त्रिगुणात्मक माना जात है गुरु होने के लिए
 त्रिगुणाधीन परब्रह्म रूपसुख सद्गुरु की ही उपाय ग्रहण करनी चाहिये
 उनकी कृपा बिना की साधनोपक्रम के रक्षण भी नहीं जाना जा सकता ।
 हरिध्यास के अर्थ नाम हरि का ही यदि जप्य ग्रहण कर लिया जाय
 तो करात लक्ष्मण से सत्य ही में हुटकार मिट सकता है । अतः द्वात्रिंश
 का है तथा उनके लक्ष्मण 'हरि' का ही चिन्तन करते रहना चाहिये ।
 श्री गुरु की मित्य उपासन, वन्द, कर्, परमोदार और वाचातु
 हरि रूपसुख है । ये गुरु नर मुनि तथा दीन जाँ के सिखावन के लिए
 वाच्यार व्यवहार कारण करते हैं । श्री 'हरिध्यास देवाय नमः'
 मन्त्र का भी निरन्तर जप करता है उसे पुनर्वाचन में विचारण करने
 वाले की प्रिया प्रियतम सत्य ही में प्राप्ति हो जाते हैं ।

१ - लीट कर हरिध्यास कर है । लीट कर बहुल दिशाने ।

लीट मका बहुल दिशाने लीट कर गोडी लीट माने ॥

लीट कर हरि चानर हरि में लीट कर परमेश्वर माने ।

पुष्टि रहे पुन में सब ही हरिध्यास बिना हरि ही परमेश्वर दिशाने ॥

२ - उपरसिक विचार कर श्री हरिध्यास बिना हरिध्यास नहीं - १३७

३ - त्रिगुण एवं हरिध्यास की, और त्रिगुण एक मान । १३८

तामिन राधा छोट ही, लीट नहीं परमान ॥ वही १३९

४ - दे मन का लीट कर में और उपाय न निह ।

लक्ष्मण नाम हरिध्यास की मन्त्री सदा लक्ष्मण ॥ वही १४०

५ - मित्य उपासन वन्द कर्, श्री हरिध्यास उपाय । गुरु नर मुनि का - १४१

६ - श्री हरिध्यास देवाय नम मन्त्र की कर् कर ।

कान्ता की माधवे, चारी प्रियतमी ॥ वही १४२

कल्पद्रुम की मन्मथलक्ष्य 'श्री हरिश्चात देवाय नमः' मन्त्र की समझा करने में काममें है। इसमें मुक्ति और सामान्य माक्ति नहीं है। यह भी एक मात्र साक्षात्सिद्धा विष्णु प्रेमाभक्ति है ही साँसपूर्णा रक्ता है।^१ यह गुरु मन्त्र की मुक्तियों का चार है। किता इसका जलमन्त्र छिद्र श्री हरि की माक्ति जिज्ञा निषाम्य जलिन है। श्री गुरु ही अजिम्बाकन्ध पान स्वल्प उदा जनावन एवं रक्ता हीटर नित्य विराजमान रहते हैं। मन्मथ-प्राप्ति है वे दक्षिण पर हैं।

श्री गुरु के लक्षण 'हरि' की पहिना मान करी में देव श्री वेति वेति कही है। उनके गुरे नाम का साक्षात्सम्मान करने में केवल शारदा की काममें हैं। इस प्रकार की रज-रहित देव की वे गुरु वत्स का निम्न-निम्न रूपों में वर्णन किया है। उन्होंने हरि और गुरु में किंचित्प्राप्त की कन्धर नहीं माना। इस वत्स और गुरु वत्स एक ही है। मन्मान की भी हीता निम्नागर्हों के छिद्र भी काम्य है, एक गुरु कृपा है ताकत के छिद्र सक्षम में ही मुक्त हो जाती है।^२

१ - हरिश्चात देवाय नमः का सम दुरदरु माँहि ।

पार्थ भक्ति न मुक्ति है परा प्रेम का भाँति ॥
हरिश्चात यशामृत ॥२

२ - हरिश्चात यशामृत - पृ० ३६। १२

३ - उदा जनावन एक एक वास मन्म नहिं नाम ।

महा कल्पदानेद का, गतो कवि हरिश्चात ॥

पृ० ४३। ११

४ - श्री हरिश्चात यशामृत पृ० १, ५२। ६२

५ - पृ० ५५८ ६६

हरि ऊर्ध्व कृष्ण का कर्ष रखा है । व्यास भक्ति का
विस्तार है । यह प्रकार हरिध्यास नाम वक्त्र बुद्धि का सार है^१ ।
हरिध्यास नाम कृष्ण केश-केश राधा का वाक्य है । हरि का कर्ष
कृष्ण और व्यास का राधा है । दोनों की मिठाकर युक्त करते हैं^२ ।
भी हरिध्यासके की महादित्य है - और स्परधिक के कृष्ण के नाम है-
कम श्रीमत् हरिध्यास यत्त चोदक रत्न सुनाम ।

महा दिव्य स निधि प्रगट, स्पर-रधिक क्षिप नाम ॥^३

कौ बडे दानी हैं और किन्हीं महाबाणी की रक्षा
की है -

महाबाणी युक्त दानी रक्षि नानी निधि कही ।
युक्त रूप कूप सब दिन भी हरिध्यास मकी चही ॥^४

भी हरिध्यास महापूज गुरु भक्ति और प्रेम का
वासर है -

रवि हरिध्यास महापूज वासर । भी गुरु भक्ति प्रेम की वासर ॥^५
स्पर-रधिक देव का कर्म है कि है नम । तु हरिध्यास
की मय को स्वामा स्वाम के प्रदायक हैं -

रे नम भी हरिध्यास भक्ति, वायक स्वामा स्वाम ।
वाक्य ठीक गुरु प्रेम निधि वादी क दम्पति नाम ॥^६

ये कहे हैं कि है नम तु का है प्रेम होकर हरिध्यास
का मय नम । नम तु निर्गुण का वाय कौला तम कुंठे सुत की राशि
प्राप्त होनी । -

१ - स्वर्ग कृष्णहरि पद वरध, व्यास भक्ति विस्तार ।

रूप रक्षि हरिध्यास की, नाम वक्त्र बुद्धि ॥

२ - स्वर्ग कृष्ण हरिपद वरध, व्यास राधिका कानि ।
हरिध्यास महापूज - पृ० २५।३२

स्परधिक हरिध्यास की, नाम वक्त्र हरिमान ॥

३ - हरिध्यास महापूज - पृ० २५।३
४ - हरिध्यास महापूज - पृ० २५।३
५ - हरिध्यास महापूज - पृ० २५
६ - हरिध्यास महापूज - पृ० २५।३
हरिध्यास महापूज पृ० २५।३९

१ मन का सौं प्राप्ति सब, नाबि, नाबि, नाबि हरिव्यास ।
 सबि सबि निर्गुण संग की सब पावों सब रास ॥^१

बी हरिव्यास के किता बेरा कोई नहीं है । उन्हीं की
 कृपा से प्यारी प्रियतम दोनों की प्राप्ति होती है -
 १ मन की हरिव्यास कि, बेरी नाबि न जीय ।
 तास कृपा से पाकर, प्यारी प्रियतम जीय ॥^२

बी हरिव्यास का पूर्ण नाम केना बाबिर । उसकी
 कदाई कोई नहीं कर सकता । हरिव्यास के नाम पर करोड़ों की न्योहापर
 किया जा सकता है -

बी हरिव्यास नाम के पुरी ।
 ताकी की कहि सके कदाई ।
 रूप रसिक हरिव्यास नाम पर -
 कीटिक बार बारै जाई ॥

प्रातःकाल हरिव्यास का कुल नाम लीये । जिसका नाम पढ़े
 की कल्प पाप कृ जते है ।^३ हरिव्यास का मन्त्र कर किन्हीं महाबाणी
 का प्रकाशन किया, जिसके बाधे नाम लेने से ही समस्त पाप नष्ट हो
 जाते हैं -

जिसके बाधे नाम पारुते, सकल पाप है नाश ।

बीपरण हरिव्यास नाबि, महाबाणी सु प्रकाश ॥^४

१ - बी हरिव्यास महापुत्र - स्मरचिन्मय पृ० ३१३

२ - बी हरिव्यास महापुत्र - " " " ३१३

३ - बी हरिव्यास महापुत्र - " " " पृ० ५३४

४ - प्रातः काल हरिव्यास नाम कुल लीये सकल अनंतकारी ।

जिसकी नाम पाठ पढ़े ही पाप कल्प पाप जरि पारी ॥
 हरिव्यास महापुत्र - स्मरचिन्मय पृ० ५४

५ - हरिव्यास महापुत्र - स्मरचिन्मय पृ० ६०

८ - शिष्य परम्परा

श्री हर्षाचार्य जी ने कोई शिष्य नहीं लिया और जाने उनकी कोई छात्रा भी नहीं बनी । श्री बुद्धदेवराज भट्टाचार्य पंजवतीजी ने श्री बुद्धदेवराज भट्टाचार्य की प्रशिक्षण में लिखा है -

" बुद्धा कल्पतरु, आदि मुनियों के शिष्यता श्री हर्षाचार्य जी ने वास्तविक वैदिक ऋषि का पाठ लिया था । वैदिक ऋषि तो वे मुक्त रहते हुए निरन्तर की शान्त स्थिति के अनुमान में ही वे रह रहते थे । उन्होंने कोई शिष्य भी नहीं लिया था, बल्कि ज्ञान का ज्ञान उनकी कोई छात्रा भी नहीं बनी । श्री किशोरी बाई जी ने भी कहा है -

जिन्होंने रहने एक ही जगह का नहीं किया ।

इन शब्दों में उन्हें परम विरक्त कहा जा सकता है ।^१

१ - बुद्धदेवराज भट्टाचार्य की प्रशिक्षण - श्री बुद्धदेवराज भट्टाचार्य

भट्टाचार्य पंजवतीजी प्रकाश ३

६ - विशिष्ट व्यक्तियों के रूप रसिकत्व का सम्बन्ध

स्वरसिकत्व श्री हरिश्चासदेव के कृपा-पात्र शिष्य थे ।
 जब श्री हरिश्चास देवाचार्य की जीव में स्वरसिकत्व की मयुरा पहुँची तो
 श्री हरिश्चास देवाचार्य अपनी लीला का संवरण कर परमवान बनार श्री
 थे । उनके शिष्य श्री परशुराम केाचार्य कुटीला मयुरा पर मिराकाम
 थे । जब स्वरसिकत्व ने श्री परशुराम देवाचार्य से पूछा कि श्री हरिश्चास
 केाचार्य कहाँ हैं तो उन्होंने उत्तर दिया कि अभी थोड़े दिन हुए श्री
 मयाराज परमवान बनार गये । इसी प्रतीत होता है कि श्री स्वरसिकत्व
 का श्री परशुराम देवाचार्य से सम्बन्ध था ।

१० - सांस्कृतिक एवं व्यावहारिक ज्ञान

छोटा बंशवि में कहीं कहीं के उत्कर्ष एवं सुन्दर भाव हैं और उनकी उद्भावनाएँ मनोहारिणी हैं। इसी प्रतीव होवा है कि वे उत्कृष्टीति का सांस्कृतिक ज्ञान रखते थे। अनुप्रास कंठहार की परम्परा तथा लोक कंठहारों का सुन्दर प्रयोग, लोक-राम-रामिनिधों का काव्य की रत्ना, मान्ना पर कथा कथिहार कावि है प्रतीव होवा है कि उन्हें कथा सांस्कृतिक ज्ञान था। और उनका व्यावहारिक ज्ञान भी सफा था। काव्य का युक्त एक उदाहरण देखिये -

लोकम केवली कदक कुरांमंद कुं
केवर कवीर केरि केवरि पुनः हैं।
नीलहिरी मलही भावही फेरी केरु में
कुली में पुंभाय काय हुन्ही के कवन में ॥१॥
का का मापुरी के फोरन में फूमि का फूमि,
पुमि पुमि धरत पुमका के का में।
रहे निहारों का नीलन की का नका
रासिक फोरी केरु का वन का में ॥^१

* छोटा बंशवि में प्रायः लोक पद नीलियाँ और भाव ऐसे हैं जो कल्प कथियों की रत्ना के फिली कुल हैं - के :-

एक लोक फुडामनी कापि काठ प्रवीन।
कामि प्यारी पुन के जाने रहे दीन ॥^२

१ - नित्य बिकार फाकली - निहारन के पुस्तक ७७-१४

२ - पुन मंथनी - अरविभूषण

प्रीति की रीति रंगीली है कम ।
क्यापि बलिष्ठ लोक सुखामय दीन कम ही माने ॥^१

द्वारा उदाहरण देखिये :-

प्यारी तु कर्मेयी नित्य पढ़ी ।
विनयी पनाचि मेचि नित्य छरि मोह रहत नित्य पढ़ी ।
विनयी छारि मेनमान तुम कमल कुहारति पढ़ी ।^२

हिय हिय कर्मेयी पढ़ी । नित्य नित्य मोहमान ।^३
कह नित्य मेचत पुन्य नहिं कंठ विठोला मान ॥

चुकीय उदाहरण देखिये -

छात छरकी छरकी प्यारी ।
मान पुन्यन की परत उतारी ए कबहूँ नहिं प्यारी ॥^४
तो पर बारी छरकी सुन राखि पुमान ।
तु मोल के छरकी है छरकी समान ॥^५

अन्य उदाहरण देखिये -

जोन लन कीनी कम के नीली ।
कवर दया ककल रहे निशिदिन के न परत प्योली ॥^६

१ - की नित्य प्योली - स्परसिकेय

२ - नित्यविशार पदावली - स्परसिकेय

३ - विनयी छरकी - विनयीछात । ४-नित्यविशारपदावली-स्परसिकेय

५ - विनयी छरकी - विनयीछात । ६- नित्यविशारपदावली -स्परसिकेय

देव - पर ४४

नाक बास केरि छयो नीस मुँसन के सं^१ ।

एक कथ उदाहरण देखिये -

संका हें नीके हें ए संका हें नीके हें -

सुरंगन हें नीके हें ए भन बाँत नीके हें^२ ॥

एह सिंगार संका निर संका संका भन ।

संका संका हू थिआ संका संका भन ॥

और स्वामी पर महाबाणी का अनुकरण भी
निष्ठता है । एवं रचित्रीय की उद्भावनायें की मनीषारिणी हैं और
सुख कल्पनायें की निरासी हैं -

बपर सुवा के छीम छाभ्यो कुराभ्यो वन

वसत समान्यो वर पाभ्यो वीन पन है ।

ऊरन वरन करि संभ्यो प्रेम संत वर

करत करत मीन मंत्र की वन हैं ॥८॥

भेरे बाँति मे निरुपेही यह बाँत है

बाँत हैं रति-स- पाकों वन है ॥९॥

एह बाँकारी कही थ्यारी सुन केरि में

नीकी बाँत छीम मनीष को पन हैं ॥१०॥

१ - विवारी छवई - विवारीछाव

२ - नित्यविचार पदावली - कपरचित्रीय - पद ५६

३ - विवारी छवई - विवारीछाव

४ - नित्यविचार पदावली - कपरचित्रीय - पद ५२

उनका काव्य उष्ण, स्पष्ट, उत्प्रेरणा, अनुभव जाति
 लोक जनता से मिला पड़ा है। इसी प्रतीति होता है कि उन्हें जनता
 शास्त्र का अच्छा ज्ञान था। उनकी कल्पनाओं की कड़ी है। राधा का
 सौन्दर्य वर्णन उन्होंने जो निम्न पद में किया है ऐसा कोई शास्त्रीय
 ज्ञान का ज्ञान ही करता है जो उन्हें सबसे ही उत्प्रेरणा के कवि की
 शैली में छा रहा है -

सौभाग्य प्रसादी की की की की, उज्ज्वली रूप रचा है।
 किन कलक मानों मरक, बड़ी बगलें लपि पाठ है ॥
 की मोह कल पंकज मन, कल उज्ज्वली लपि है कीर है।
 पुन नासिकापर विम्व फल, विविध परमान बायो कीर है ॥
 पुन पुन जीवित मन फल, पुन पुन जीवित बायो है।
 किन विम्व स्वांग दिव्य मन, जीवित रसो ललया है ॥
 कल कल पुन पुन विम्व मन - पुन स्वांग विम्व विम्व है।
 कल कल पर लपि देव कल, दिव्य पुन पुन है ॥^१

उनके लोक पद में हैं और राम-रामनामी पद हैं।
 कल कल पुन पुन पुन पुन पुन है। इसी प्रतीति होता है कि ये
 उत्प्रेरणा के वाक्य हैं। पुन पुन नासिका का निम्न उपाकरण
 पुन पुन है --

कल कल का गरज पीर पीर,
 विम्व लपि लपि लपि लपि पीर की।
 लपि लपि लपि लपि लपि लपि लपि,
 पुन पुन लपि लपि लपि लपि लपि की।

रवि बिचि बंला निराबि दीऊ छाल गौरी,
 बिय की रसाल गौरी युगल निशोर की ।
 कसुन कसुन रूप रसिक निहारि भन,
 पावत है भन भन जानंद न गौर की ॥^१

उनके काव्य में अनुप्रास की ली बटा बहारा रही है ।
काव्य साहित्य समझा पड़ता है । उच्च व्यंजना मयूर है वीर कैवला का
वामास पिडता है । नित्य विहार पदावली का निम्न उदाहरण दृष्टव्य
है :-

नीर बोटिका में बिजरा में बाह नीर में
 अरि की वीरि में बरिहि लिल्लें लैं ।
 नूर करन में बरि में बुड बोटिका में -
 मुरली में निशि लैं नूर सुखा - लैं ॥८॥
 पीतांबर में प्रवेश करि हरि नूर में,
 बलि की न्यून रूप रतिक की लैं ॥९॥
 बौह बौह बंति बुति कीनीं तुम स्वामि तामें
 रामे नू की नाम की रकार सब में लैं ॥१०॥

ये भौतिक प्रणाली ये और महावाणी के प्रसार करती ।
उनके महावाणी के प्रसार प्रसार का कला पर व्यापक प्रभाव था। विनका
कला पर व्यापक प्रभाव ही और विनका उपेक्षा की कला स्वीकार करती
ही निश्चय ही उनका व्यवहार हीकप्रति रहा होगा । विनके व्यावहारिक
ज्ञान की सामग्री ही रही कवि सुदीनान्त रूप का का प्रिय ही सुखा है ।
यह मैं हम इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि उनके उपेक्षा की का सामग्रीय रूप -
----- व्यावहारिक ज्ञान था ।

१ - पुष्पदन्त उपासक मणिमात - रूप रसिकस्यैव - पुष्प ३६ पद ६६

२ - नित्य विचार कमावती - कनरदिलीय पुस्तक ७५ - ८० पद ६१

११ - सम्मान एवं परित्र

जावीच ब्राह्मण भी कृष्ण की कसपुर राज्य के की
विक्रमीपाठ की के मन्दिर के निर्माता थे । उन्होंने एक बाग की जमीन
लेकर भी विक्रमीपाठ की का मन्दिर बनवाया था । उनके कोई पुत्र
नहीं था इसलिए सभी दक्षिण कुम्भिन की जो उस मन्दिर का देवा-
निकारी बनाया । की कृष्ण जिस की सवाई जावीपुर गये और राज्य
की और के मन्दिर में आकीमक जावीविका बनवाने की बात
उन्होंने सीधी की । परन्तु तब ही उनका देहावसान हो गया । कुम्भिन
के समस्त मन्दिर में ही पुकारी थे उनका नाम स्मरलिक की था ।
ये शासन निष्ठ शास्त्रिक ब्राह्मण थे । उनके सदाचार के कारण कुम्भिन
की और उनके पुत्र पीत्र सभी उनका मान सम्मान करते थे । कृपाकल्प-
सह जादि कुम्भी के रचयिता भी स्मरलिक की ने जावीवन भौष्टिक
कृपायें प्रस का पालन किया । उन्होंने साधारण व्यवहारों से प्रस
रकर निरन्तर भी स्वामास्थान का गुणमान किया^१ ।

१ - की कृष्णकृष्ण मणिपाठ मुक्ति पुण्ड ३

कृष्णकृष्ण देवान्वाचार्य पण्डीर्य ।

१२ - गीताविज्ञाप

जिन मन्थुर्वी ने श्री हपरसिन्धु की का कविता का समय अनुमानतः १७६० संवत् माना है । श्री हपरसिन्धु देवाचार्य श्री - हरिव्यास देवाचार्य के पुत्र के भात्र थे । श्री हपरसिन्धु ने कुन्दावन माधुरी "के कन्द में रचना काष्ठ संवत् १८८७ कलहाया है :-

पंचराक्षस सत्वाख्या, पाशोत्तम काशीव ।
यह प्रमथ पुरन मयी, कुला सुन दिन हीव ॥

जो हपरसिन्धु देव श्री ने हरिव्यास महापुरुष की रचना की श्री उस समय श्री परशुराम देवाचार्य विंशत्य पर विराजमान थे । उनका समय श्री पट्टे परवर्णा के वायार पर विं० सं० १८१५ से १८५० तक माना जाता है ।^३ इस प्रकार कुन्दावन माधुरी में उत्तिष्ठित श्री हपरसिन्धु की का समय सं० १८८७ युक्तिपुक्त प्रतीय होता है ।

१ - गीताविज्ञाप - श्री कुन्दावन माधुरी हपरसिन्धु पुष्प २४ - ८२

२ - श्री गीताविज्ञाप - श्री कन्द - प्रकाशक उरण पुष्प २ //

द्वितीय अध्याय

रूप रसिक देव जी का साहित्य

निम्न विचार प्रणाली में स्थाना स्थान के विचार सम्बन्धी प्रश्न का वर्णन है।

: आचार्य कृष्णलाल विद्यालोक :

आलोचनात्मक ग्रन्थों में जब सच कह देते हैं और उनके ग्रन्थों के सम्बन्ध में कोई सम्झौती नहीं मिलती उनके ग्रन्थों की न तो कोई आलोचना ही हुई न कोई शोध कार्य हुआ । केवल साम्प्रदाय में दीक्षित व्यक्ति ही सम्प्रदाय के ग्रन्थों में विशेष जाग्रत रहते हैं । छद्मवास्य देव की महावाणी निम्नार्क साम्प्रदाय का हिन्दी का सिद्धान्त ग्रन्थ है और यह सच कह देते हैं अपने गुरु की छद्मवास्य देव की विशेष आज्ञा, प्रार्थना की है और उनकी महावाणी का भी गुरु मान लिया है। यह सच कह देते हैं महावाणी के मन्त्र का प्रतिपादन किया तथा उत्तम प्रकार प्रसार किया । डॉ० प्रेमचन्द के व्यक्तित्व का उल्लेख, डॉ० प्रेमचन्द का प्रेमचन्द के निम्नार्क साम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य विषयों में विशेषज्ञता में उनके सम्बन्ध में कुछ विचार मिलते हैं। साम्प्रदायिक ग्रन्थों के कारण साम्प्रदाय के अनुयायियों में उत्तम विशेष प्रभाव है जो उनके ग्रन्थों की अत्यधिक मान्यता है।

1- श्री जीला विकास श्री ल तंर देवपादेवठ -2 गोपार -3

२ - गुण्य परिक्रम

१ - हरिव्यास यज्ञभूष

हरिव्यास यज्ञभूष स्वामी स्मरतिस्मैय द्वारा प्रणीत
 पञ्चात्मक गीत काव्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि हरिव्यासदेव
 की "हरिव्यास यज्ञभूष" प्रकट रक्ता है। सन्वत्सर में गुरु की
 उपासना करना एक परम्परा की बीर धारणा की कि बिना गुरु
 की कृपा के न ही ज्ञान प्राप्त हो सकता है और न कभी उपास्यके
 का वाग्निव्य की प्राप्त हो सकता है। सन्वत्सर में यही धारणा
 की। उन्होंने कभी गुरु की हरिव्यास देव किन्हीं निम्नार्थ सम्प्रदाय
 के महान् गुण्य "महावाणी" का प्रणयन किया उनके यज्ञ की भाषा
 इस गुण्य में गार्ह है। उनके गुरु की उनकी दत्त के बताने बाटे,
 कृष्ण गार्ह में वाग्निव्य करने बाटे और वस्तु मार्ग की बताने
 बाटे है। बिना गुरु की कृपा है कौन संसार धारण है पार नहीं हो
 सकता है, इस सम्पूर्ण गुण्य में कौन अन्य विषय न होकरके गुरु
 की महिमा का ही गान है। इस सम्पूर्ण गुण्य में उनके गुरु की
 हरिव्यास देव के यज्ञ तथा महिमा का गान है। इस गुण्य के प्रारम्भ
 में ही की स्मरतिस्मैय ने लिखा है कि "हरिव्यासदेव यज्ञ भूष धारण
 के बीर उपास की कर्णन उन्होंने हकी किया है। स्मरतिस्मैय लिखते
 हैं :-

“ की हरिव्यास हरिप्रसी रूप किन्हीं कृपा बनाहं ।
 की हरिव्यास देव यज्ञ भूष धारण लिखा काहं ॥
 काहें काव्य सन्वत्सर नामा विविध उपास उपदाहं ।
 युक्त रत्न काहं यह गार्ह स्म-रतिस्मैय का गार्ह ॥”

१ - की हरिव्यास यज्ञभूष - स्मरतिस्मैय - पृष्ठ १ - १

बी हरिध्यास ने साधारण भेषण करने पर ध्यास के व्यवहार के बहुत लोक प्रकार की वाणी और लोक प्रकार के गुरुओं का निर्माण किया है कि प्रसार समुद्र के कद से नहीं कमी कमी बीच भर छेदे हैं उही प्रकार लोक व्यक्ति कमी कमी रूपि के अनुसार उनके गुरुओं से माय एवं साक्षी प्राप्त कर छेदे हैं -

* बहुमानी सब गुरु छि, कमी बार न बार ।
रूप रसिक हरिध्यास के घर ही, को ध्याधार ॥
कमी कमी बीच भरि, छेद कीऊ उन वाय ।
रूप रसिक महा विन्दु को, कहा कहा पाटि जाय ॥

स्परसिद्धि का कमा है कि हरिनाम बिना ध्यास किया गुरु में जाता है तो वह उनके किसी काम का नहीं है -

* वायव्य हूं बिबिध गुरु में ध्यास बिना हरिनाम ।
रूप-रसिक छेदे कहे, को पेर नाहिं काम ॥

कमि स्थान पर लोक प्रकार के मछ हैं परन्तु हरिध्यास देव की मका की दीप्ति पूर और ही है :-

* मछ मछ सब की गिरी, कमी कमी छोर ।
स्परसिक हरिध्यास की, मका दीप्ति पूर और ॥

बीधुष्ण की छीछा किस दीप्ति की है उही धुष्ण-छीछा का वणिन बी हरिध्यास देव की सबके छि कहे हैं :-

* सब छीछा धुष्ण की, को बिबिध छायाक दीय ।
रूप-रसिक हरिध्यास व, देव सदा की दीय ॥

१ - हरिध्यास महापुत्र स्परसिद्धि पृ० १-२-४

२ - " " " " ५० २ - ७

३ - " " " " ५० २ - ८

४ - " " " " ५० २ - ९

की कुन्दावन सुत सब रस का सार है जिनको यह भिखवा
है उन पर अपार कृपा है -

“ की कुन्दावन बहुत सुत, है सब रस की सार ।
स्पर्शिक जिनकी भित्ति, दिन पर कृपा अपार ॥”

जिस प्रकार वे बाहुक प्रेम करता है और लोक प्रकार की
हीनता करता है उसी प्रकार हरिश्चासदेव ने लोक हीनताओं का वर्णन
किया है -

“ की हरिश्चास उदावही, त्यों त्यों ताड़न बाव ।
ताड़ उड़ीठ ताड़ की, करव रवा प्रविनाव ॥”

स्पर्शिकदेव का कथन है कि अनन्त वन है मन की
की गति वीथु है और मन से भाव की गति वीथु है । हरिश्चासदेव
ही उस भाव की वक्षति हैं -

“ सर्वे जागे मन पौ, मन से जागे भाव ।
स्पर्शिक हरिश्चास की, उन की है परभाव ॥”

बीज्यकि हरिश्चास की का नाम एक बार भी जप्ता है -
स्पर्शिकदेव उस पर वन, मन, मन ज्योहावर कर भीत है -

“ की लोक हरिश्चास की, नाम की हव्यार ।
वन, मन, मन का ऊपर, दीपि सर्व सुवार ॥”

१ - हरिश्चास यज्ञपुत्र - स्पर्शिकदेव	पृ० ३ - १५
२ - “ “ “ “ “	पृ० ३ - २०
३ - “ “ “ “ “	पृ० ३ - २५
४ - “ “ “ “ “	पृ० ४ - ३०

कोई बाहर व्याप्त है, कोई भीतर व्याप्त है परन्तु
हरिव्यास देव की अवस्थ स्थानों में व्याप्त हैं - इनके समान और कोई
नहीं है-

स्वरसिद्ध हरिव्यास तु, इनकी सम की और ।
कोउ बाहर कोउ भीतर, ये व्याप्त सब और ॥^१

जिही की बात कह, जिही की पन्हुत नाम डीक
है परन्तु हरिव्यास की देव की बात सुगुणस्मिण सम है -

काहु की बात पंच दश, काहु की बात बात ।
रूप रसिक हरिव्यास की, पीछी दिखवावात ॥^२

हरिव्याससु नाम हरि के ही रूप है जिस माया का का
में विस्तार है सब की बुझारि पेटों की फोटी है -

रूप रसिक हरिव्याससु नाम रूप हरि राय ।
माया का विस्तारणी, वाहु फोटीत माय ॥^३

इस माया है सबके प्राण जो हुए हैं इसलिये माया की
गुरु की हरिव्यास की काहु पका कर -

रूप रसिक सबकी ली, मा माया की प्राण ।
वाहें तु हरिव्यास पवि, माया गुरु ममवान ॥^४

१ -	बी	हरिव्यास	यज्ञाश्रुत	-	रूप	रसिक	पू०	४ -	३५
२ -	"	"	"	"	"	"	पू०	४ -	३६
३ -	"	"	"	"	"	"	पू०	४ -	३७
४ -	"	"	"	"	"	"	पू०	४ -	३८

रूप रक्षित की का कथन है कि सबकी अपनी अपनी कार्य
भूमि लगते हैं । वेरा कार्य यही है कि तु हरिध्यास के सुन्दर नाम का
पूजा कर -

रूप रक्षित सबकी छी, कभी प्यारे काम ।
तु हूँ कभी काम कर, नाथ हरिध्यास सुनाम ॥^१

कुन्दावन में राधाकृष्ण उपासना है । श्री हरिध्यास
कृपा के बिना कोई कार्य पूर्ण नहीं हो सकता -

निरुपमनिरुपमनामोपमनिरुपमनोपम

श्री राधाकृष्ण उपासना, श्री कुन्दावन नाम ।
श्री हरिध्यास कृपा बिना, पूरणा सीय न काम ॥^२

श्री हरिध्यासके श्री के लोक व्यवहार है । हरिध्यास
यज्ञाभूष में नित्य विचार का वर्णन हुआ है -

एक रूप हरिध्यासज, है लोक व्यवहार ।
श्री कुन्दावन पन्डु श्री, कबो नित्य विचार ॥^३

हरिध्यास यज्ञाभूष में रस-रंगित का वर्णन है श्री
विक्रमारी की ही वर्णित की जा सकती है -

विक्रमारी दिन भी कहुं, पावे यह रस रंगित ।
रूप रक्षित तुव नहीं लहे, उठटी है विक्रमारी ॥^४

१ - श्री हरिध्यास यज्ञाभूष - रूप रक्षितके पृ० ६ - १२

२ - " " " " " पृ० १० - १३

३ - " " " " " पृ० १० - १४

४ - " " " " " पृ० ११ - ११२

हरिबोध यत्तु वृत्त धारण की छवरी है । यह हरिबोध
का भी वही वाणी है -

हरि श्रीगुरु हरिबोधयै यत्तु वृत्त छवरी ।
वन्द्य हरिबोध का छवरी, वन्द्यकी की गवरी ॥

भी रूप हरिबोध यै का वन्द्य है कि हरिबोधयै
विना हरि की वन्द्य नहीं करी -

कोट को हरि वीर्य है, कोट को हरिबोध मांही ।
कोट को हरि वाक्य है, कोट को हरि है वन्द्य पांही ॥
कोट को कोट कोट कोट , है हरिबोध की छवरी व डारी ।
रूप हरिबोध विचार है हरिबोध विना हरि वन्द्य नहीं ॥

वन्द्य की वाक्य का वन्द्य है -

वही वही वन्द्य वन्द्य है । वही वही वाक्य है वन्द्य ॥
वही वन्द्यकी वन्द्य वन्द्य है । वन्द्यकी वन्द्य वन्द्य है ॥

१ - श्री हरिबोध यत्तु वृत्त	- रूप हरिबोध	१०	१२ -
२ - " " "	" "	१०	१३ - ५
३ - " " "	" "	१०	२३ - १५

२ - बुद्धदत्तस्य मणिमातु

बुद्धदत्तस्य मणिमातु नाम है ही प्रगट होया है कि यह
गुन्य लोक उत्तरी की मणिमातु की माता है । इस गुन्य में कान्य
होरी आदि वर्ग भर के उत्तम मणीमातु का मनीषर सरस वर्णन
किया है । उपर्युक्त सभी प्रविष्टों के वन्द में मणिमणना का उल्लेख
इस प्रकार है -

पद कान्य पर्वत व्यासि होरी सुन्दर । होर व्यासि वाराह एक
पद वेरस रम्य ॥

कठ होर पर व्यासि व्यासि कदाय वृद्धिमा पद । पीयूष जलनी कन्य
सम्पन्न नरसि के सर मय ॥

कठ विहार के व्यासि व्यासि पद रम्य के सुनि । वराह रिसु वेदीस
पर्वत विहारी के सुनि ॥

व्यासि पवित्रा मानि राखी के व्यासि ही । पर्वत कदाई ठाठ -
श्रीगुरु की उपासी ही ॥

कठ पूजा पद एक पांच पद कपिले बाधन । कठ ऊपर पद पांच कदाई
तेन सुहावन ॥

है बांकी पद व्यासि विवे कली के नीके । कठ पद रास विहाय
विवाद का व्यासि नीके ॥

कालिक ली पद एक सम्पन्न दीवीत्यस के सुनि । गिरि पूजा पद व्यासि
सम्पन्न गिरिपारन सु के सुनि ॥

व्यासि प्रवीचि विहारि एक सुखी विहाय रहि ।

राधागुण विहाय मल्ल कोंठ एक रम्य ॥

पद विहारि सुनि व्यासि हावनी विहाय केर ।

एक सु पद विद्वान्द हीन ली सत्रस ऊपर ॥

दीक्षा - बुद्धदत्तस्य मणिमातु यह परम सुमंगल रूप ।

रूप रचित सर परव ही होत स्वरूप मय ।

है सत्त्व पर नव सुख सुनि वीरानये जानि ।

बुद्धदत्तस्य मणिमातु की संस्था हवनी मानि ।

कान्त २५, कीरी ४१ कीर ४ फूँछोठ ४ कान्त कुँवा
४, क विहार ४ रमाया ४ बर्मा ३३, विहोरा कीर कीर २०,
पवित्रा ४, रसायन ४, छात्र की कान्त ३६, प्रियाय की कान्त
३०, क पुत्रा १, रंजनी कान्त १४, धाँकी २, विकीर्ण २,
हरद १०, काविक १, दीपोत्सव ७, नीलनी पुत्रा ११, प्रवीण ४,
सुखी विवाह २, सुख विवाह १, यक्ष मंड १, विजय दावडी ५,
सिद्धान्त १ इस प्रकार कुवाँ में २०० पद हैं ।

उपरांत में बीराम कान्त १०, बी कालान्विनी की कान्त
६, नरिहकान्ती ७, बाग्य कान्ती ५ इस प्रकार २० पदों का संकलन
है । इस प्रकार २२० पद ही होते हैं । बाग्य कान्ती के बाग्य वाँटे ७
पद भी परिशिष्ट में रख दिये हैं ।

बी पुण्ड उत्सव मणिमाठ के प्रथम दो दोहे देखिये -

प्रथम सुगिरि की गुरु चरन, हवन यक्ष कान्ताह ।
वासु कुमा-का कस्त की, मुकुत्तम - मणिमाठ ॥
करि जारम्भ कान्त से, ध्वंज दावडि वाँटे ।
रूप रहिक या नाम की, जो कव सत्य कान्ताह ॥

द्वितीय में रागिनी रूप सोन्यो निहारिये -

की नीति नु पंचम कान, नु उडकि कति के कबीर ही
सुख नादिका पर निम्न फल, विविध वरदानि वायी कीर ही ॥
सुन सु फोडनि ननि कडक पति सुख पटित जाय ही ।
पिय किंकु स्वान पिडीन मुवाँति हीन रसो उडनाय ही ॥
कलंड सुष्ट सुमोति ननि - सु दीव विविध विवाय ही ।
कुन कल पर क्षिप फल नु विजया सुष्ट सुखनाय ही ॥

१ - पुण्ड उत्सव मणिमाठ - रूप रहिकीय पुण्ड दोहा १ व २

मृगन सु मृगित मृग की बहुत माँव वर हवि देव री ।
 जटि तिल्ली मृग सु पायु, को को सुव देव री ॥
 मर हरि नाँक विवि की, वर वरि जाव न केन री ।
 बसि ह्य दसि निहारि मैदनि, बारि उर देन री ॥^१

पूठ कोठ में कुष्ठा राखिका का सुन्दर वर्णन -

देखिये :-

फूठे फूठे राखत हैं फूठन की कोठ पर,
 फूठे फूठे फूठ की माछा उब पछिरे ।
 फूठन के मृगन नान फूठे फूठन के,
 फूठे फूठे फूठान की फूटें हवि धरे ॥
 फूठी प्यारी को जाव फूठ के करी जाव,
 फूठे प्रिय री कि भीष को रंग गरी ।
 फूठे फूठे देखि ह्य - दसि प्रवीन वीर,
 फूठे में मीन पर मावरी के दरी ॥^२
 वगैरे ह्य विहारोत्सव का वर्णन देखिये -

वन वन वन गरव वीर वीर,
 विपुलानि वीर वीर कुव वन वीर की ।
 वीर वीर वीर वीर वीर की वीर वीर,
 वीर वीर वीर वीर वीर वीर की ॥

१ - मुख्य उत्सव वर्णनात् - उपरिक्त के पृष्ठ ० २६

२ - " " " " " " पृष्ठ ३३ पद ७४

लवि निव कांठा विरावि दोठ छाठ मोरी,
 लवि ही रसाठ मोरी युक्त लिखीर की ।
 कसुत कसुत रूप रसिक निहारि कै,
 पावत है धन देन जानंद न मोर की ॥

रूप-रसिक ने कंठ कंठ व्यापारियों को बर्हिभूत कर
 रखा है । ठीक छाव को त्यागकरने छाठ निहारी को देखि ही रखी
 है -

छोवन छाठ की मकारी ।
 छोक छाव कुं जानि सने लवि निवसत छाठ निहारी ॥
 उन बाजार छाट बोम बोमान, होवा करव न छाती ।
 मरव लखी-निव कसुत मंदारनि देव न एक छाती ॥
 नका नकुत वायव है ली है नकि नकि नकि नकि ।
 रूपरसिक रूप छीन छपेटे, कंठ कंठ व्यापारी ॥

भुक्तत्सव भणिमाठ में ज्यंत नाथ सुकठा ५ की पंचमी
 है छाकर च्यंका हावती । नाथ छीन सुकठा १२, छक के श्रीमन्मान
 के उत्सव के पद माना रामरामनिवाँ भणित है । इस भाष्य में लिखा
 है -

है ससुत परनव सुकठा पुनि मोरानमें जानि ।

भुक्तत्सव भणिमाठ की, संख्या लनी जानि ॥

जसमें की ससुत छकर की ली मोरानमें छन है ।

भुक्तत्सव भणिमाठ के उत्तरार्द्ध में श्रीरामकृतत्सव का वर्णन
 है । अथ प्रतीय होवा है कि उनका पुष्टिकीर्ण व्यापक था । भुक्त के
 साथ राम का भी गुण मान लिया है । रास रसिक लों के कल कीकन

१ - भुक्त उत्सव भणिमाठ - रूपरसिकीय पृ० ३६ पद ६६

२ - " " " " " पृ० ३३ पद ११६

हैं। उन्हें वे बेचि बेचि कस्ते हुए जगमगाते हैं। वहीं राम-राजा
दशरथ के घर जन्म लेते हैं :-

बेचि बेचि, भेद बाकी जगमगाते रहे,
लेवहु किन्ही हैं बाकी भेद बाँधे लेनि मैं ।
धिये हुए समाधि के अराधि केन छावि रहि,
बाँध ही जगधि किन्ही छावि करेनिधि ।
रहित जान किन्ही बीरनि जगमगाते,
कुल सुलभ निधि जान कहां भेनिधि ।
जग है बाँध कर माछा छे छे रमावाछा,
छोड़ छाछा नृप नृ विचारि नृप देनिधि ॥^१

छोछा विरोधि

प्राचीन काल से ही साहित्य में एक ऐसी परम्परा थी जो
बाकी के विपरीत रही, यहाँ बर्ण विपरीतों की संस्था के अनुसार
रचनाओं का नामकरण किया जाता रहा है - जैसे वायव्यविरोधि,
अनुरक्त काल, विश्व बीरविरोधि, अवाहीछ छोछा बाँध । इस परम्परा में
छोछा विरोधि भी बाकी है। इसमें बर्ण विपरीतों की संस्था की है।
वे मंजरी, विद्याधर, माधुरी और कुछ बार मागी में विभावित है।

जो कपराधिक देव की है "छोछा विरोधि" के प्रारम्भ में ही
पोपाद्यों में सम्पूर्ण छोछाओं की अनुपस्थिति का उल्लेख है कर दिया
है :-

पाँच मंजरी पाँच विद्याधर ।
माधुरी पाँच पाँच सुल माछ ॥
या प्रकाश विरोधि सुलमाई ।
निम्न निम्न पुनि कहां सुमाई ॥

१ - सुलमाई अनुपस्थिति - कपराधिक देव ५० १५५ पद ७

२ - छोछा विरोधि - कपराधिक देव २१२

३ - निम्न निम्न पुनि कहां सुमाई ॥

ये जाने लिखते हैं -

१- कल लिखता हूँ मंगरि जानी ।
 २- रसिक रंग बरत प्रेम कहानी ॥
 ३- मंगरि में पाँचों कुन मुनिसे ।
 ४- पंच विद्यास तथा पुनि पुनिसे ॥
 ५- नव नामना नित्य रवि कलिये ।
 ६- कूट विद्यास पांच भी कलिये ॥
 ७- नव मापुरी कलस वनकान्त ।
 ८- नामावलि मापुरी सुकान्त ॥
 ९- पुन्यावन विद्यान्त पञ्च हरि ।
 १०- ए मापुरी पांच विद्या में हरि ॥
 ११- पुनि कुल पांच पुनपु नव नामा ।
 १२- वार वनेस स्वरूप सुकाना ॥
 १३- लोरी कुल पंचम परिमानी ।
 १४- लीला विद्यावि हवि विधि जानी ॥

श्री लीला विद्यावि की विषय सूची इस प्रकार है :-

१- कल लिखता मंगरी , २- कल मंगरी , ३- रसिक मंगरी,
 ४- रंग मंगरी , ५- प्रेम मंगरी, ६- नव विद्यास, ७- नामना
 विद्यास, ८- नित्य विद्यास , ९- रवि विद्यास, १०- कूट विद्यास,
 ११- नव मापुरी, १२- मापुरी मापुरी, १३- पुन्यावन मापुरी -
 १४- विद्यान्त मापुरी, १५- हरि पञ्च मापुरी, १६- वार - कुल,
 १७- वनेस कुल , १८- स्वरूप कुल , १९- सुकान कुल , २०- लोरी कुल ।

१- लीला विद्यावि - ३५-रसिक पैग पृ० २ । ३, ४, ५

हीठा विंशति की १६ हीठाईयें पत्र में हैं और एक
 सिद्धान्त माधुरी ग्रन्थ में । हीठा विंशति की सभी हीठाओं में हीरांक
 के अनुसार विषय का प्रतिपादन हुआ है । हन्दी के प्रयोग का जहाँ तक
 सम्बन्ध है प्रायः वही का प्रयोग हुआ है । अन्य हन्दी का प्रयोग
 स्वल्प है । सिद्धान्त माधुरी में नित्य विहार का ऐदम्बिक विवेक
 हुआ है । विवेक में हृद का कल्पना बाधा उत्पन्न करता, इसलिए इस
 प्रकरण में कल्पना का प्रयोग है । इस पत्र की प्रकाशना अत्यन्त प्रौढ
 तथा प्रांक्त है, सम्पूर्ण ग्रन्थ की भाषा पुष्ट और प्रांक्त है ।

हीठा विंशति में प्रायः शीत पद पौन्य्यां और माध
 रीय में भी अन्य कवियों की रचना है निम्न कुछ प्रतीत होते हैं - भी -

सकल लोक सुखानी, अपि तात प्रीति ।
 सदापि प्यारी प्रेम है, जाने है कि दीन ॥^१

प्रति की रीति रंगीनी है जाने ।
 सदापि कलित लोक सुखानी दीन कपुनी नामें ॥^२

हीठा विंशति में कहीं कहीं को उत्कर्ष पाये हैं । हीठा
 विंशति में कहीं कहीं मनीषारिणी - सद्भावनाये हैं - कुछ कल्पनायें भी
 निरासी हैं -

नमुर नमुर सुखे कानि मैं कानि कानि रंग पीवि ।
 नद कान विपु मैं नमुर सोपानिनि के पीवि ॥^३

१ - हीठा विंशति - स्वरचित है - भी प्रेम मंथरी पृ० ६ - २

२ - भी रित्त पीरासी

३ - भी रचित मंथरी - स्वरचित है पृ० ७ - ६

नित्य विहार पदावली

नित्य विहार पदावली बहुत सुन्दर रक्ता है। इसमें १२० पद हैं जिनमें से दो प्रकृतियाँ मिली हैं उन दोनों में केवल ७२ पद हैं। आरंभिक दोहे से पदावली के १२० पदों की पुष्टि होती है। आरम्भ में लिखा है -

एक सत्सीय पदावली, वाली संशुद्ध सार ।

लिखन करत ही यह भक्त, लिख पद नित्य विहार ॥

यह प्रोट रक्ता है। इसकी भाषा कड़ी परिभाषित है और इसमें भाव भाष्यार्थ मिलता है। इसमें नित्य विहार का वर्णन है। इसमें अन्य विन्यास सुन्दर है। साहित्यिक कलात्मकता इसमें उपलब्ध होती है। अनेक राम रागिनियों में यह काव्य लिखा गया है। राम भैरव, रामदेव नंवार, राम रागनिरि, राम जल्लि, राम निनाथ, राम पिठावठ, रामकल्याणरी, राम पनासरि, राम धारंग, राम नाट, राम कल्याण, राम जगरी, राम कडानी, राम केसारी, राम कंकरीटी, जादि केर अनेक राम इसमें जाये हैं। इससे प्रतीत होता है कि यह राम रागिनी का भैरव काव्य है।

काव्य गुण की दृष्टि से यह सर्वोत्कृष्ट काव्य गुण्य है यद्यपि स्लेयर में यह छोटा है। इसमें कान्तरों की भरमार है। सदावली कड़ी कठि जल्लि है, जो स्लेयर की कड़ा सुन्दर बताती है। अन्य व्यंजना वैल्लि ही बताती है।

एक रसिक भक्त का कल्प है कि राधाकृष्ण समकला ही सुकल-के सुधान है। राधाकृष्ण ज्ञाना ही सुजान है -

राधाकृष्ण राधाकृष्ण समकला ही सोई सुजान ।

यादें पर और नू समकला ही सोई सुजान ॥ टेक ॥

राधाकृष्ण राधाकृष्ण ज्ञाना ही सोई सुजान ।

एक रसिक हीर और जादर नहीं सुजान ॥

स्वामी और स्वाम दोनों रंग में भीने हुए हैं। उन कुंठ-
किशोर की बगि के ऊपर रूप रसिक देव न्योहावर ही जाते हैं -

स्वामी स्वामी बोल रंग भीने ।

ठाठे कुंठ कदम की हथिया गर गर बहियां दीर्घ ॥ टंक ॥

बह बंती बह मूक मूक कौन्कि बाठ तांन पिठि गवि ।

मृकाका फल्यो फल फलियो धारंग राग सुबधि ॥

वरा पंही मूक नीर बेठि गिर बालि पयि सुन बाही ।

जुल किशोर और बगि ऊपर रूप रसिक बलि जाही ॥^१

हमें कूटी कल्पनाये हैं। राधिका के केसरि में भी
मोती लगा है बगि की देखा प्रवीत होवा है कि - वह मोती नहीं है अपितु
मन मोहन का मन है :-

बगर सुधा के लीम छाग्यो अनुराग्यो तप

तपत समाग्यो उग्र भाग्यो अपी नमन है ।

बरण भरन करि बंध्यो पुन तेरा वर

फरव करत मीन मंत्र को जमन है ॥ टंक ॥

भर बाग्यो में निहरीही यह बाग्य है

ठाक है रति-रस-काशी जमन है ॥

रूप ठाकरी वही प्यारी तुम केसरि में

मोती नहीं होय मन मोहन को मन है ॥^२

मेरी की किम्बाणावा का बगिन कही हूँ मैं लिखी हैं -
कि ये दो कृत के दोष हैं -

१ - नित्य विहार पदावली - रूप रसिक देव पृ० ३३ ३३

२ - " " " " " पृ० ३६ ३३ ५२

अंका तें नीके हैं ए अंका तें नीके हैं -

दुरंगमों नीके हैं ए मेन याति नीके हैं ।

एन सुत ही के हैं ए भन सब ही के हैं

ए नीर बिज ही के हैं करन करि ही के हैं ॥टेका॥

मीन सर ही के उमे ३३ रक्ती के रूप

रसिक रही के प्रांन बीबनि ए बी के हैं ।

टोनी ए कती के हैं निमीना मीली के हैं

विर्जना रति की के हैं नि बीना दे कती के हैं ।

हे स्वाम कि बिज की तुमने बीबीकार किया हे उसमें
राधे नू के नाम का रकार कहा हे -

गोर बीडिका में बिमर में बार बीबर में

भारि की लीरि में लीहं लिहं ली ।

भूर करन में करी में बुडु बीटिका में

मुली में निठि री मुर हुंथा -रहे ॥टेका॥

बीबीबर में प्रेम करि रार नुर में

बिज ही कृप रूप रसिक की बी ॥१॥

बीर बीर बीर बिज कीनी तुम स्वाम वाम

राधे नू के नाम की रकार सब में बी ॥२॥

नित्यबिहार पदावली में राधाकृष्ण का नित्य बिहार ही स्वरसिद्धि के
मन में कहा हे -

१ - नित्यबिहार पदावली - रूप रसिकीय पृ० ७७-७८ पद ५६

२ - " " " " " " पृ० ७९-८० पद ६१

गुन्नी का निम्नार्थ साहित्य में स्थान

स्पर्शविहीन के गुन्नी का निम्नार्थ साहित्य में
का महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट स्थान है। हिन्दी साहित्य में माँ
का निर्गुण सम्प्रदाय में गुरु की महत्ता बार्हर्ह है। क्या क्या
है कि :-

कलिकारी का गुरु की जिन सत्गुरु किमी निहाल ।

गुरु की का प्रभु है जग की कानि बाजा और
जो निहाल दास है । स्पर्शविहीन को गुरु महाबाणी के रक्षिता
की हाँ रक्षित है । गुरु की उपासना हमने निर्गुण सम्प्रदाय
के माँ शिष्यों की पाँच की की है । हमने अपने गुरु की महत्ता
एवं बलवान है " हाँ रक्षित रक्षित " गुन्नी की रक्षा की है । उनके
गुरु हरिदास की न की है रक्षित है । माँ की के माता-पिता
हैं । सब के हाँ है । जनों की रक्षा करने वाले हैं । वे भ्रमा-
न्य के माँ की गुरु करने वाले हैं । वे भान बहार हैं और हरिदास
है :-

का हरिदास जीव का दास । सब दास का बलवान माँ ॥१॥
का की हरिदास धिक्कुर मारी । दिव्य कीकी शिष्या महारी ॥२॥
की गुन्नीका सब गिन जाती । का हरिदास बलवान दास ॥३॥
का की हरिदास जीव की दास । महाबाणी की कुल की गुन्नी ॥४॥
का का का सब गुरु हरिदास । बाकारन की मट के दास ॥५॥
का हरिदास बलवान की । सब गुन्नी के रक्षितान की ॥ ६ ॥
की हरिदास का सब दास । भ्रमास्य का के का माँका ॥७॥

एतं एता जगण बाधु ज । श्री हरिश्चात प्रेम जानन्यजन ॥८
 का श्री हरिश्चात रतिर रावेत्तर । परम उदार सकल सुख केसर ॥९
 का हरिश्चात सुखन श्री । हरिश्चात में परमान श्री ॥१०
 का हरिश्चात परिश्रमा रूप
 एता जीय एत परम ज्ञान ।
 का हरिश्चात सुख एत मोहन,
 स्वरतिर रतिरन मन मोहन ॥

श्री लीला विंशति की चिन्ता नाचरी में स्वरतिर
 देव लिखी है " हेतु नु विंशति संग्रहनाम की गुरु हैं, विंशती
 नरनाम है, उनके परमानम हैं सकल श्री अरु श्रीत जगन्नाथ
 की प्राप्ति वाहे श्री श्री गुरु की आज्ञा है, वेदगुरु हैं कि
 विंशती गुरु नमनाम की प्राप्ति नाचरी । मंत्र संस्कार के ताता हैं
 की गुरु लिख नमनाम प्रत्युत्तर करि श्री विंशती नाचरी ।

हरिश्चात सुखगुरु के गुरु हैं श्री राधा मोहन किन्हीं
 हैं र हरिश्चात सुखगुरु हैं श्री राधा मोहन के परमाँ की हरण
 लिखी है :-

श्री श्री हरिश्चात सुखगुरु । मंत्र मंत्र राधा मोहन ॥१
 श्री श्री हरिश्चात सुखगुरु । रतिर मंत्र श्रीरतिर उरनाम ॥२
 श्री श्री हरिश्चात सुखगुरु । परमाना दानर मन विज्ञात ॥३
 श्री श्री हरिश्चात सुखगुरु । पराना हरण श्री अरव निजादा ॥४

-
- १ - हरिश्चात सुखगुरु - स्वरतिरतिर पुस्तक पृष्ठ १ से १२
 २ - लीला विंशति चिन्ता नाचरी स्वरतिरतिर पुस्तक पृष्ठ ४२
 ३ - हरिश्चात सुखगुरु स्वरतिरतिर पुस्तक पृष्ठ ६६ - १ से ५

गणेश की हरिव्यास उच्चार । अट भु परमेश्वर कवचार ।५

हरिव्यास के चरणों का भक्त कर किन्हीं पदा-
वाणी का प्रभाव किया है । किसी जाये नाम उन है ही सब
पाप नष्ट हो जाते हैं -

किसी जाये नाम गायत्री, सब पाप है नाश ।
श्री परमा हरिव्यास गवि, महावाणी भू प्रताप ॥

इन हरिव्यास हरिव्यास को स्मरण करने की
विधा है :-

सब काम अभिराम गवि गवि उच्चार हारारि ।
उप हरिक रस के कवि, हरिव्यास हरिव्यास ॥

गुरु की कृपा जितना बूझा निमित्तविशाल नहीं
मिलता । वे ही प्रभाव पर्वों के हितोत्तर हैं, उन्हीं की शरण
प्राप्त करने चाहिए -

जिसकी कृपा जितना नहीं पड़े, दीप्त बूझाविपिन पिशाच ।
नरक की हितोत्तर उचिता, उद्धार सबों के सबी निदाह ॥

हरिव्यासमेव है ही भक्ति प्राप्ति लोकी है । उनके
पदों जितना स्मरण के पुच्छ नहीं मिले-न मिली ।

१ -	हरिव्यास महाकवि	उप हरिव्यास	पृ० ६०
२ -	"	"	पृ० ६०-७
३ -	"	"	पृ० ७०-१

गर्जनी हरिश्चन्द्र परम पुरुष की ।

जब जगिनाही पितृवस राति दम्पति सैन पुरन्धर की ॥

पूरा प्रसवि पैरि तिनकी नी दीनी नाति विहंगुर की ।

की हरिश्चन्द्र मका निर्गुण किन निरौ न कम्य पारण कर की ॥

अपराधिनीय हरिश्चन्द्र की की नमन करने की कहे

हैं तिनके कारण संसार के महादुखार मय भी पुर हो जाते हैं -

नयी नयी हरिश्चन्द्र पुनीत । तिनके अंतनाम सुनिरहे

मिष्ट मद्य दुखार मय भीत ।

चरण छरण तिनकी किन निरु किन निरौ न मुक्त

कमोहे भीत ॥

की हरिश्चन्द्राक्षेय तीन बापों के लगे जाते हैं ।

हरिश्चन्द्र के अतिरिक्त सभी कुल देने जाते हैं -

गर्जनी हरिश्चन्द्राक्षेय चरण कर जाता ।

दीन दम्प मय पिन्नु कारकर तीन बाप हरि जय विधाता ।

या संसार अकार काल गति कुल जानार कारभित्तु नाता ॥

गौ का सावित्र पुत्र हरिश्चन्द्राक्षेय किन हरिश्चन्द्राक्षेय मय कुल जाता ॥

की हरिश्चन्द्राक्षेय के चरणों के संसार का पारन कर जाते हैं ।

संसार का पारन होकर हाथ सत्यन कृष्ण करना चाहिये -

गर्जनी की हरिश्चन्द्राक्षेय के चरण करन मय पाथ ।

राक्षी हाथ हों ही गर्जनी का ही हाथ ॥

१ - हरिश्चन्द्राक्षेय महाशय अपराधिनीय पुत्र ७२

२ - " " " " ७३-१

३ - " " " " ७४-१

४ - " " " " ७५

हरिव्यास का जोया नाम समस्त पापों का नाश
करता है । बार वर्ष पूर्ण करने पर जोर पिठास प्राप्त होता है :-

जई नाम हरिव्यास को कर सकल जय नाश ।

बार वर्ष पूरी की पापे कुल मिटास ॥

जोया, जैन, 'म', दिव्य सम्भारी शिष्य आदि
का वेष किया
सर्व हरिव्यास के मन्त्र के व्यर्थ है । हरिव्यास के वर्णों की शरण
के किया जोया, जैन, 'म' दिव्य, सम्भारी शिष्य आदि सब बाद
कलम जानते ही भी व्यर्थ है -

जोया जैन वे न दिव्य सम्भारी पुनि श्रेष्ठ ।

किया मन्त्र हरिव्यास के हनि के कूटो देण ॥

जोया जैन 'म' दिव्य, सम्भारी शिष्य आदि ।

किया शरण हरिव्यास पद, जद दलन सब पादि ॥

स्परसिद्धेव हरिव्यास को मन्त्रों की बात करी है ।
उनके किया मन्त्रों की वृत्ता नहीं कुरुवी । उनका जोया नाम -
उच्चारण करने से ही समस्त पापों का नाश हो जाता है । स्परसिद्ध
देव सिद्धी है :-

भो म नमो ते श्री हरिव्यास ।

होय नमो विन विन हनि वैरी दूरि नमो की प्राप्त ॥

विन हरिव्यास लोक सब पांही सब ही नाश मिटास ।

सब सुख राख दास की मट पद दासक शिष्य पिठास ॥

जई नाम जिजगी उपरवही होय सकल जय नाश ।

कुल प्रकृति श्रेष्ठ निश्चासर चरण सकल भव नाश ॥

१ - हरिव्यास वक्तापूत - स्व रचितपुष्क ६०-२५

२ - " " " " ६२-६-६

३ - " " " " ६०-२

इस प्रकार गुरु की मति का गुणवान करने सम्-
रक्षित ने निर्गुण सम्प्रदाय की परिपाटी का परिपालन की नहीं
गिया, बल्कि उसे और सुदृढ़ करने की चेष्टा की है।

शरिष्याउपेय की निम्नार्थ सम्प्रदाय के विद्वान् वाचार्थ
कहें उन्होंने महाशक्ति में निम्नार्थ सम्प्रदाय के विद्वान् की प्रचार
प्रचार करके निम्नार्थ सम्प्रदाय को और सुदृढ़ कर भारवर्ण में लायी
प्रतिष्ठा की है। जो किसी भी जीव ने सम्-रक्षित की वाचात का
हम माना है जो निम्न निर्गुण है एक राधा की पुत्र नहीं हो सकती।
निम्नार्थ सम्प्रदाय में उत्तम मनीषियों का बड़ा महत्व है। बुद्धिमान
मणिमात में कल्प लीलावादि यहाँ पर के उत्तम मनीषियों का
मनीषा बल वर्णन है। ब्रह्म केवलित उत्तमों का हमें किशोर वर्णन
है इसलिए निम्नार्थ सम्प्रदाय सम्प्रदाय साहित्य में उनकी कृती विरा-
जता है और इस ग्रन्थ का विशेष महत्व है। निम्नार्थ सम्प्रदाय
सम्प्रदाय साहित्य में इसलिए इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

इस जीवों के समान जीव नहीं है। कल्पों की वी तब
है परम्पु भन एक है। देखिये :-

करो किन लीटि कल की जीव ।
या जीवों के पदों की जीव, है न व जीवों न जीव ॥
हम रंग रूपका प्राण का, कल्प मात्र तब जीव ।
प्राण है उनकी जीव मति यह, कल्पक का जीव ॥^१

सुखी के निहाकर राम साकार रूप धारण कर छै
है । उपरिखीय के पुष्पा किन्हें भेद, भवि भवि और जगम कही हैं
यह छाछा गुप के घर में पिताहं छी है -

भवि भवि भेद काही जगम उपरि कहे,
लेखं भिं है काही भेद नाहिं छेपिये ।
सिख हू सनापि के बरापि के न छापि सके,
बाहि ही ज्ञापि सिख सापि कहीछिये ॥
रखि कस पिय बीबनिबल यह,
कुल सुख निजाप कां पेचिये ।
काव है बाहि कर भाछा छे छे रमावाछा,
सीहं छाछा गुप प गुप देखिये ॥

“ छीछा विंछावि ” स्तोपासना महमुक सज्जनों के छिर
कही उपसीकी है । स्तोत्री, पत्नी जगमा बर्ष विष्णुकी की संत्वा
के अनुसार रमायी का नामकरण किया जाता था । इसमें बर्ष
विष्णुकी की संत्वा बीबनि बरापि जगमा नामकरण “ छीछा विंछावि ”
हुवा । ये बंकी, विंछावि मापुरी और छुल पार नागी में विभा-
जित है :-

पांच बंकी पांच विंछावि ।
मापुरी पांच पांच छल पाय ॥

या पुनर विंशति सुवार्ह ,
निम्न निम्न पुनः कुरु सुवार्ह ॥^१

इसके नव विंशति में भी हरिव्यास के चरणों
में पित नवाकर वंशति के नव विंशति वाक्य की बात नहीं है --

भी हरिव्यास चरन विंशति वाक्य ।

भी हरिव्यास चरन विंशति वाक्य ॥

भी हरिव्यास चरन विंशति वाक्य ।

नव विंशति वंशति की वाक्य ॥^२

भी राधा नित्य विंशति, भक्त निवाहिनी और
वीरानि प्राण हैं ---

भी राधा नित्य विंशति विंशति विंशति हीन ।

नागरि भक्त निवाहिनी, भक्त प्रसाधिन भीन ॥

सुवार्ह वीरानि प्राण वन, सुवार्ह वन सुवार्ह ।

कभी विंशति विंशति, भक्त विंशति वीरानि ॥

नव रूप हरिव्यास विंशति के चरणों की हरण
वाक्य की बात करते हैं, और जगता करते हैं कि उन पर अनुप
करने की कृपा करें -

१ - भी वीरानि विंशति हरिव्यास विंशति २१२

२ - " " " " २११

३ - " " " " २१०

वही प्रिया नो पर डरी, करो अनुग्रह राव ।
निजिबिन रहे सुख पवन की, करन परी नो देख ॥

यही कामना है कि वह मन खीर चित्त में ही नई रहे
धीर उन्ही हक्या करी रहे ---

किन्ना चाहें किन्ना हो निम्नै, किन्ना चाहें किन्ना नीरि ।
वन चाहें वन हक्या, मन चाहें मन मांदि ॥
पल्लव चाहें पल्लव हो निम्नै, किन्ना चाहें किन्ना मांदि ।
यही छाछा रहे करी, एक भूत खीर जांदि ॥

नित्य विचार प्रवासी साहित्यिक दृष्टि है कल्पनीय
की रचना है । यह राम रामनिर्वाही है सुख है । स्वरचित्तव्यय यही
चाहती है कि मन हन्नीं है कला रहे, मन हन्नीं है रंग में रंगा रहे ।
धीनीं का में समायि रहें ---

छानी की मन हन्निं छा छाणी ।
पाणी की मन हन्निं पान पाणी ॥ टेण ॥
राणी की मन हन्निं रंग राणी ।
रुन रचित्त युन का रंग पाणी ॥

१ - की कीछा विचरि - स्वरचित्तव्यय पृष्ठ ५५

२ - " " " " " ५६-५७-५८

३ - " " " " " ५९-६०

दीनीं कुल के वस्तु हैं, गुणों के वस्तु हैं । दीनीं में
प्रेम की तर्पे उदोक्त हो रही हैं । लोक मल का उनके कुल का पान
करते हैं -----

सकल दीन कुल के सिंधु धरीर ।
स्वांगी स्वांग स्वयं सकल सकल नगर मुन मीर ॥टेका॥
कन कन उल्लस सरंग सचि जगन मेर नम मीर ।
स्वरसिंह का कनका हैं निधि सुरत सुभा की धीर ॥

नित्यविकार प्रभावही में राजा कुष्मा के नित्य
नित्य का वर्णन है । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि स्वरसिंह
के काव्य का निष्कारण सम्प्रदाय के काव्य में ही नहीं अपितु कुष्मा
मार्ति काव्य में एक महत्वपूर्ण स्थान है । उनके काव्य के कुष्मा मार्ति
काव्य की भीमति हुई है ।

१ - नित्य विकार प्रभावही - स्वरसिंह के कुष्मा ६१ पद १२

तृतीय अध्याय

रूप रसिक देव के साहित्य की पृष्ठ भूमि एवं परिस्थितियाँ

भारतवर्ष के साहित्य की मुख्य भूमि एवं परिस्थितियाँ

मॉड आन्दोलन :-

भारतवर्ष के इतिहास में मध्ययुग के नाम से जो कुछ अभिलिखित किया गया है वह एक प्रकार से पार्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विच्छेद का काल कहा जा सकता है। मध्ययुग के ज्ञान के पश्चात् भारतवर्ष का राजनीतिक साहित्य कुछ शुष्क हो गया था। भारतवर्षी साहित्यीक उस छोटे बहुत परिवर्तन के साथ साक्षात्करण प्राप्त कर पष्ट हो रहा। मुसलमानों के आगमन के पश्चात् सांस्कृतिक ज्ञान का पुन प्रारम्भ हुआ और साहित्यीक है ही। यही जाड़ी हुई सांस्कृतिक, पार्थिक और सामाजिक परम्पराओं का संघर्ष एक आन्दोलन के रूप में उठ उठा हुआ। भारत के इतिहास में साक्षात्करण उत्तर की ओरता अधिक ज्ञान्य था इसलिए इस आन्दोलन का बीमजोड इतिहास से हुआ और धीरे धीरे वह फैल-झापी हो गया। विशिष्ट परिस्थितियों के कारण जर्म के और सांस्कृतिक के मानदण्ड बने। उत्तर का बीमजोड विभूतिपरक होने के कारण सामाजिक प्रगति के लिए ज़ुंमानी या सिद्ध हो रहा था। बीरानामनुशासक का विशिष्टांश पूर्ण रूप से मान्य की। कैलाश का उपादान न कर सका। इस प्रकार देवनाग जादि और कौश्यादी की भी उठा थी। केवल दल पर न बाद लक्ष्मी हुई मानकता की पुष्ट करने में व्यर्थ है। बाद में विभूति की परमावस्था की पूर्ण पुन था। नापी में उस विभूति में पुनार का प्रयास किया पर वह भी सामाजिकता के उत्तर पर न पहुँच सका। उद् परम्पराओं को उत्तर करने बाडे कीन पौराणिक केन वन निरर्थक हो चुके थे। निरीह और निराश्रित कला के पुनरावृत्ति के साधारण उनका और कोई उपयोग न रह गया था। मुसलमानों —

के साथ जाने वाले बुद्धि सन्धी में प्रेम की आधार बनाकर -
 व्यवस्था से साथ उठाया । धीरे धीरे में एक फलक और
 मन्वीका संव उठ गई और सन्धी में सभी संयुक्तता में
 डाटफटकार के साथ एक संव मान निकालने का प्रयास किया,
 पर ये संव अधिक धीरे लीने नहीं थे और न ही उनके मार्ग में पीछे
 कोई व व्यवस्था नहीं था । केवल अनुमति के बल पर ही ये
 चल रहे थे । सभी धर्मों और सम्प्रदायों की बुद्धि बातों की
 सन्धी में निम्ना की और धर्म के बीच में तथा समाज के बीच
 में एक क्रान्ति का बीजारोपण किया पर धार्मिक परम्पराओं
 और व्यवस्था नहीं के साथ में इनके विज्ञान व्यवस्था न ही
 रहे । बल्कि सन्धी में ही इनके कुछ बल व्यवस्था मिठा ।
 वास्तव में बल्कि के ऐसे स्वल्प की व्यवस्था नहीं रही जो
 मानव मान के लिए व्यवस्थाकारी ही समझा था । व्यवस्था की
 निर्माण पद्धति में उस स्वल्प की व्यवस्था नहीं ही समझी थी ।
 ममान के समुदाय रूप की सभी वाले सम्प्रदायों में भी ममान के
 आधार के रूप की ही व्यवस्था मिठा रहा था । यद्यपि इन -
 सम्प्रदायों में व्यवस्था-वाद पर विस्थापन किया जाया था फिर
 भी ममान की वीरता प्रेम और धर्म कर्म की वीरता कृपा-कर्म
 की पीछे और संवय कर्म के लिए अधिक उपयोग और वास्तव-
 प्रद विषय ही समझ रहे थे । वहीलिए ममान के व्यवहार कृष्ण में
 इन धर्मों धर्मों की व्यवस्था व्यवस्था में ही । व्यवस्था निम्ना
 में कृष्ण-बल्कि का समुदाय उतर मारव में किया । कृष्ण की
 व्यवस्थानंद स्वल्प धर्म केवल माना गया और राक्षस की उपरी
 व्यवस्था नहीं बल्कि । इस प्रकार राक्षस और कृष्ण की हीला केरि
 की बल्कि में स्थान मिठा । इस मान की व्यवस्था यह रूपों में
 धार्मिक सम्प्रदायों में प्रचलित थी ही । बीह धर्म में जो स्थान प्राप्त
 व उपाय का था कर्म केवल यह में बल्कि और बल्कि का था वही
 कृष्ण बल्कि अन्त में कृष्ण और राक्षस का युद्ध । परम्पराओं और

प्रारम्भिक रूप परिपूर्ण के साथ में ही रही। केवल नाम परिवर्तन ही न
 मया। बाबायों ने राधा और कृष्ण की मूर्ति की शास्त्रीय रूप
 देना प्रारम्भ किया और प्रस्थानवादी की ध्यानात्मक रूप को हटाने में
 करनी प्रारम्भ कर दी। श्रीमद्भागवत पुराण ने कल्प-वृक्षा का कार्य
 किया, जिससे मूर्ति शाला की बड़ा प्रोत्साहन मिला और कला और
 कला ही रही। शास्त्र और बाबायों दोनों ही पक्षों को लेकर वह
 सम्प्रदाय को तब तक में राधा और कृष्ण के चरित्रों का विवेक ही
 रहा। पौनःपुन्यी स्थापना है और सत्त्वही स्थापना। वह कृष्णमूर्ति
 का धारण भारत में बड़ा प्रचार हुआ और उनके माध्यम से भारतीय
 भाषाओं के साहित्यों की रूप बलिष्ठ हुई। हिन्दी में भी बड़ी
 प्रभावशाली और उत्कृष्ट साहित्य की उत्पत्ति हुई। राधा और
 कृष्ण के स्वयं विवेक और उपासना निष्पन्न में जो स्थानगत भेद
 भी रहे। परन्तु जो रूप प्राप्त: रखा ही रहा। मध्य-युग का कलम
 द्वारा साहित्य एक प्रकार से कृष्ण मूर्ति साहित्य कहा जा सकता
 है। राम मूर्ति साहित्य की भाँसा अपेक्षाकृत कम ही रही।

राधा और कृष्ण की ऐतिहासिकता को लेकर
 भारतीय और पश्चात्य विद्वानों द्वारा बहुत कुछ लिखा पड़ा गया है
 पर मूर्ति के क्षेत्र में उपास्य ऐतिहासिक न होकर आध्यात्मिक ही माने हैं
 राधा और कृष्ण का उत्कृष्ट भारतीय सांस्कृतिक में बड़ा पुराना है पर
 उनका ही रूप इस युग में स्वीकार किया गया सम्प्रदाय: वह पक्ष किसी
 युग में नहीं था। हमें कोई संदेह नहीं कि राधा-कृष्ण के मध्य काहीन
 स्वरूपों के पीछे प्रार्थकों की परम्परायें निहित हैं। राधा और कृष्ण
 दोनों ही के रूप-विवेक के दो पक्ष रहे हैं भारतीय पक्ष और बाबरण
 पक्ष। मूर्ति भाषों में शास्त्रीय पक्ष की अपेक्षा बाबरण पक्ष अधिक
 महत्व का होता है। शास्त्रीय पक्ष की-व किसी वस्तु का दर्शन प्रस्तुत
 करता है जो कि बुद्धिमान का काम है। बाबरण पक्ष व्यवहार को होता
 है, जो कृष्ण भाव की वस्तु है। सम्प्रदायों के बाबायों ने शास्त्रीय पक्ष

का ही विवेक किया है। परन्तु मन्त्री और कवियों ने व्यवहार फटा जो दिया है।

सामाजिक स्थिति :-

हिन्दी की देश के साहित्य पर सत्ताहीन सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ा है। देश की परिस्थितियों से सामाजिक परिस्थितियों का निर्माण होता है। पाँच सौ वर्षों की अनिच्छित राजनीतिक परिस्थितियों से क-वीर्यन शोषण, उत्पीड़न तथा अक्षय-वर्जित-व्यवस्था कल्याणार्थों की कारण भाषा ही गया, मुसलमान बाहर से आक्रमण कर भारत में बाँधे और हिन्दुओं का अस्तित्व उस समय की सुरक्षा नहीं था, कल्याणार्थों तथा उत्पीड़न से निराश - हिन्दु कला को पानिक विस्थापनों में आस्था नहीं रही। हिन्दू और मुसलमानों के विद्वान्ताओं में भेद था। प्रका के मन से कवियों कलाई सत्ताओं तथा जीतों के डाट-वाट तथा विचार पर अग्र्य होती थी। प्रका का लिखनी शोध नहीं था। प्रका के पूर्ण-स्मरण उपनिषद् एवं परिपुत्रा से अभिप्राय कीक अवगत कर रही थी। विचारवा मुसलिम समाज का का का नहीं थी। मुसलमानों को मुँह की पालिम एवं व्यवसाय नहीं करता पड़ा था क्योंकि योग्य मुसलमान शायक का में शामिल हो जाते थे और साधारण मुसलमानों के लिए सामा-नाह बहि दुर थे। मुसलमानों में दास प्रका का प्रकटन था। कि अव्यक्ति के पास अधिक दास होते थे उसे ही अधिक की माना जाता था। दासों की दशा शोचनीय थी और दासियाँ ही काम-ग्रीहा का शायक थीं। व्यवसाय का बीच-साठा था। हरन में अधिक से अधिक पुनर्वर्तियों को रखने की परियाटी थी। व्यक्ति पैसाओं और नवर्तियों से मोहित करते थे। पाठ-पठन का प्रकटन था, समाज हीन वर्गों में बढ़ा था - १ - उच्च-वर्ग वर्ग - किमें राज्यकर्त्तारों तथा अधिकारी का था। द्वितीय वर्ग में मध्यवर्गी लोग थे किमें उच्च-वर्ग के समस्त शोच विमान थे। तृतीय वर्ग में गरीब थे किमें दिनार कठोर पालिम के उपरान्त भीक नहीं मिल पाता था। उनका विचार जीवन था।

हिन्दु समाज चार कों में विभाजित था - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । ब्राह्मण उपवर्ग का माना जाता था परन्तु इसमें वैयक्तिक पारिवारिक जीवन शामिल है । यह निम्न वर्ग का संरक्षण कर रहा था । प्रत्येक वर्ग पर एक एक कर्तव्य च्युत हो चुका था । सब बाह्य चारों में युक्त थे । हिन्दुत्व में भक्ति पुरुष का प्रभाव था । देवी की मान्यता की वीर पूजा एवं कुम्भारों में अन्य विश्वास का प्रभाव था बाह्यकर्म व्यवस्था में । कुम्भारों का राज्य था वीर हिन्दुत्व वस्त्रधारों का विरोध भी करते थे परन्तु फिर भी मानने वस्त्रधार किये जा रहे थे । समाज में मान्यता की वीर विचारों की वला संकीर्ण थी । जो केवल जीव की सामग्री समझा जाता था । पर्यंत तथा वाक-विवाद की प्रथा थी । इसलिए कवियों ने हिन्दुत्वों को जीवने की प्रेरणा दी । कर्म एवं कला में सामक्य स्थापित किया । ज्ञान की राज-गुरुता की वीर कला का ध्यान वाक्यनिधि किया । सुधार कार्य की सामक्यता थी । सन्तों ने जीव सुधारों की वीर कला को प्रकृत किया । हिन्दु समाज कुम्भारों को संकुचित बाधावरण से बाहर निकालकर एकता का राग बताया ।

राजनीतिक स्थिति :-

कवियों के साम्य पर उत्काहीन राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं वाकिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा है । राजनीतिक परिस्थितियों का प्रभाव वैयक्तिक परिवर्तन होता है । ऐरुबी स्वाधीन है ब्रह्मराज्य स्वाधीन वह जीव मिथुन संत कवियों का प्रभाव है किन्हीं वीर नाक, सुन्दरदास - मरुदास का जीवन साहित्य मुत्तासाह्य परिवार वाक्य परन्दास प्रकृत है । कुम्भारों का राजा एवं राजनीति साता है भी जीव उम्मीद है शक्ति है । इन कवियों की रचनाओं में पांच ही कवियों की - परिस्थितियों का प्रभाव प्रकृतिपर होता है । ज्ञानों ने ऐरुबी स्वाधीन है कुंज का भारत पर जीव वाक्यनिधि । उलीफन वार में ६३६-३७ में

बम्बई के पाद मुहम्मद बिनकासिम ने ७१२ ई० में तथा सुबुक्तगीन सन् ६७६ ई० के समय बङ्गालान्ध्यान की सीमा पर आक्रमण किया तथा कम्पाठ से और संबंध किया । तुर्कों की इन आक्रमणों से विचित्र हो गया कि भारत सम्बन्धाली है और युव कला में इतना कुशल नहीं है । सुबुक्तगीन के भेटे महमूद गजनी ने भारत पर सत्रह आक्रमण किये । उसने हिन्दू संस्कृति को विनिष्ट करने का पूर्ण प्रयास किया । बन्धिन सीमाध पर हुए आक्रमण में जी बहुत राशि मिली । मुहम्मद गोरी ने सन् ११७५ में मुल्तान एवं गुजरात पर । सन् ११८३ तथा ११६९ ई० में पंजाब । सिंध तथा सर-हिन्द आदि प्रदेशों पर आक्रमण किये । सन् ११६३ एवं ११६४ ई० में उत्तरी पुष्पद्वारा एवं कम्पाठ पराजित हुए । सुबुक्तगीन ने सन् ११७६ से ११९० ई० तक राज्य किया । चौथे बर्ग ने भी मुल्तानवंश के राज्य काठ में विनाशकारी आक्रमण किये । अन्त्येष्ट शासक अत्यन्त ख़ोद था ।

सिन्धुवंश का शासक अल्ताउद्दीन कु बहुत दूर प्रसारित था । हिन्दुओं का उसने बड़ा विनाश किया । उसने मुस्लिम - साम्राज्य की कों की और कुछ कर दिया । उसने सन् ११६६ ई० में पंजाब-गिरी और बौद्धावाद पर आक्रमण किया और उन्हें छुटा । मुगल सरदार त्वाक ने सन् ११६८ ई० में दिल्ली पर आक्रमण किया । सिन्धुवंश के अन्तर भारतवर्ष पर तुलुगवंश का राज्य था । फिरौक़ात तुलुक के उपराज्य को बौद्ध शासक इस देश में नहीं और इस देश के बन्धिन शासक सेमुराह ने भारत पर आक्रमण करके इस्लाम की का प्रचार किया, मुस्लिमों का सम्मान किया । दिल्ली तक उसने मयंकर उत्पाचार किये और अन्य हिन्दुओं की मृत्यु का श्राव किया । बखीर हक़्माख़ा ने कुछ कियों राजधानी पर अधिकार कर लिया । उसके बाद अत्यन्त ख़ोदवंश के शासक ने आगर्ष । ख़ोदवंश सिन्धु-दरसाह नदी पर फैला । यह भी बहुत मुल्तमान तथा हिन्दुओं का मिरीवी था । उसने भी भोंदरी को प्रसार कराया । अन्य कर्षीर हन्धी के सम्मानधारी थे । उसने भी हिन्दुओं पर अमानि उत्पाचार किये । इस देश के बन्धिन शासक हज़ाखी ख़ोद का बाबर से पानीपत का युद्ध हुआ और उसने मुल्तवंश में आगदी । बाबर ने भी हिन्दुओं पर कई उत्पाचार किये । बाबर के बाद तुलुगवंश शासक बन गया । अरशाह पूरी तुलुग की

परास्त कर स्वयं भारत का शासक बन गया। इसके राज्यपाल में भीड़ी
 छात्रि रही। अंग्रेजी ने "मराठा" इनके राज्यपाल में रखा। अंग्रेजों
 के उपराधिकारी दोनों नहीं थे इसलिए पुनः हुमाऊ शासक बन गया। हुमाऊ
 के बाद कन्नर शासक हुआ जिन्होंने हिन्दुओं की राज्य पद मिले और राजपूत
 सिक्खों के साथ विवाद लिये। कन्नर के बाद कर्नाट शासक हुआ जो
 मुसलमानों का भीड़ा बहुत पदा कायम करता था। जो मुसलमान ही जाता
 उसे अधिक सम्मान देता था। सन् १६२६ ई० में आठवली गई। पर भेडा वह
 भी इस्लाम का पदावासी था। उसने हिन्दुओं पर अधिक कर लगा दिये
 और राज्य पद केवल मुसलमानों को दिये। यह देखकर मुसलमान उद्विग्न
 ने भी हिन्दुओं पर कत्ताघार करने प्रारम्भ कर दिये। उसकी धार्मिक नीति
 संकुचित एवं कुंवार थी। औरंगजेब ने आठवली को भंग करके शासन की
 कामकीर करने वाली में ले ली। उसने हिन्दुओं पर कत्ताघार कर उनका पना
 और सत्तों मान्यता को नष्ट करवाया। हिन्दुओं के राज्य पद हीन लिये।
 हिन्दुओं के पुस्तकालय जलाये, पुस्तकालय नष्ट की और उनका धर्म
 विध्वंसित कर गया। औरंगजेब के उपरान्त शाहजहाँ और फिर मुहम्मद
 शाह बादशाह हुआ। सन् १७२६ ई० में नादिरशाह का भारत पर आक्रमण
 हुआ। नादिरशाह ने भारतवर्ष में विनाश, संसार, डोचन, उल्पीकन
 तथा हठमार की इस प्रकार वह भारतवर्ष का कं हो बनने का इतिहास
 और अज्ञान एवं अनिश्चित परिस्थितियों का इतिहास था। इन संज्ञाति
 मयी परिस्थितियों का हस्त अन्तों पर बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा, वे इस
 अज्ञान के व्यक्ति को भी, उनका भी जाया को प्रेम, अज्ञान तथा विश्व
 संयुक्त का उद्देश किया। उन्होंने हिन्दु मुस्लिम एक का चिराग बताया
 तथा अनुशासनात्मक है किन्तु निर्मणीयता को नष्ट बताया क्योंकि यही
 के कारण परस्पर का वैमनस्य उत्पन्न होकर जीवन कुंजी एवं मंगल्य ही
 उभरा था। उन्होंने हिन्दु-मुसलमान दोनों में पालि जाने वाले दोनों की
 परस्पर की और दोनों के धार्मिक दोनों का परिवार के कले बनाए
 पुनार की जानना की। राम मन्त्रि परज राज्य ने जीव मंत्र की जानना

की वीर साधना और पराक्रमी योद्धा एवं प्रबल शत्रु के नाश के माध्यम से हिन्दुओं में मुस्लिम राज्य के विनाश की प्रेरणा की जो कृष्ण की मूर्ति में प्रकट करता की कर्म मार्ग में प्रेरित कर मानवी प्रगति के बाध, नारियाँ पर भी अत्याचार करने वाले औरों की विनाश होता हुआ दिखाकर संदेश दिया कि कृष्ण की नीतियों के द्वारा हिन्दू जवाबदाहियों का विनाश करने में समर्थ है। मक की मकान कठ, भेद एवं विश्वास के समर्थ हैं जो मूर्ति से स्थगित मक काहुन एवं आनन्द से परिष्कारित हो एक कर्म शक्ति प्राप्त करता है। इस प्रकार मक कर्मों की साध्य प्रकट करता की एक वीर कर्मों की सत्ता की सत्ता शक्ति प्राप्त करता या जो कुरी और दुर्दिनी में सत्ता कर्म-रथ रथ जाने सम्मिलित होने के लिए प्रेरित था। इस प्रकार हिन्दू जवाब की नहीं बल्कि प्रेरक मानवीय जागरणों की स्थापना में सहाय रहे हैं कि मूर्ति का कर्म प्रेरक विद्वत् युक्त परम्परागत ने भी प्रकट हिन्दू जवाब की स्थापना की कार्य मिले। कम अधिक कम ने भी इसी प्रकार हिन्दू जवाब की स्थापना की कार्य मिले -

धार्मिक स्थिति :-

समाज, धर्म और साहित्य का परस्पर सम्बन्ध है। एक की शक्ति का दूसरे पर प्रभाव पड़ता है। ऐरवी है चौदवीं शताब्दी तक पारम्परिक पर मुसलमानों के निर्भर काफ़ूना होते रहे और हिन्दुओं की नारदीय संज्ञा मिली रही। शासकों ने लोक प्रचार के हिन्दुओं की पद बलिष्ठ किया और उन्हें पीड़ा दी। उस समय शीशना, उत्पीड़न और दमन का प्रभाव था। समाज प्रत्येक प्रकार के दुःखी और पीड़ित था। कबीर ने देश की विपुल परिस्थितियों का रूप जख्मीन किया। जगत पवन के गर्त में गिर रही थी सब मानव मानव बन रहा था। फतनी काही अनित्य शक्ति की उपासना में समाज का बका रहा था। धर्म में सर्वत्र - भूमिगत दृष्टिगत रही थी। पवित्र धर्म के पवित्र रूप पर आकाश पड़ा हुआ था औरकार्य एवं कर्मविशेषों का जग पड़ा था। नरबलि और पशु-बलि में जगत उदार मानने लगी थी, कबीर ने सबकी मर्त्यता की। मृत की बर्तनारी थे जगत बोनी की योग में आसक्त थे। धार्मिक धर्म का रूप विपुल हो गया था। विपुल जग एवं आचार ने धर्म का रूप प्रकट कर दिया था। हिन्दू पत्थरों की पुनः में ली थे जगत मुसलमान भी-बौद्धों के मरु थे। साधु पूर्व एवं पाठशाली थे। विज्ञान एवं वैज्ञानिक का सर्वत्र राव था धर्म के नाम पर लोक आस्थाचार हो रहे थे। कबीर ने जगत विरोध किया। कबीर ने मूर्ति पूजा, नमाज, योग आदि सबकी आह्वार कता। कबीर ने धर्म के नाम पर होने वाले आह्वारों की हटकर विरोध किया। उनकी दृष्टि में राम-रहीन में कोई लोभ नहीं था। सामाजिक अस्पृश्यता बराबर ही रह पाठशाली थी। जगत का व पाठशाली में लगी हुई थी। योगी की पशुष्ट हो गी थे। धर्म का रूप बड़ा बड़ा और विपुल हो रह गया था। पंक्ति मुक्ति के विपुल आकाश में ली थे। समाज में लोक विस्थापन परा हुआ था और वह उपायधर्म के गर्त में पड़ा था।

धार्मिक धर्म के विभिन्न सम्प्रदाय

संन्यास - का वैदिकवाद

वैदिक धर्म के वैदिकवाद का प्रकार भारत में प्राचीन काल से ही था परन्तु संन्यास ने इसे ज्ञान और परिष्कृत रूप दिया। उन्होंने वैदिक धर्म के कुछ सूत्रों का भाष्य किया और सत्यमेव जयते आदि वाक्यों द्वारा वैदिक धर्म के अर्थों को स्पष्ट करने के अंग्रेजी के आदर्शों का आदर्श बनाया। उनके अनुसार भक्ति, कर्म, विज्ञानों में कोई विरोध नहीं है और उनका अन्तर्गत में अन्तर्गत था। उन्होंने ज्ञान और कर्म दोनों के ही विचार कराये। भारतीय धर्म में स्वयं स्वयं पर उन्होंने एक आदर्श और आदर्श के ही पुनरुत्थान किया। उन्होंने कुछ स्वयं का स्मरण करना ही धर्म बताया। उनके अनुसार सम्पूर्ण प्रपञ्च दृष्टा और दृश्य को ही धर्मों में विभक्त किया जा सकता है। वैदिकवाद के अनुसार एक आदर्श अविनाशिकता का ही अन्तर्गत करता, ज्ञान और धर्म में सत्यमेव जयते, अज्ञान है। अर्थ, मन और विद्वान्तामन से ज्ञान प्राप्त होता है। धर्म अर्थात् और स्वाभाविक है। वैदिक धर्म के अन्तर्गत है। ईश्वर अर्थात् है अर्थ है। वैदिक धर्म के अन्तर्गत है। ज्ञान अर्थ है, ज्ञान अर्थ है। वैदिक धर्म के अन्तर्गत है।

रामानुजाचार्य का भी सम्प्रदाय

रामानुज सम्प्रदाय

पश्चिम के प्रसार के लिए कुछ वर्षों बाद रामानुज -
 चार्य ने उद्घाटन किया। रामानुज के विशिष्टांश भाव का प्रकटन कर
 अपनी तथा विष्णु और उनके अवतारों की एक एक कथा सुनकर
 स्वयं से उपासना की प्रविष्टा की। श्रीराम में उनकी विशेष आस्था
 थी। रामानुज ने संसार के माया, निष्कारण दोषों की कड़वा स्ति
 कर बताया कि जीव जीव और ईश्वर दोनों किन्हीं किन्हीं वस्तु होते
 हुए भी जीव जीव और जीव दोनों एक ही ईश्वर के शरीर हैं।
 रामानुज का जो जीव गुणों के कुछ बड़े विद्वान् भी बड़ा भी बड़े
 प्रेक्षारं व बताया सर्व प्रीति विविध जो सर्व पर आधारित है।
 उन्होंने जो की स्वयं जीवों व मानव किन्हीं आत्मा तथा
 एक प्रीति से विशिष्ट मानी है। ये शरीर, आत्मा और ईश्वर
 दोनों की दृष्टि मानते हैं क्योंकि जीव की वस्तु मानते हैं कि
 पश्चिम के जीव और जीव की अनित्यता के सम्बन्ध में ज्ञान के सभी
 जो विद्वानों का अधिकारी है। श्री कृष्णाराधन रामानुज -
 सम्प्रदाय में प्राप्त कथाएँ हैं, जो अनुष्ठान विविध हैं। वह सर्व गुण
 सम्पन्न, अनुष्ठान, जीवों, जीवों परमान, जीव कुछ प्रकाश,
 उपाचार, उपाचार स्थायी, विश्वास स्वरूप और पुण्यशील हैं।
 ईश्वर के साथ स्वयं माने हैं - परब्रह्म, किन्हीं, जीवों या जीवों
 और कर्त्तव्य। पदार्थ के प्रीति और प्रमाण दो फल हैं। प्रीति

के प्रथम और अन्त्य में दो भेद हैं । प्रमाण पदार्थ प्रत्यक्ष , अनुमान
 और उद्भव तीन प्रकार का होता है । प्रकृति जीवन का उपादान और
 निमित्त कारण प्रमाण है । जीव कणु, संछिन्न, कार्य और दास है । जीव
 स्वर्ग और अधोःशीर और अधोःशीर है । जीव के तीन भेद हैं —
 कर्म, मुक्त और नित्य । कर्म के दो वर्ग हैं - भौतिक और आध्यात्मिक ।
 प्रमाण के पांच प्रकार हैं । जीवन, उपादान उद्भव, स्वाध्याय और
 योग । उद्भव जीव जीविका आदि निमित्तों के फलन प्राप्त ही उपादान,
 जीव, दान यज्ञादि निमित्तों काय है करने चाहिये । जीव, कर्म,
 अधोःशीर और कर्म है । प्रमाण, उद्भव, अधोःशीर और प्रमाण है । जीव को प्रमाण
 और प्रमाण नारायण के परमात्मा में आत्म-समर्पण करने से आत्म
 मिलती है । रामानुज व्यास के कर्म पदाभासी वे ।

सप्तमः अध्यायः

पुनार है हैं । परमेत्पर की सत्य है उसका कार्य विभाग साठ पुनार का है :- १ दृष्टि , २ - स्थिति , ३ - संसार , ४ - नियम , ५ - आवरण , ६ - जीव , ७ - वंश , ८ - बीजा । अन्धियाँ नित्य और अनित्य को पुनार की हैं । अन्धियाँ की दृष्टि सब पूर्वी के बाद होती है उसके बाद भेद है —

- १ - बीजाच्छादिका
- २ - परमाच्छादिका
- ३ - संसार
- ४ - माया

संसार में पदार्थों के दो चर भेद हैं ।

संसार में कर्तु का कर्तु के साथ भेद नायिक नहीं सत्य है । जीव का प्रयोग दुःख है नियति और मानन्द की प्राप्ति है । मूल के चार भेद हैं - क्रीडाव , उत्पत्तिस्थित , क्षिरादि मार्ग तथा जीव । मूल जीव के चार भेद हैं :-

- १ - साक्षीत्व
- २ - साधीत्य
- ३ - साक्ष्य
- ४ - सायुज्य

—————

विष्णु स्वामी सम्प्रदाय

विष्णु स्वामी नाम के श्री बल्लभाचार्य से पूर्व कई
 आचार्य हुए थे, बल्लभ सम्प्रदाय के मुख्य 'सम्प्रदाय प्रदीप' लिखित
 प्रकरण में बल्लभ मा के एक पूर्व आचार्य विष्णु स्वामी का बृहन्त
 लिखा है - उसमें लिखा है 'सुषिम्बर राजा काठ के परमार एक
 राजा राजा प्रायिक देह में राज्य करता था, उसका एक ब्राह्मण
 भोजी था। उसी ब्राह्मण भोजी का एक पुत्रिमान, देवकी तथा
 मन्वन्तृति परायण पुत्र विष्णु स्वामी का, जिसने भेद, उपनिषद्,
 स्मृति, वेदान्त योग आदि समस्त ज्ञान साधित्य का अध्ययन करने
 के बाद आचार्य की भूमि पाई। मन्वान के साक्षात्कार से उसे
 ज्ञान के स्वरूप का ज्ञान तथा भक्ति मार्ग की अनुमति हुई'। इस ग्रन्थ
 में मन्वन्तृ प्रवीण रूप में दिये हुए विष्णु स्वामी के सात्विक विद्वान्त
बल्लभाचार्य के पुत्रादित के समान ही है। इस ग्रन्थ में लिखा है -
 'विष्णु स्वामी ने बहुत समय तक भक्ति मार्ग का प्रचार किया और
 भक्ति की भुक्ति से भी अधिक महत्ता दी। उन्होंने भेद सम्बन्धित -
 विद्वान् वेदान्त साहस योग कर्मादिन कर्मादि सम्पूर्ण ज्ञान्य भक्ति
 के ही साक्षात् किये हैं। इसके बाद इस मार्ग के सात ही आचार्य हुए।
 अठान्तर में है इसी सम्प्रदाय के एक आचार्य विष्णु मंथ की हुए की
 प्रायिक देखीय थे। बिलम्बेनताचार्य के समय में भी भक्ति का बहुत
 प्रचार हुआ जो समय की संकराचार्य तथा भी कुमारिक मन्दाचार्य की
 जैसे किन्हीं निम्न नामों का अन्तर्गत किया। बिलम्बेनताचार्य के
 बाद भी रामानुजाचार्य आदि जार कई भक्ति मार्ग के आचार्य हुए,

विनिर्देश विष्णु स्वामी तथा वित्तमंगलाचार्य के मार्ग की भी -
बालमाचार्य ने ग्रहण किया। तीर उर्वर का परिष्कार कर जसा
मत्त बनाया^१।

‘गौड़िय वल्ल सण्ड’^२ के छेद में भी मल्लि-
सिद्धान्त सरस्वती महाराज का कथन है ‘एक देवसनु विष्णुस्वामी
६० वर्ष से ३०० वर्ष पछले हमे भी मयूरा में रहते थे। उनके पिता
का नाम वैश्वर मद्र था। इन विष्णु स्वामी के ७०० वैष्णव
निवन्धी सम्पादों उनके मत्त का प्रचार करते थे। ७५ मत्त के सभी
वर्गसंग सम्पादों की व्याधेश्वर थे। कुतरे एक तीर विष्णु स्वामी
का नाम राजकीपाठ विष्णु स्वामी था। इनका कथन वर्ष ८३० में
हुआ। यह काण्डी नगर में रहते थे। काण्डी में उन्नीसवीं की राक-
कीपाठ देव की कथा की बरवाराव की मूर्ति की स्थापना की थी।
भी सरस्वती महाराज ने वित्तमंगलाचार्य की हन्दी का उद्धरण बताया
है। तीर एक तीर विष्णु स्वामी हुए थे। भी बालमाचार्य जी के
पूर्व पुराण हन्दी तीर विष्णु स्वामी के मुख्य उद्धरण थे।

साम्बसाधुर की कालाय राम की कविमन्थार
का स्थित ‘हन्दीट्यूट ऐनल’ में एक छेद है, किन्हीं का कथा कथा है कि
बाबूमाचार्य तथा बाबूमाच के पुरा की विवाहंकर थे तीर विवाहंकर

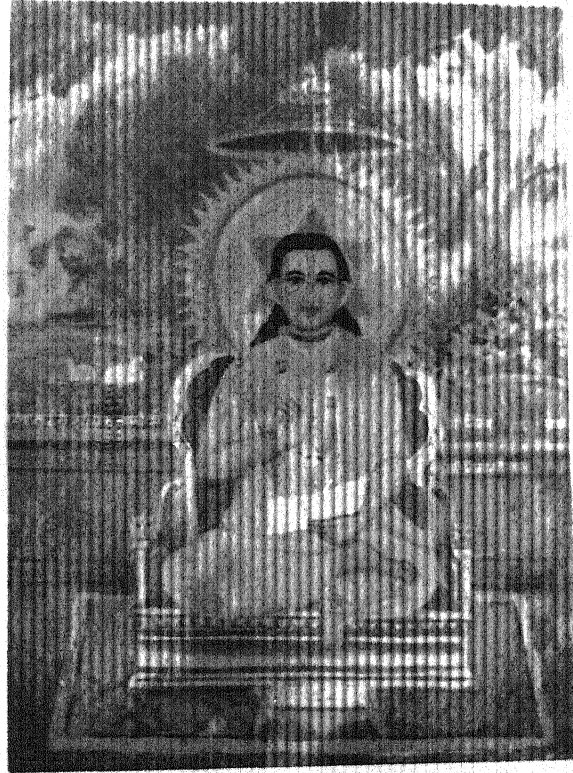
१ - सम्प्रदाय प्रदीप पृष्ठ १४-३०

२ - गौड़िय वल्ल सण्ड पृष्ठ ६२४ - ६२६

३ - " " " "

का ही दूसरा नाम विष्णु स्वामी था ।^१

यह पता लगना कि 'विष्णु स्वामी सम्प्रदाय' के प्रथम वाचार्थ विष्णु स्वामी की स्थिति कब और कहाँ थी, कठिन है । बल्लभ सम्प्रदायी गुरुजी तथा किंवदन्तियाँ से विदित होता है कि श्री बल्लभाचार्य जी विष्णु स्वामी सम्प्रदाय की उच्छिन्न गद्दी पर बैठे और उन्होंने इसी सम्प्रदाय के सिद्धान्तों के आधार पर अपने सिद्धान्तों को निर्धारित किया । ऐसी ही कल्पना है कि महाराष्ट्र के राज्य ज्ञानदेव नामदेव, फैसल, त्रिठीक, हीराहाड और श्रीराम विष्णु स्वामी माना-वहमी थे । महाराष्ट्र में प्रचलित मान्यता थी, जो पीछे 'वारकरी' सम्प्रदाय कहाया वह विष्णु स्वामी मत का ही अग्रगण्य है । इसके अनुयायी ज्ञानदेव तथा नामदेव आदि रहे ।



जगन्गुरु निम्बार्काचार्य

निष्कार - सम्प्रदाय

निष्काराचार्य ने ज्ञानेश का प्रकार किया। इसमें अक्षय और ज्ञान दोनों का समान महत्त्व है। निष्कार के मतानुसार किश, अक्षय और हंशपर तीन परम सत्य हैं किश मोक्ष, मोक्ष और किशता ही कहा गया है। बीच और ज्ञान की कोई स्पष्टता नहीं है। ये हंशपर के आश्रित हैं। कृष्ण के साथ राधा की महानता का सम्प्रदाय की विशेषता है। राधा कृष्ण के साथ व स्वर्गी है परी मोक्षों में निवास करती है। कृष्ण परब्रह्म हैं उन्हीं के राधा और मोक्षितों का आश्रित होता है। इस प्रकार राधाकृष्ण की उपासना ही प्रधान है। परमात्मा कान्त, सच्चिदानन्द स्वरूप सर्व निष्कार, सर्व व्यापक, निर्गुण, समुक्त अक्षय करीर और करीर हैं प्राणिविहार है। कृष्ण देवर्ष वरा मातुर्ष के आश्रित हैं। उनके देवर्ष रूप की आश्रितात्री, राधा, उन्हीं या मु आश्रित के और प्रेम व मातुर्ष रूप की आश्रितात्री मोक्षी और राधा हैं। इस वंश और "ज्ञ" के बीच वंश और ज्ञान है। मोक्षी निष्कार हैं, अक्षय मोक्षी। हंशपर सर्वोपम है बीच वस्तु और ज्ञान है। बीच तीन प्रकार के हैं :-

- १ - यह बीच
- २ - मुक्त बीच
- ३ - निष्कार मुक्त बीच।

मुक्ति के दो प्रकार हैं - रूप मुक्ति तथा सुषीमुक्ति।

वर्णित वस्त्र के तीन भेद हैं :-

- १ - प्राकृत
- २ - अप्राकृत
- ३ - काल

श्रम के चार रूप हैं :-

पर कर्म, अपर कर्म, अपर भुक्त और परभुक्त । मनुष्य की प्राप्ति का मन्त्र ही उक्त उपपाद है, जो ही प्रकार की है - धामन रूप और पराकर्म । कर्म ही उक्त मन्त्र है । राधा कर्म की - छाविनी तथा प्राणीत्वरी है, जिसकी शक्ति से गोपियाँ, पतिव्रताएँ उत्पन्न तथा हजारों शक्ति उत्पन्न होकर उनकी सेवा करती हैं ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

कल्याण - सम्प्रदाय

कल्याणार्थ की के अनुसार मुख्य पुष्टिमान भगवान के अनुसार है ही वाच्य है, पुष्टि मानों नृहेत्याद्यः । कल्याण सम्प्रदाय में भी कृष्ण की पूर्ण वाच्य स्वरूप पुरुषोत्तम परब्रह्म माना गया है । इस प्रकारों नित्य गुणों के मुख्य है, यह सनादीय, विश्ववीर्य और स्वयंसेवा रखता है । इस के वाच्य अर्थ है, सर्वत्र व्याप्त रहने हुए भी उसकी स्थिति है, उसके वाच्य रूप हैं । यह वाच्यत्व और वाच्य है । परब्रह्म के तीन मुख्य रूप हैं - सत् चित् और वाच्य । वाः यह वाच्यत्व अर्थात् सनादीय की कल्याण है । इस गुणों के गुणों और भगवान के भगवान थे। वाच्य गुणों की ही एक ही व्यापक है । वाच्य सनादीय है । इस के तीन स्वरूप हैं :-

- १ - वाच्यीय परब्रह्म
- २ - वाच्यीय वाच्य ब्रह्म
- ३ - वाच्यीय वाच्य ब्रह्म

कल्याणार्थ में वाच्य की है ब्रह्म की ही वाच्य का निमित्त और उपादान कारण माना है । इस वाच्य वाच्यीय वाच्य द्वारा सत् का चित् द्वारा चित् का सनादीय द्वारा वाच्य वाच्यीय करता है । वाच्यीय के परब्रह्म की कल्याणार्थ में पुरुषोत्तम पुरुषोत्तम माना है । भीकृष्ण की पूर्ण वाच्य स्वरूप, पूर्ण - पुरुषोत्तम, परब्रह्म माना गया है । यह पुरुषोत्तम वाच्य ही वाच्य

करते हैं। इन अनेक शक्तियों के विविध रूप गुण और नाम होते हैं।
ये ही गी, स्वामिनी, कन पन्थावती, राधा और यमुना आदि हैं।
बीज शक्ति दो प्रकार की है - १ देवी शक्ति - २ बाधुरी शक्ति।
शक्ति शक्ति के चार प्रकार के हैं :-

- १ - कुल शक्ति
- २ - शक्ति शक्ति
- ३ - माता शक्ति
- ४ - प्रवाही शक्ति

बाधुरी बीज शक्ति दो प्रकार की है -

- १ - पुत्री , २ - वर । कुलशक्ति विज्ञान के अनुसार यह शक्ति
जन्म प्राप्त रूप है इसलिये जन्म के समान सत्य है। जन्म ही इस जन्म का
निमित्त और उपादान कारण है। जन्म संसार दुःख और संसार बीज
द्वारा है। माया परब्रह्म की सर्व मयन सर्वा रूप शक्ति है जो परब्रह्म
के आधान है। शक्ति अस्वार्थ पाँच प्रकार की है - साधनीय ,
साधीय , साधक्य , साधुय्य और साधुय्य अनुपान्मयिनी । बीजों
का कथान के साथ सम्बन्ध की शक्ति कहलाती है।

सत्यमेव जयते

चैतन्य सम्प्रदाय

यह एक कृष्ण भक्तियोग सम्प्रदाय है। महात्मा श्री -
चैतन्य प्रभु ने इस सम्प्रदाय की स्थापना की। चैतन्य सम्प्रदाय प्रभु सम्प्र-
दाय के अत्यन्त निकट का सम्बन्ध रखता है। चैतन्य ने राधा की
प्रार्थना स्थापन किया। चैतन्य ने राधा के अविरक्त हृदय, सत्य -
वाच्यता और मधुर भाव की भी स्थापना किया है। चैतन्य की राधा-
पूज्या की मुख्य शक्ति, नाम और हीठा कीर्तन का उनके बीच में
ही प्रसार हो गया था। श्री चैतन्य महाप्रभु के बाद की सप्त गौस्वामी-
जी ने शक्ति और सत्य एवं सत्य सम्बन्धी अनेक मुख्य शक्तियाँ, विभिन्न
कीर्तन प्रभु हैं -

- १ - शक्ति रसायन चिन्मय
- २ - उच्चकृत नीलमणि
- ३ - उच्च भाववतामृत ।

सप्त गौस्वामी के श्री गुरु श्री अनामन गौस्वामी ने
श्री प्रभु मुख्य शक्ति - श्रीप्रभावमय कल सत्य की टीका तथा मुख्य
भाववतामृत । चैतन्य सम्प्रदाय अविनश्यत भक्तियोगादी सम्प्रदाय कहलाता
है। इसी अनुसार परम सत्य एक ही है श्री अविनश्यत सत्य कल
शक्ति है अत्यन्त तथा आदि है और अनामन भक्त है कल कल प्रभु
है अत्यन्त शक्ति है। परम सत्य की अत्यन्त शक्ति अविनश्यत होने के -
कारण यह सत्य, प्रभाव और अत्यन्त कारण का सत्य है। श्री
पूज्या में अत्यन्त गुण हैं। ये अत्यन्त अत्यन्त, गुणकारी अविरचित

शक्ति है विशिष्ट है और पूर्णानन्द का का उक्त विग्रह है ।
 परब्रह्म के तीन रूप माने हैं - स्वयं रूप क्षेत्रात्मक रूप और कामेश्वर
 रूप । परब्रह्म स्वयं रूप की कृष्ण है जिसका रूप किसी भी क्षेत्रा
 का है प्रकट नहीं होता । ये सर्व कारणों के कारण और स्वयं
 विशिष्ट है । की कृष्ण का पञ्चाकारिका रूप है जो पूर्ण है, कुपरा
 स्फुरा रूप है जो पूर्णेश्वर है और तीसरा गुणात्मक - प्रकीर्ण-रूप
 है जो पूर्णानन्द है । गुणात्मक के तीन प्रकार के अवतार - गुणावतार
 , गुणावतार और तीर्थावतार है । परब्रह्म की कृष्ण का त्रिवि
 अवतार पुरुष है जो वासुदेव की कलावा है । श्री कृष्ण ने माने
 कल्प माने हैं - ईश्वर, बीज, प्रकृति, काष्ठ तथा कर्म । ज्ञान
 शक्ति सम्पूर्ण की कृष्ण की तीन प्रकार की शक्तियाँ हैं । कर्मावतार
 शक्ति उनकी स्वयं शक्ति है, शक्तिवतार शक्ति माया या कर्म शक्ति
 है और क्षेत्रात्मक शक्ति बीज शक्ति है बीज कर्म, क्षेत्रा और नित्य
 है । ईश्वर गुणों और क्षेत्रा है, बीज गुण और क्षेत्रा है । क्षेत्रा रूप
 और क्षेत्रात्मक की शक्तियाँ ही प्रकृति है । ज्ञान नित्य और ईश्वर
 के क्षेत्रात्मक है । कर्म कर्मावतार और नित्य कर्म क्षेत्रा है । ज्ञान और
 क्षेत्रात्मक क्षेत्रावतार शक्ति तथा शक्ति ही मुख्य शक्ति है । शक्ति माने
 की तीन शक्तियाँ हैं - ज्ञान, माय और प्रेम । शक्ति ही प्रकार
 की है -- बीज और रानाक्षर । शक्ति ही प्रेम और ज्ञान की
 शक्ति स्वरूप है और तथा माय स्वरूप है ।

राधावल्लभ - सम्प्रदाय

कम्प्राप कर्माँ के समय में ही दुबल कपाचना का राधावल्लभ सम्प्रदाय प्रगटित था, जिसके प्रसक्त स्वामी हितकरिमत थे। हितकरिमत के यहाँ राधा कृष्ण केहि की सेवाही जसा परि-
 चर्चा करने का ही अधिकार था। तन्मते जसो सम्प्रदाय में मुनि व मान-
 सिक वृत्तियों के परिष्कार का ही योग बताया है इस सम्प्रदाय में
 राधा कृष्ण की केवल हीला के मन के आनन्द को परम सौ भावुरी
 भाव कहा है और श्रीकृष्ण की लीला की शक्ति की विशेष महत्त्व
 दिया है। राधावल्लभ सम्प्रदाय का प्रतापार राधा प्रेम है। इस
 सम्प्रदाय में स्वीपाचना का विधान है। इसी राधा की आराधना
 के बिना कृष्ण की आराधना का निर्णय है। राधा स्वयं सर्वत्र
 अधिष्ठात्रीणी है। उनकी सेवा स्वीया परकीया के रूप में न होकर
 स्वयं रूप में है। हीनता का भी राधा स्वीया होने पर भी रा-
 धा कृष्ण के निरन्तर विचार स्थिति में स्वीया परकीया भाव नि-
 र्दिष्ट नहीं है। इस सम्प्रदाय में राधा ही सब कुछ है। राधा
 ही हृदयैवी, आराधनीवी या ज्ञातृ है। कृष्ण राधा के कृपांग
 है, राधा के कृपा कटाक्ष से जसो की सकल मोदक करते हैं।
 सक्ती या सती ऊँच हीन के निरन्तर ही परमाधिक स्थिति का
 नाम है। श्रीकृष्ण के परिमल और परिकर रूप और पर के भेद से
 रहते हैं। वे सदा एक ही निरन्तर विचार हीला में मग्न रहते हैं।
 कृपाका कल्पना द्वारा शक्ति रूप कृपाका न होकर भीतिक कृपाका
 है। इस सम्प्रदाय में राधा की मूर्ति स्थापित न होकर मूर्दी देवा है।

हरिदासी - सम्प्रदाय

स्वामी हरिदास की सम्प्रदाय के प्रसिद्धि है । यह सम्प्रदाय वैदिक के किसी पाद कक्षा किसी दार्शनिक सिद्धान्त का प्रचारक न होकर मक्ति का एक साधक माने है । हरिदास सम्प्रदाय सभी सम्प्रदाय की कक्षा आता है । हरिदासी सम्प्रदाय के स्वतन्त्र सिद्धान्त हैं परन्तु यह निम्नान्न सम्प्रदाय में ही समाविष्ट होता है । स्वामी दीव की भूतार्थिता मयमान के ऊपर सम्पूर्ण रूप से निर्भर रहने में ही मानते हैं । यह सम्प्रदाय वास्तव में दार्शनिक मुक्तता के दूर हैं और अपने स्वीकारिता की प्रशंसा की मयी है । स्वामी स्वाम के प्रेम में एक सदा और नवीनता है । स्वामी विहारिण्य की ही हरिदासी उपासना सुखों का वाच्यकार कहा जा सकता है । स्वामी केवलता व्यवहारी भी कुण्ड की ही नित्य विहार सुख है । विहारिणी की का नित्य कुन्दाका अनुभव और कोणिक है । विहारि विहारिणी की का विहार निरन्तर कहा रहता है । इस सम्प्रदाय का स्वामी हरिदास की के समय का ही बना हुआ विहारि की का मान्यता बहुत प्रचिद है । कुन्दावन में बाध की टटी संस्थान में ही सम्प्रदाय की मनुषी वर्तमान है ।

निम्नार्थ सम्प्रदाय सम्बन्धी साहित्य एवं कथ-रचिकीय

भेदपूर्णतम नामक स्थान में उन्मन्त्र हुए । निम्नार्क की कृत्तियों के नाम इस प्रकार हैं -

१ - वैदान्त कारिकावली २ - वैदान्त कामधेनु ,
३ - मन्त्र रक्त्य णीच्छी , ४ - प्रवृत्त कल्पवल्ली , ५ - प्रवृत्ति किन्ता
मणि , ६ - गीता भाष्यार्थ , ७ - लक्ष्मीप्रकाश , ८ - श्रीकृष्ण -
प्राज्ञःस्थाना आदि निम्नार्कभाष्य ने भारत के विभिन्न स्थानों तक
की परम्परा उनका मुख्य निवास श्रीकृष्ण नामक था । निम्नार्कभाष्य के
मुख्य शिष्य श्री निवासाभाष्य ने ब्रह्म सूत्री पर " वैदान्त कीर्तुषु " नामक
भाष्य की रचना की । उनकी एक और रचना " कुरुक्षेत्रावस्थीत " है ।
उनकी एक और कृति " वैदान्त कारिकावली " ब्रह्मार्थ मय है ।
निम्नार्कभाष्य के दूसरे शिष्य श्रीदुम्भराभाष्य की आते हैं । वे अपना
कुरुक्षेत्र वर्णन रखी थे । इनके पुत्र हैं -

१ - श्रीदुम्भर - संख्या २ - निम्नार्क स्वीत, ब्रह्म
पञ्चक तथा निम्नार्क पित्रोति । निम्नार्कभाष्य के तीसरे शिष्य श्रीर -
मुखाभाष्य ने वैश्वानरस्थान में रचना की और वह कृत्तियों का प्रसिद्ध
स्थल का गया । उनकी एक मात्र रचना " ब्रह्मसूत्र पर कृति " प्राम्थ
है ।

निम्नार्क और उनके शिष्यों के बाद सम्प्रदाय का
मन्त्र ब्रह्म प्रारम्भ होता है । इस काल की परम्परा में विश्वाभाष्य है
जिसके ११ भाष्य और व्याख्यान में वे १० मट जाते हैं ।

विश्वाभाष्य निवासाभाष्य के शिष्य थे । उन्होंने
निम्नार्क रचित " प्रवृत्ति किन्तामणि " की टीका लिखी । विश्वाभाष्य

ने "पेवापारी खोश" नाम के बोड़े के शौकीनक खुश लिखी ।
 विश्वाचार्य के शिष्य दिवशाचार्य जी थे । इनका जन्म स्थान खेड़ना
 प्रदेश था । पुराणोत्पाचार्य जी ने निम्बार्क द्वारा रचित "वेदान्त -
 कामेनु" या वस शौकी जी "वेदान्तपरत्न - मुं मंजुणा" पर एक
 नवीर टीका लिखी । एक मुकुट ग्रन्थ "विद्वान्ध परिशरण"
 की भी इन्हींने रचना की । वेदाचार्य कवचान विष्णु के कण्ठ का
 कन्धार "कवाकदार" नाम के प्रसिद्ध है । वेदाचार्य जी की रचनायें
 "विद्वान्ध कान्दवी" नामक कृत्य - धृष्टि के वेदाचार्य की धृष्टि
 "विद्वान्ध कान्दवी" पर टीका की । निम्बार्क कृत "मंत्र रत्न-
 शौकणी" की मुकुट व्याख्या की थीं कन्धार्य - रत्न "नाम के
 मुद्रित हुए ।

उत्तर पुन वाचार्य केल काश्मीरी के प्रारम्भ कीकर
 वर्तमान मध्य तक वाका थाधि । केल काश्मीरी चौदहवीं शती में
 हुई । केल काश्मीरी पाल्हाजक है । केल काश्मीरी ने नीतात्मक
 प्रमाज्ञा, कीर्तुम प्रमा, मुम्हकोपनिषद वाच्य की मनुमानवत
 "देवदुष्टि, टीका तथा उन कीपिका ग्रन्थ लिखी । केल काश्मीरी
 जी के शिष्य बीमट्ट और उनके शिष्य हरिचन्द्र देव की हुए ।
 निम्बार्क सम्प्रदाय का उनके द्वारा विशेष विचार हुआ ।

हरिध्यास देव की वे तीन शिष्य थीं परन्तु उनकी आज्ञा शिष्य
मुख्य थे। इनके नाम पर बारह द्वार कर्माष्ट्र बारह शिष्य आचार्य
प्रतिष्ठित हैं। वे पट्ट की के एक गुण भाई संवर्णदेव
हैं। इनकी भेष्यावर्ण वर्ण "पुरपुर" - "मंजरी" - "गुन्ध" की रक्षा थी।

हरिध्यासदेव ने उग्रवास का व्यापक विस्तार
किया, इनके प्रवास बारह निम्न शिष्य हैं -

स्वमुरारिदेव, वीरिदेव, मदनवीरदेव,
रुद्रमन्त्रदेव, वासुदेव, परशुरामदेव, गोपालदेव, कृष्णकेशदेव,
माधवदेव, भैरवदेव, तगरानीपालदेव, वीर सुकुन्द देव। आचार्य
की १ आचार्य १ एवं वेदों की आदि अन्य शिष्यों की भी प्रतिदि
है। हरिध्यासदेव के बारह शिष्यों में से स्वमुरारिदेव एवं परशुराम
देव की ही आज्ञा का विशेष विस्तार मिलता है। हरिध्यासदेव की
के बारह शिष्यों में से भी स्वमुरारिदेव की का बहुत ऊँचा स्थान है।
उनके आत्म उपदेशाश्रमों का नाम "स्वमुरारिआश्रम" किया है।
स्वमुरारिदेव की के शिष्य कन्दर देवाचार्य की भी नामों से प्रतिदि
है। कर्माष्ट्रदेव की के सभी शिष्य की परमात्मन्व देवाचार्य थे।
द्वारे शिष्य मुर देवाचार्य थे। वीर शिष्य भी गारायण देवाचार्य
थे। वीर शिष्य भी रागनीपाल देवाचार्य थे। पंचम शिष्य की वर्ण -
देवाचार्य थे।

वीरवी आरवी के प्रारम्भ में० रामचन्द्र गीत
 कहे ठेक हूँ किन्हीं पुष्पों में कल्पवृक्ष हीन ॥ स्वयंदिन-
 योपे वीर ॥ नायकी निपुण ॥ जादि मुन्ध ली ॥ हरिष्ठासके
 की के बारह दिव्यों में परशुरामके वीरों संख्या बढी है ।
 जानन्द का, रसिकोदित्तु मुन्दावनके, नागरिदास जादि कई
 मस्तकान्ता कवि हय साका में हूँ । शान्तिवक दृष्टि से भी यह
 साका कमल रही । परशुरामके की के द्वारा हय द्वार का
 प्रारम्भ हुआ । सैमावाद के प्रकृतिवाचिका की वियोगी -
 विलेश्वर ने परशुराम सागर के वीरों का संकलन प्रकाशित किया ।
 किन्तु किन्हीं में उनके द्वारा रचित काँच मुन्धों का उल्लेख है
 परन्तु शान्तिवाचिका में केवल परशुराम सागर ही प्रसिद्ध है ।
 परशुराम सागर में ही पाँचों मुन्धों का समावेश है । परशुराम
 सागर एक विशाल मुन्ध है । यह उनकी समस्त वाणिज्यों का
 संग्रह है । जैसे विजयकण्ठके नीति, सनुपेय, उत्सव, सन्ध
 स्वयं निरूपण, नाया का त्याग, प्रकृत्य कर्म, पनकू उरणागति
 सन्धात, जलपुन, दास भाव, ज्ञान, कर्म गुरु देवा जादि लोक
 कार्मिक विषयों पर रत्नाहं हैं । परशुराम सागर का प्रकाशन
 डा० रामप्रसाद झा के चार भागों में जारी हैं किया है ।
 डा० हरिप्रसाद मिश्र ने भी परशुराम सागर का सम्पादन
 किया है, परन्तु वह प्रसिद्ध नहीं है । डा० रामप्रसाद झा का
 कलम है कि परशुराम सागर के प्रथम पद बीरवर तथा कवि -
 परशुराम सागर की वीरों का निर्माण किया गया । उस प्रकार
 जाय ॥ परशुराम सागर के नाम से परशुरामके वृक्ष ३० मुन्धों का
 संग्रह उपलब्ध होता है, जिसकी कमी कमी रत्नाहं के आधार
 पर निम्न चार कण्डों में विस्तृत किया है -

१ - परशुराम सागर १० ३० डा० रामप्रसाद झा

- (१०) बाण्टी सही संग्रह ग्रन्थ २२२५ दोहों का एक ग्रन्थ
 (११) कविता, दश्यादि में रासिक ग्रन्थ हन्द, कविता के प्रस्ताव
 चरित्र कुल १५ ग्रन्थ
 (१२) ठीठा ग्रन्थ अगर बीच ठीठाऊठ के विपुलसीठी ठीठा ग्रन्थ
 एक कुल १३ ग्रन्थ
 (१३) मेव पदावली ६३० मेव पदाई का एक ग्रन्थ है ।

परशुराम शानर का परिष्कार भी कुंर का० राय-
 प्रसाद झाँ में लिखा है " परशुरामके द्वारा विरचित उन ग्रन्थों
 का मुकुट संकलन परशुराम शानर के नाम से लिखावत है जिसकी सर्व
 प्रथम पोथी का निर्माण जिन्ही अज्ञात नामा द्वारा " परशुराम
 बाण्टी के नाम से सं० १६७७ वि० में किया गया था तथा जिसमें
 इनके निर्मातृग्रन्थों का संग्रह किया गया था :- १ बाण्टी
 बाण्टी ग्रन्थ की उपमा २२२५ दोहों की मुकुट रक्ता है । २- हन्द
 कविता दश्यादि हन्दी में रासिक ग्रन्थ मुकुट ३ - ३ - प्रथम हन्द ,
 ४ - का अकार, ५ - एसाव चरित्र, ६ - बीकुष्ण चरित्र,
 ७ - लिंगार की बीड़ी, ८ पुदावत चरित्र, ९ -पर बीच की
 बीड़ी १० मुकुट, ११ कविता बाण्टी, १२ - कर्न निंदि, १३-
 मेव फेक, १४ - डीपनी, १५ - मकुटाठ, १६ प्रस्ताव चरित्र ,
 १७ - अगर बीच ठीठा, १८ - नाद निंदि ठीठा, १९ बाण्टी
 निगोच , २० - नाथ, २१ - निरूप, २२ - हरि, २३- निवाण
 २४- समकण्टी, २५ - विधि ठीठा, २६- बार ठीठा, २७ -
 ठीठा, २८- बावनी ठीठा २९ - विपुलसीठी ठीठा ।

का० रायप्रसाद झाँ का कथन है कि परशुराम
 शानर का कुली तथा अंतिम बार संकलन सं० १८३० वि० में भी

ज्यास
 मन्ताराम द्वारा किया गया था। मन्ताराम ज्यास ने परशुराम
 बाणी में परशुरामके कुल ६३० गैय पर्वों को और चौक किया
 और उस प्रकार परशुराम बाणी के नाम से परशुरामके कुल सभी
 शास्त्रों की छिपि बढ़ कर दिया गया। विप्रमूर्ति जी ठीका ग्रन्थ
 की पुष्पिका के ऊपर में परशुराम बाणी का छिपि काष्ठ सं० १६००
 दि० बंकिव किया गया है, वहाँ छिपि कर्ता का नामोक्ति नहीं हुआ
 है। परशुराम बाणी के निर्माण की वास्तविकता के सम्बन्ध में
 डॉ० रामप्रसाद ज्ञाँ का विचार है कि सं० १८२५ वि० में बुरखानर
 की सर्वप्रथम पोथी केदार की मधी और मेष्णाय मंदिरों में इसके
 मालिक के पर्वों के कीर्तन की प्रथम व्यापक हो रही थी कि ऐसी ही
 परिस्थितियों में बुरखानर के मकान पर परशुराम बाणी का निर्माण
 हुआ किन्तु परशुराम बाणी के अधिकृत परशुरामके ६३ गैय और
 रागवद्ध कीर्तन पर्वों की और चौक किया गया।

यह भी कहा जाता है कि सं० १६०० वि० के
 परशुराम और संवत् १८२० वि० के पूर्व कर्ता किसी ब्राह्मण नामा -
 परशुराम बाणी की मूल पोथी का निर्माण कर दिया गया था
 तथा इसके आधार पर संवत् १८२० वि० में मन्ताराम ज्यास ने
 कर्मी बलि कौषा के प्रिय एक और प्रविच्छिपि बढ़ की क्योंकि
 ग्रन्थ की अंतिम पंक्तियाँ इस शब्द की और भी सहेव करती है।

-
- १ - परशुराम बाणी पु० १६२० डॉ० रामप्रसाद ज्ञाँ ।
 - २ - छवि भी की भी परशुरामके कुल ग्रन्थ रामखानर सम्पूर्ण
 सं० १८२० निविट ज्येष्ठ पदी ६ पुनवासी, छिपि कुल
 ज्यास मन्ताराम पञ्चाशे बाई कौषा ।

पर वह मूल पाँची क्राय है ।

परशुराम जी के द्वारा रचित केवल एक पुस्तक मुख्य परशुराम धामर ही है । डा० नारायणदास जहाँ मूल रूप से उनके तीन खण्ड करने के फल में हैं । १ - धात्री , २ - धात्री कथा परिचय - ३ पद ।

धात्री -

परशुराम जी की के अनुसार धात्री की सेवा सम्बन्ध है जिसमें ईश्वर विन्दन संगम है तथा ईश्वर विन्दन में प्रयुक्त व सम्बन्ध की सभी धात्री के धात्री में विभिन्न स्थापना पर ईश्वर स्मरण, धात्री की आरवा, निष्कल धन्य, पुत्र स्मरण परधैरी प्राण, विवेक, धर्म काठा, विरह, वन्य धर्म, निरक्षी रावकृष्ण, भेद धोपी, काया, धूर प्रेम धन आदि लोक विषयों की प्रतिपादन हुआ है । परशुराम धामर में २५० विविध कीड़े धात्रियों के वर्णन संश्लिष्ट हैं । इनमें से प्रत्येक कीड़े में दो तीन से लेकर लगभग ३० तक धात्रियाँ समाविष्ट हैं । कुल धात्रियों की संख्या २२०६ है ।

१ - परशुराम धामर पुस्तक एड डा० रामकृष्णदास जहाँ

२ - विष्वाक्षी सम्प्रदाय और कृष्णमल्ल लिखी काव्य पुस्तक २०६

डा० नारायणदास जहाँ ।

३ - परशुराम धामर कठिनायाध्यायी प्रति पुस्तक ६२१ पद ६२१

ॐ ह्रीं क्लीं नमः शिवाय नमः ॥

१७२५ से १७२७ तक रहते मिलता है ।^१ मुन्दाकवि ने गीतागुप्त गंगा
 बीरता मंत्र एवं कुछ परिवार सम्बन्धी की रचना की । गीतागुप्त
 गंगा एक बाण्टी ग्रन्थ है जिसमें कवियों ने विविध विषयों पर
 लिखा है । उसमें काव्य द्वारा मन्दाकिनी की नाँव काव्यकारित
 है बहती है जिसे कवि ने दोषद पाटी में बाँकी का प्रकाश किया
 है ।^२ गीतागुप्त गंगा, भाषा , भाव काव्य, शौन्ध्य, उड़ी, रस-
 प्रकाश की दृष्टियों से प्रौढ रखा है जो कवि बीरता की-मरम
 परिपक्वता काव्य एवं कृष्णति का प्रतिकर है । साम्प्रदायिक
 म्हापात्रुत्तर का ग्रन्थ में भी राधाकृष्ण की वाच्यता उछा का
 प्रविभाजन है । बाह्य योन्युद्ध एवं केतोर उछाओं का भी रचन
 हुआ है । कवि ने राधा की के-मरमका भाव पर विशेष का
 किया है । परकीया वाच्यमयी कृती, कार्य भाव, विरह, संकीर्ण
 वर्णन आदि विषयों का भी समावेश है । परन्तु विशेषता -
 स्वकीया भाव की की मानी गयी है । कवि के अनुसार सम्पन्नानंद
 मवान की रस स्वल्प हैं । भीरावा उछी प्रस की काकुताकिनी उछि
 है जो रसाकी न रहकर प्रत्येक समय उनके साथ रमण करती है ।
 मवान नानी मुक्तिमान भुंगार ही है जो रस पीपक उछि के साथ
 प्रम में विहार करते हैं । भीकृष्ण की नाँव भी कृष्णमानु दुहारी
 का कन्नीत्यव, उनकी कन्म नाँव एवं काव्य पाव की दियों का
 उनके दली के लिए जाना पुन्वर रूपेण बाँजति हुआ है । रावकुमारी

१ - गीता गुप्त गंगा मुद्रित भाग पृष्ठ सं० १५५ सं० भीरुनरकमरणा

२ - गीतागुप्त गंगा की मुद्रित पृ० १५५ सम्पादक " " "

सुन्दरि सुन्दरि मे कभी रचनाओं में भी पुन्दाकविता की भी नूरि
नूरि प्रकाश की है । श्री कानन्द की मे पुन्दाकविता की जो कभी
नुरा रूप में एकी संयुक्त, प्रकृति मंडन का शिरोधार्य और पुन्दा-
वन धाम के सुख मोहमाया न कल किया है ।

श्री युक्त लाल के रचयिता केवल काशी की
महाकाव्य के शिष्य तथा निम्नादिचार्य से सीखी सीखी के आधार
श्री मद्र देवाचार्य से । आदिशायी साहित्य में यह आदिवाणी
के रूप में सुविज्ञात है । यह पुरोपासना का मद्रनीय ग्रन्थ है ।
इसके पदों की रचना युक्त भीषिकाय है ही में है । श्री
शिरोधार्य सुख, प्रकृतिमंडन, देवाचार्य, यद्यपि सुख, सुखसुख, उत्साहसुख
इन हैं: सुखों का वर्णन हुआ है । श्री राधाकृष्ण का परात्परत्व
वर्णन के साथ उनके हीरा विधान की वादीनिक महत्व से सुनिश्चित
किया गया है । श्री मद्रके सुख (युक्त लाल) कुरानात्मिका
जयवा साध्यरत्ना माला का समीक्षक का ग्रन्थ है । " युक्त लाल " में
में एक ही आभासिक बोध और उन्हीं दोहों के रूप के निरुद्धकरण
के निमित्त माना रागों से सम्पन्न ही ही का कि है ।

श्री मद्र की मे प्रभाव शिष्य श्री अरिचाराय
मे महाकाव्य की रचना की है । इसमें देवा सुख, उत्साह सुख, यद्यपि
और शिरोधार्य सुख नामक पांच सुखों का वर्णन हुआ है । श्री देवा

१ - श्रीका नृप नृप की सुनिश्चित पुस्त (४) सम्पादन - प्रकाशक

२ - का सीधिल सीधिल प्रकट हरि शिरोधार्य निध धाम ।

कभी नानि सीधिल धाम , पुन्दाकन अभिराम ॥

श्री श्री मालिका शिरोधार्य, आदि सीधिल ही सीधिल ।

धाम कभी श्रीका लाल , पुन्दा धाम ही सीधिल ॥

परम धाम सीधिल, का कानन्द नृप पु० ६२० सन्ध सं० ४४, ४५
४० विनोदप्रकाशक माल

सुख और विद्वान्म सुख का कदा मूल्य है। सत्परी मायापन्न
 सामान्य ही निष्पत्तिकारी परम उत्पत्ति भीरावाकृष्ण के सेवा सुख
 का वास्तविक कर सकता है। महाबाणी में सामान्य विद्वान्म
 का कदा गम्भीरता के वर्णन हुआ है। उपास्य उत्पत्ति नामक वीर
 सत्ता उत्पत्ति निष्पत्ति में महाबाणी, कार की प्रति दर्शा है। श्री
 राधाकृष्ण, सत्ता मुन्दापन उत्पत्ति निष्पत्ति में श्री हरिश्चन्द्र के
 निष्पत्ति के सेवात्मक मय का कदापि निष्पत्ति है। ज्ञान, वीर, ज्ञान
 कादि के विवेक में श्री हरिश्चन्द्र के ने परम्परागत स्वाभाविक
 सेवात्मक ज्ञान मैदानेद सम्पन्न की ज्ञानादा है। मायुष्य मक्ति रस
 का यह कदापि मुन्दा है। सर्वे संस्कृत - उत्पत्ति - महाबाणी ज्ञान प्र-
 भाणा का साहित्य दर्शा है।

श्री परशुराम की रक्षाओं का संस्कृत ही परशु-
 राम रामर नाम है दिखता है। परशुराम राम में निष्पत्ति के
 सेवात्मक मय का प्रसन्न उत्पत्ति है। ज्ञान मय का वैशिष्ट्य प्रतिपादन
 वीरवाद, स्वरवाद, सर्वत्ववाद, महात्वादा ज्ञान मुन्दावाद
 का निष्पत्ति हुआ है। यह मुन्दा में ज्ञानक सम्पत्ति उत्पत्ति केने
 की निष्पत्ति है। इसमें ज्ञान विद्वान्म एवं सर्वसम्पत्ति की माय-मायि
 केने की निष्पत्ति है। ज्ञान, वीर, ज्ञान, माया मक्ति कादि के
 विवेक में स्पष्ट, गम्भीर एवं सम्पत्ति उत्पत्ति केने ज्ञानादा है।
 ज्ञान, ज्ञान वीर मक्ति का विवेक विवेक हुआ है। परशुराम
 ने सेवात्मक मय के प्रतिपादन में सटीक उदाहरण दिखे हैं।

श्री गोविन्दहरण सेवाचार्य की बाणी, गोविन्द-
 हरणदेव की बाणी के नाम है प्रसिद्ध है। इसमें संस्कृत -

उत्तमागति, कर्मानुष्ठा, उच्छ्रयान देवा विमान, राधाकृष्ण
स्वल्प वर्णन नित्य विहार उत्पन्न विन्मन तथा वाञ्छुताधिक
मार्त सिद्धान्त का निरूपण हुआ है ।

भक्तिपाठ की स्वामी हरिदास की प्रणति
है । यह एक पर्व की रचना है । इसमें एक सिद्धान्त के पद हैं ।
सिद्धान्त के पर्व में मार्त, क्षान, वेदान्त आदि का वर्णन विविध
हुआ है । भक्तिपाठ रचना का उद्देश्य मार्त एक सिद्धान्त का प्रति-
पादन है । इसमें निम्नार्थीय रत्नपाठना पुस्तक में है । इसमें
हरी माधोपाठना का वर्णन है आचार्यों की वाणी में निम्नार्थीय
सम्प्रदाय की विस्तृत हरिदासी परम्परा के श्री दीक्षकविपुलदेव,
श्री विहारिणीदेव, श्री माधरीदेव, श्री परशुदेव, श्री नारसीदेव,
श्री रक्षिणीदेव, श्री श्रीरामदेव, श्री श्रीरामदेव आदि का वर्णन
की आत्मक पाणिनीय संग्रहीत हैं । हरिदासी परम्परा के अर्थ
आचार्यों की स्वामी रक्षिणीदेव पुत्र " रक्षिणीदेव की की वाणी है ।
निम्नार्थीय मार्त एक एक सिद्धान्त का विवेक बड़ी तरह एवं
प्रांक्त वाचा में हुआ है । श्रीरामदेव देव के शिष्य भिखारीदास
की है " निम्नार्थ सिद्धान्त " की रचना की है । ज्ञानेश्वर का
हामी निम्नार्थ सिद्धान्त के भारी समर्थ में हुआ है । श्री रक्षि-
णीदेव की है " श्री सुनह एक वाचुरी " की रचना की है ।
सुनह एक वाचुरी में श्रीराम पुष्पा, हरी, पुष्पाका, उत्तमविन्मन
के भाव नीचे विस्तार देवों की गिरी हैं । श्रीराम पुष्पाका का
क्याका पुष्पाका का वाचुरी उत्तम के रूप में वर्णन है । निम्नार्थीय
मित्र है ज्ञानानन्द पुष्पाका का वर्णन किया है । इसमें मार्त
जदि ज्ञानानन्द पुत्र छोटे की ४१ पुष्पा का संग्रह है । ज्ञानानन्द

दुःखावली में संक्षिप्त प्रेम चरित्र, दुर्गावली, चतुर्विध दुःख, चन्द्रिका, रंग कवच, प्रेम पदवि, विचार-सार, माया प्रकाश, दुःख कीमुदी, नाम चतुर्कार, श्रिया-प्रभाव, दुःखात्म मुद्रा, प्रेम स्वरूप, मरीचक मंगरी आदि रत्नाओं में निम्नाकीय मणि सह एवं विद्वान् का कर्तव्य सत्य विवेक है।

कविचर दुःखावली में 'मायुष्य हरी' का प्रभाव किया। इसमें नित्यविकारी बीराभादुःख के ठीका वर्णन की मध्य करीबी है। इसमें प्रभाव मायुष्य दुर्गा है पुत्र प्रेम माया देखने की शिखरी है। इसमें निम्नाकी प्रसिद्ध स्थानाधिक देवादेव देवी का प्रतिपादन हुआ है। नित्य विचार सह वर्णन में जिन की मुष्टि निम्नाकीय सह-विद्वान् के आधार पर की ठहर रही है।

जीवकदावली की में 'नित्य सार' की रत्ना की है सह ग्रन्थ में देखादेव वर्णन का संक्षिप्त एवं सा सविन विवेक है। चतुर्विध का निरूपण की सह ग्रन्थ का मुख्य प्रतिपादन है। देखादेव वर्णन का सार इसमें निम्नीकरण सह किया है 'वन्द्यसि हटा' एवं 'मणि' स्तोत्र 'ग्रन्थ' मुनिवि की म द्वारा प्रणीत है। इसमें मणि ज्ञान, वेदात्म, दशात्म-रसात्म का स्वरूप और उपासनासत्तादि का निरूपण निम्नाकीय विद्वान्द्वारा किया गया है। नित्य दम्पति रागादिका का अभिन्न, कल, मरुत्तन के रूप में किन्तु दिया गया है।

वी मायस्ताव वी 'वी मायुषी' में निम्न प्रेम मायुषी निम्न मणि मायुषी तथा शक्तिप्रारम्भ मायुषी की

निर्मित है। निम्बाई सम्प्रदाय में प्रस्थानार्थी का विशेष महत्व है। देवादिवादी निम्बाईवादी आचार्यों ने श्रीमद्भागवत, कृष्णार्जुन पुराण, ब्रह्मपुराण, स्कन्दपुराण, नारदीय आदि पुराणों को विशेष महत्व दिया है। जिन पत्र के प्रतिपादक में उनकी कृतियों का आत्मस्थानानुसार प्रयोग किया है।

स्वरचित्तवैव ने हरिश्चन्द्र यज्ञपूज की रक्षा की जिसमें हरिश्चन्द्रवैव के यज्ञ का वर्णन है। "हरिश्चन्द्र यज्ञपूज" की प्राचीनतम संस्करणों निम्न प्रकार हैं :-

श्री हरिश्चन्द्रहरिप्रिया रूप विनोदी कृपा प्राप्त है ।
श्री हरिश्चन्द्र देव यज्ञ यज्ञ एतत् किञ्चि कर्तव्य ॥
जामि कर्ण, ब्रह्म नामा निधि ही कर्तव्य कर्तव्य ।
युक्त रत्न दाई यह दाई स्वरचित्त मन दाई ॥

"युक्तुत्तम भणितान्त" में वर्णित है नाम कुंठा ५ पैकरी, वे कर्णर कर्णर दावडी ॥ नाम हीर्ण कुंठा १२ कुंठा के पानवान के हस्तम के पद नामा रानरानाभिर्न में वर्णित हैं। उद्योग २२.६४, दो हजार दो दो चौरादी हस्त में।

देव यज्ञ परम्परा सुख, सुनि चौराणर्धे जाति ।
युक्तुत्तम भणितान्त की संख्या हस्तनी जाति ॥

जैसे जाति के दो दोह निम्न प्रकार हैं :-

१ - हरिश्चन्द्र यज्ञपूज स्वरचित्त देव युक्त १

प्रथम बुधिरि की गुरु परमा, वरन वरुण ज्योतिष ।
 ताहु कुमा क कल हई, बुधुत्तव मणिनाथ ॥
 करि करम कान्त ते, बिंका बावरी बाठ ॥
 कपरलिक या नाम को, हो वन वरुण कदाक ॥

“ छीठा विंकावि ” में बीस छीठाओं का वर्णन है ।
 बीस छीठाओं के नाम हैं । — १ - म दिव्या मंजरी,
 २ - ल मंजरी , ३ - रलिक मंजरी, ४ - ल मंजरी, ५ - प्र-
 मंजरी, ६ - म दिव्या , ७ - नित्य विद्या , ८ - रविविद्या
 ९ - रवि विद्या , १० - कूट विद्या , ११ - नाम माधुरी ,
 १२ - नाकुर्य माधुरी , १३ - बुन्दाक माधुरी , १४ - विद्यान्त
 माधुरी , १५ - करि भाऊ माधुरी, १६ - का र-युक्त , १७ - वनेष्ट
 युक्त , १८ - स्वयम् युक्त , १९ - बुधाय युक्त , २० - लोरी युक्त ।

“ नित्य विद्या पद्मावती ” अपनी सुन्दर रक्षा
 कारित्वक दृष्टि से इसमें ज्योतिष की कारित्वक प्रज्ञा परि-
 कल्पित कीती है । इसमें १२० पद हैं । यह प्रौढ रक्षा है । ज्योती
 नामका करिपावित्त ३ और ६ में नाम माधुरी है । किसी जरी के
 रंगीले कीट इनके रंग में ली ली है देखी :-

राज्य रंगीले कीट रंग वरुण रक्षक ॥
 बुध बुध बुधनाथ मन्त्र-वीर न वनाथ मन्त्र ।
 बाव कपरलिक बाव बाव बुधन में गी ॥ टेक ॥

१ - बुधुत्तव मणिनाथ कपरलिकेन पुष्क १

लीढ़े पर एक लीढ़े मारि निशंक के निश्ट ,
 मानते हूँ - यस्पर मैं लीढ़े मुक्त मानक हूँ ।
 रूप रसिक नम निशोर कुंवर नीर स्थान नीर
 कल उरवि नीर यों निशोर करवति रहे ॥

एषा कथा उवाच ह्युवाच ७--

भीर बंदिजा में फिरा में बाबूषीद में
 फिर की लोरी में लीट दिखि ली ।
 के मुर कारन में नरी में मंडु मंडिका में
 मुरली में मिटि रहे मुर लुवा ली ॥२६॥
 पादांबर में प्रिय करि ररि मुर में
 बलिही कृप रूप ररि कैं की ॥
 भीर भीर कैं लुवि ली सुन ल्यांन साथं
 माने लू के मान की रकार लुप में की ॥

साहित्य-दृष्टि से इसकी समीक्षा उच्च-गोष्ठि की है ।

१ - विद्या विस्तार पदावली - १५ श्लोकिय पृष्ठ ८५५

2- " " " " " " " " WE-FO-A3

चतुर्थ अध्याय

रूप रसिक देव के दार्शनिक सिद्धान्त

सुख - दुःख

स्व रसिकीय के वादीनिक सिद्धान्त

निम्नार्थ निम्नार्थ के वादीनिक सिद्धान्त

निम्नार्थ का के अनुसार स्व के तीन भेद हैं - विषय, व्यक्ति तथा क्रम । क्रम सर्वोच्चमान, सर्वत्र, अत्युच्च, विषय से पूर्ण है । क्रम की भाव का उपादान कारण है और क्रम की निमित्त कारण है । यही सर्वोच्च तथा कृति का विषय है । यह अविन्न निमित्तोपादान कलाका है । क्रम परात्माशक्ति, बीजात्मा शक्ति तथा मानसियाशक्ति, तीन प्रकार की शक्ति में रही बाकी अन्य शक्ति से पूर्ण है । यह स्वाधिष्ठित सभी शक्ति की निमित्त करके काकाकार में सभी आत्मा को परिणत करता है । क्रम की शक्ति का विषय ही परिणाम का स्वयं है । यह माद्री के वह वस्तु की दृष्टि के समान है ।

निम्नार्थ के अनुसार की कृष्ण की परलोक है । ये तीन हीन कल्याणगुण की वाति, अत्युच्च समुच्च में कीलका पर है । हरिध्यास के की वह लोकी के भाव में क्रम की बीच कावे हर की कृष्ण की शक्ति अत्युच्च और अत्युच्च तथा अंत और अंतोत्तम से अत्युच्च कावे है । इसलिए उसमें वेद नहीं है । यह बीच कावे है निरुपाण है इसलिए वेद भी है । कृष्ण की शक्ति अविन्नत तथा अन्य है । ये देवर्ष तथा मायुर्व दोनों के कावे है । उनकी 'रमा' अपनी तथा 'मृ' शक्ति उनके देवर्ष स्व की

१ - निम्नार्थित्य वह लोकी , हरिध्यास के - ५० २०

२ - " " " " लोकी १

३ - " " " " ५० २

व्यक्तांगी है। गोपी और राधा उनके प्रेम और भावों की व्यक्तांगी है। मनवान मुक्त, गन्ध, योषी, जीव, कुपान्ध तथा स्वप्न सत्तावान है। श्री हरिव्यास देव का कथन है, "उनका सच्चिदानन्दात्मक विग्रह है कुपान्ध में नित्य स्थित है। कुप में वे स्थित रूप हैं और द्वारावधि में वस्तु हैं। वे सर्वज्ञ, सर्व हेतुत्व पूर्ण, सर्व कारणात्म, सर्वज्ञ रित्य - सौहार्द, सुखता, करुणा आदि गुणों के रत्नाकर तथा महत्त्वपूर्ण है। निम्नार्क सम्प्रदाय के उपास्यदेव कुपकृष्ण हैं जो अपनी प्रेम और भावों की व्यक्तांगी श्री राधा तथा अन्य कालादिवी गोपी - स्वरूप शक्ति हैं परिचित रखी हैं।"

१ - निम्नार्कसदृश स्त्रीकी - हरिव्यास देव पृ० ३८

२ - कुपान्धुवाविशिष्ट कुपान्धस्वरूप धर्माचार्यनीय निवारा हकान्त नाथन भवणादिभिरनुकूलनीय नित्यत्वः ।

निम्नार्कसदृश स्त्रीकी, हरिव्यासदेव पृ० ३२

जीव

जीव कणु परिमाण है और स्वा है । प्रत्येक शरीर में जीव निम्न निम्न हैं तथा प्रत्येक जीवन कल्प और मोक्ष की योग्यता है मुक्त है । जीव सर्वदा मनमान के कर्त्तव्य है । संसार प्रेरक है तथा जीव प्रेरमान है । जीव कल्प हैं । ज्ञा संती और जीव वेद है । जीव सर्वदा मनमान के कर्त्तव्य रखते हैं । जीव आदि पाया है मुक्त है । निम्नांक दस श्लोकी में जीव दो प्रकार के कहे गये हैं - एक मुक्त जीव तथा दूसरे बद्ध जीव । हरिभ्यासदेव ने कभी कभी पाप्य में मुक्त जीव दो प्रकार के कहे हैं, नित्य मुक्त और धाक्य मुक्त । निम्नांक पात्र में दस प्रकार जीव तीन प्रकार के हैं - बद्धजीव, मुक्त जीव और नित्य मुक्त जीव ।

बद्ध जीव -

आदि की रनिगी विधा है बद्ध जीव आत्मा तथा आत्मीय वस्तु का देव मनुष्यादि देव में तथा उसी सम्बन्धित वस्तु में का विनिर्माण करता है ही उसे बद्ध जीव कहे हैं । बद्धजीवी की कल्पना में सारतम्य है । संसार कोशाग्नि के विनाश होने पर मुक्ति होती है । बद्धजीव के कर्त्तव्य मार्ग का अनुसरण करने पर आत्म में मनमान की बद्धकृता कल्प प्रकाश प्राप्त होता है । मनमान की कृता के कुछ स्वरूप सब जीव मुक्ति पाता है । निम्नादित्य दशश्लोकी की पात्र्य में हरिभ्यासदेव ने मुक्ति दो प्रकार की बताई है ज्ञान - मुक्ति तथा सम्बन्धीमुक्ति ।

१ - निम्नादित्य दशश्लोकी हरिभ्यास श्लोक १

२ -	॥	॥	॥	पृ० ५
३ -	॥	॥	॥	श्लोक २
४ -	॥	॥	॥	पृ० १५
५ -	॥	॥	॥	पृ० १२

जो निष्काय की तथा विविध पुस्तक वर्णनादि करके स्वर्णादि लोकी के समान ठोस हुए सत्यहीन में स्थित होते हैं और प्रत्य-प्राप्ति पर जो में सामान्य लाभ करते हैं वे पुन मुक्ति पाते हैं। भवणादि भक्ति है जिसका संसार बंधन टूट गया है और जो भगवान की कृपा के भारी हो गये हैं वे सहीमुक्ति में हरिपद या कृष्ण लोक में जाते हैं। निष्काय - सम्प्रदाय में भगवद् देवा भक्ति तथा उनकी कृपा द्वारा प्राप्ति मुक्ति को हटकर कहा है। हरिभ्यासदेव ने परब्रह्म भगवान, श्रीकृष्ण के दो स्वरूपों के अनुसार भगवान के लोकादि प्राप्ति की युक्ति को दो प्रकार का माना है एक ऐश्वर्यानिन्द्य प्रधान दूसरी ऐश्वर्यानिन्द्य प्रधान। जो बीच निष्काय मान है भगवान की देवा तथा उनकी प्रेम करते हैं भगवान की देवा के आनंद की मुक्ति मिलती है। जो बीच सत्ताम भक्ति करते हैं उनकी भगवान के लोक में ऐश्वर्यादि का आनन्द मिलता है।

भगवान

भगवद् सामीप्य लाभ करने है मुक्त बीच के कृपा भी भगवान के समान हो जाते हैं। बीजात्मा को नित्य है, उसका विग्रह भी भी ही नित्य है। कर्मादि कर्मों की अवस्था में बीच की नित्य देव वापुस रहती है। जब बीच को भगवान के प्रसाद है उनका सामीप्य प्राप्त हो जाता है जो वह प्रकृति के कर्मों से मुक्त होकर अपने नित्य चिह्न देव की प्राप्ति करता है। भगवद् प्रसाद द्वारा प्राप्ति देव निर्बिकार तथा भगवान की देवा के योग्य होती है।

नित्य चिह्न बीच तथा संसार दुःख है मुक्त भगवद् स्वरूप मुक्तादि का सर्वत्र अनुभव करने जाते होते हैं। परब्रह्म-सत्तामि नित्य चिह्न कर्मों नित्य मुक्ति बीच है। सत्तामिनिष्ठ मोक्षियों को उक्त प्रकार का अनुभव मिलता है परन्तु उनका नित्य चिह्न बीबी के कृत्य सदाकाहीन तथा स्वाभाविक नहीं होता।

१ - निष्कायित्व सत्तामिनी की हरिभ्यासदेव पृ० १३

प्राकृत

तीन गुणों का वाक्य तत्त्व प्रकृत है। यह अपने कारण रूप में नित्य तथा कार्य रूप में अनित्य है। कारण अवस्था में यह तत्त्व माया प्रमाण कथा कथक कथावा है। मय तत्त्व है और ब्रह्मण्ड तत्त्व कथा रूप प्राकृत का कार्य रूप है। तीनों प्रकार के वस्तु की सदा मनमान की कहेता रहती है। उनकी स्वभाव सदा नहीं है। प्रकृत नित्य काकावीन तथा परिणाम आदि के विचार की छेने बाकी है। सत्, रत् तथा तत् इन तीन गुणों के द्वारा प्रकृत, वात्सा की देह, देहिनी तथा नन, बुद्धि आदि रूप में परिणत होकर जीव का कथन करती है। प्राकृत का यह कार्य जीव की मोक्षा का प्रविवायक है। यह त्रिगुणात्मिका है।

अप्राकृत

वस्तु तत्त्व का अकृत अप्राकृत के विस्तृत तत्त्व है। यह प्रकृत तथा काठ में कथन तथा प्रकृत राज्य के बाहर स्थित है। यह तत्त्व पूर्व के सपान उल्लेख है। इसी अप्राकृत तत्त्व के नित्यप्रकृत विष्णुपद, परम ध्यान, परम मय, ब्रह्मण्ड कथन नाम हैं। यह मनमान के संकल्प मात्र है जीव रूप छेने बाकी है। मनमान और उनके वाक्य नित्य तथा मुक्त जीवों के मोक्ष का उपकरण तथा उनके विचार स्थान के रूप में जीव रूप यह तत्त्व के होती है। कथन प्रमाण है कथन जीवों के कारण यह परिणाम आदि विचार है भी रहित है।

काठ

काठ सर्वदा मनमान के लीन है । यह उत्पन्न नित्य तथा विष्णु के लीर पुत्र, भविष्य तथा वर्तमान कादि व्यवहार का हेतु है । काठ कु-लत्न का सहायक तथा प्राकृत पदार्थों का निदानक है ।

मुक्ति छान

मल मनमान की उपासना जिस माय से करता है मनमान मल से उही माय से मिलती है । ये अपनी अवस्थित शक्ति से सब में मल के कष्ट दूर करने पाते हैं । निम्बार्कशिर्ष का वडाडोकी में कल है कि कृपा, शिवादि से मन्त्रिक कृष्ण के कारण विन्द की होकर अन्य भाव मनुष्य की नहीं है । श्री हरिश्चायके का कल है कि केवल कृष्ण ही - उपास्यके हैं । निम्बार्क मल में हस्तर कृपा का कल महत्व है । निम्बार्क-शिर्ष ने वडाडोकी में कहा है कि मनमान की कृपा से ही प्रेम-स्नान-मन्त्रिक केन्द्रादि माय उत्पन्न होती है । मनमान की कृपा से ही प्रेम रूपा शक्ति मिलती है । अन्य मल तथा महात्मा द्वारा की जाने वाली शक्ति की प्रकार की होती है । सात्वत रूपा तथा मदा रूपा । मनमान की कृपा का फल मनमान की शरण कल उनके प्रति प्रेम-प्राप्ति कल है । प्रेम की कृपा का फल प्रेम की शरण प्राप्ति छान करना है । मनमान की शरण मिलने के बाद मल शक्ति रस का आस्वादन करता है । मल शक्ति के उपास से मनमान के प्रति प्रेम कल रति मिलती है । इस सम्प्रदाय में शक्ति पाँच भागों से पूर्ण है - ज्ञान, वास्तव, सत्य, वास्तव्य तथा उज्ज्वल ।

ज्ञान के उपास मल शक्तिवादि हैं । वास्तव के रक्त का पत्र, उज्ज्वल वादि हैं । सत्य के भीदामा, सुदामा, अर्जुन हैं । वास्तव्य माय के मदीया मन्त्रादि हैं । उज्ज्वल रस के मल शक्ति लीर रावा है । निम्बार्क सम्प्रदाय में उज्ज्वल कल मल रस की उत्पत्ति की गई है ।

श्री निम्बाकधिर्य ने ' वल्ल लोकी ' में सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाली श्री कृष्ण के वापस में विराजित तथा सखीं छविर्वा है केविल श्रीराधा केवी की स्तुति श्री कृष्ण की स्तुति के साथ की है ।
हमारे प्रवीत होवा है कि श्री निम्बाकधिर्य ने कुछ उपासना के साथ मन-
वान की माधुर्य तथा प्रेम छवि स्वरूपा राधा की उपासना पर विशेष
कल किया है । ये राधा ही वल्ल कामनाओं को पूर्ण करा सकती हैं ।

निम्बाई मय में वल्ल श्री राधा-कृष्ण की मल्लि देवा
के साथ साधु - निम्बा कादि कुछ प्राप्ति के ३२ विरीवी लपरावी की
जानना काँखी और उनके यचना चाहिये ।

१ - वल्ल तु वामे कृष्णमाधुर्य मुदा, विराज माना मकुर्य लोमानु ।

सखी सखी, पारिणीकित्तां तथा लपरीय केवीं सखीष्ट कावदाम् ।

निम्बादित्य वल्ल लोकी, लरिम्बाहवेय लोकि ५

२ - निम्बादित्य वल्ल लोकी, लरिम्बाहवेय पु० ३६

कुछ ठीकाओं का व्यावहारिक मूल

सबसे ठीका है ही कि उत्पन्न का प्रत्यक्ष ठीका है । ठीका ही प्रकृति की है वास्तविकता, प्राविश्यादिकी और व्यावहारिकी । वास्तविकी ठीका का एक प्रकार का व्यावहारिक रूप है । हाथ की कल्पना, कल्पित और वास्तविक में निर्धार की कल्पना में ही कुम्हार की निम्न ठीका का हाथीकार करने में लगे हीका है । भीषण के निम्न कुम्हार में हीने बाँधी ठीकाओं का ही प्रविश्यादिकी रूप में हीका है उन्हें ही प्राविश्यादिकी ठीका कहा जाता है । कुम्हार में व्यावहारिक रूप ही हीने बाँधी ठीकाओं व्यावहारिकी कहाती है । अन्त में हीने बाँधी ठीका व्यावहारिकी है । भी कि हाथीकार और हाथीकार के रूप में हीने बाँधी ठीकाओं "यह हीका है । कुम्हार में हीने बाँधी ठीका कहा है । निम्न भीषण में हीने बाँधी ठीका हीर और कहा है अन्त में हीने बाँधी ठीका है । निम्न प्रविश्यादिकी मात्र कुम्हार की वास्तविकी ठीका में हीका जा कहा है । वास्तविकी ठीका का हीने रूप ही व्यावहारिक ठीका है । अन्त में हीने बाँधी ठीका में हीने रूप के वास्तविकी में ही ही प्रविश्यादिकी मात्र कुम्हार के निम्न भीषण में हीने कुम्हार की निम्न ठीका के प्रविश्यादिकी के रूप में वास्तविकी ठीका की ही कहा जाता है । यही कुम्हार में हीने हीने ठीका का विज्ञान है ।

योग दर्शन के अनुसार शरीर में ७२ ह्वार
 नाडियाँ हैं जिनमें बुजाया नाड़ी शरीर के मध्य में स्थित है जहाँ
 वात वृद्ध है। यह ह्वर के नीचे कुक्षार वृद्ध, लिं के सम्मुख स्वा-
 विष्ठाव वृद्ध, नाडि में नाडिवात वृद्ध, कृष्ण में कटाव वृद्ध, रंठ
 में विशुद्ध वृद्ध, नु मध्य में काहा वृद्ध और रंठ में सवहार वृद्ध
 है। नाडि के नाडिवात वृद्ध में पराशक्ति की स्थिति बताती है,
 किसी कीन अवस्थामें है। पराशक्ति, मध्यमा और पर वरी।
 हमें के उष्मा ज्ञान और प्रिया कही है। इस ज्ञान, उष्मा और
 प्रिया वर, पित और वानंद के हेतु है। समाधि में कृष्ण वृद्ध -
 पित और वानन्द की अनुभूति होती है। निरंतर समाधि की
 अवस्था में पराशक्ति है पराशक्ति उष्मावानंद की समवेत स्थिति
 हो जाती है। इस स्थिति में इस भिन्न होकर की समान और
 समान होकर की भिन्न है। यही योगदर्शन का वैदिक सत्य
 है। योग दर्शन में नाडिवात वृद्ध में वृद्ध की स्थिति कही है।
 जो वृद्ध की उष्माव वृद्ध पित वर में वर वर की है वो कृष्ण
 वर कारण होता है जो वानन्द वर कही है। उष्माव वानन्दा-
 नुभूति की ही एक मात्र अवस्था साधुनुभूति कही है। उष्माववादी
 उष्माव वर की प्रानुभूति मानते हैं। उनके अनुसार वृद्ध की वृद्ध
 मिलने है जो वानंद वर प्रानुभूति होता है जो वर वर वृद्ध की -
 उष्माव वर की वर है।। वृद्ध की वानंद वर वर प्रानुभूति
 कराने वाली प्रिया की वर प्रानुभूति करना की वर योग
 है।

१ - श्री विद्याका केन्द्र पुस्तक रत्न वाचस्पति उचितकृष्ण -
 गीतवादी।

निम्नाकर्षण के अनुसार कई गोठोपवास में होने वाली किन्हीं चीजों की वह उद्धार के ही अंतर अन्तर कला भाषित । अन्तार कृष्ण के ही द्वारा बुद्धिमान रूप से विधिधारा कृष्ण प्रकाशित होती है उसे उलट कर ऊपर की ओर प्रकाशित करने से वह राधा रूप ही होती है । अर्थात् ईश्वर राधा वह होने के कारण उदीयति जाता है और - उदीयति प्राप्ति कृष्ण के लिए राधा के समान आकर्षण करना चाहिये ही निश्चित होता ही जाता है । राधा की पुरुष भावना स्वयं राधा भाव का आकर्षण करना वांछा प्रजाती है । प्राण-वायु को कि पराधीनता का ज्ञान है उसे राधा माने है इन्द्रिय साठ हुंनों वाहे बुद्ध्यात्म में है अन्तर बाधुनिक में लक्षित करना ही उचित - योग की परम्परा व्यवस्था है । प्राण के समीप द्वारा प्राणपति के पर्याप्त में ही अन्तःकारिण होता है उसे भावना प्राण पुष्ट की जाता है । यह योग की वास्तव भाव की अन्तर्भाव है । यह परमात्म की वाक्य की वास्तवता को ही पुष्टि होती है यह अतिशय की मन्त्रावस्था है । यह अन्तः सृष्टि अन्तःकरण पर जिस समय स्वतन्त्रता का कुरी है अन्तर निम्नता और उस निम्न से उत्पन्न वह का आकर्षण होता, वह स्व है सदा की पुष्टि होता जिस समय की प्राप्ति है । अन्तःकरण का निम्न होकर अन्तःकरण की नींव में केला और उस पिता से वास्तविक स्व की प्राप्ति होता ही योग्यता है । जो कि स्थिति है । प्रियात्म भाव में अन्तःकरण बुद्ध्यात्म में प्रियात्म प्रियत्व के वास्तविकता होने पर अन्तःकरण में प्रेम का अन्तःकरण होता ही अन्तःकरण व्यवस्था है । प्रेम वह दोनों का एक कुरी है अन्तःकरण होकर अपना करना मन्त्र-वाक्यता है ।

कुम्भ के जाला कु में कल के जालर का मांस
 पिण्ड के बी धुम्भुमा नाडी पर स्थित है । यह मांस पिण्ड के चिरा
 होने के कारण पुरित्व कहा जाता है । यह पुरित्व के मध्य में कहा
 है, जहाँ में उपाधना ध्यान करने का विधान है । धुम्भुमा नाडी
 है सम्बन्ध ७२ हजार नाडियों की कितनी नाडियाँ कहा जाता है ।
 कितना जाला धातुओं वाली या उपकारी कितना कहा है । इन कितनी
 नाडियों के अनेक रूप होते हैं । धुम्भुमा नाडी है विशेष सम्बन्ध
 कुरित्व होने नाडी कु, कल, मलिन्यनी, कितना, धुम्भुमा,
 कलिन्यनी, धरन्धनी, जेनी, नांवारी, कल, धरित्व कितना
 कितनीवारा कितनी १२ नाडियाँ है । ये धुम्भुमा की विशेष स्थिति
 नाडी है । कुम्भ के जाला कु में कल कल का कल (हीजा)
 कल का कल है कितने मध्य में है : कल है । मध्यकाली कल का
 रूप कु है । यह कल कल कल के हीजा कल में कितनी प्रमाण नाडी
 का सम्बन्ध है जहाँ है इस कल का संवादन होता है । हीजा कल
 की नाडी में मुख्य प्राण कल का कलानी निवास है, यह प्राण की
 कलानी नाडित्व है, बी कि कल का कल रूप प्रमाण इस कल है ।
 धुम्भुमा नाडियाँ कलानी का है ।

उरीर की मोठक कलानी के पूर्ण संवादन है
 कलिन्यनी कलानी होने के कारण कलिन्यनी कलानी ही जाता है, जहाँ
 कुम्भ के जाला कु का संवादन होता है । कलानी की कलानी कलानी -
 कलानी कु का कलिन्यनी कलानी है । बी कलिन्यनी कलानी कलानी है कलिन्यनी -
 कलानी में बी कलिन्यनी कलानी कलानी कलानी है कलानी कलानी की -
 कलिन्यनी कलानी का कलिन्यनी कलानी है । कलानी कलानी कलानी

जो उनके द्वारा का वर्ण माना गया । यह के हः शीर्षों के उनकी
 स्वरूप स्थिति के स्वरूप वर्णनमान कहे हैं । मन्वान की निम्नार्थ
 के स्वरूप की प्रस्ताव उनके द्वारा प्रस्तुत स्थितिमान के आधार पर
 ही की गई है । श्री निम्नार्थमान के सिद्धान्तानुसार संसारिक
 रति की ही यदि मन्वान रति निम्न माने श्री निम्न की कालिक
 प्रत्यक्ष भाषाओं की प्रस्ताव है कीव सत्य है । वात्स्यायन का यही
 प्रत्यक्ष सिद्धांत है । जो उनके ही वात्स्यायन भाषाओं के प्रस्ताव पर
 उनके यही वात्स्यायन मान है । यह रति के मान है । श्रीव ज्ञेय रति
 की रति विन्दु की प्रस्ताव पर रति वर्णनमान ही है । इस स्थिति
 है ज्ञेय-ज्ञेय भाषाओं की ही का सत्य है । यदि प्रत्यक्ष के वात्स्यायन
 सिद्धांत में वात्स्यायन संसारिक प्रत्यक्ष भाषाओं की रति ही ही माने श्री
 प्रस्ताव ही है । निम्नार्थमान के ज्ञेय प्रत्यक्ष ज्ञेय-ज्ञेय में प्रस्ताव
 द्वारा ही रति माने रति का ही प्रस्ताव । उनकी वात्स्यायनभाषा
 ही का वात्स्यायन ही ही रति सिद्ध ही प्रस्ताव है । श्री
 वात्स्यायन की ही रति के नव वात्स्यायन की प्रस्ताव का प्रत्यक्ष प्रस्ताव
 ही है ।

१ - श्री निम्नार्थ मान्य प्रत्यक्ष रति वात्स्यायन प्रस्ताव -
 वात्स्यायनी ।

राम रतिकदेव का वास्तविक फल

राम रतिकदेव ने जूट ही कहा, लज्जत और अभित्य कहा है ।
भीकृष्ण ही साक्षात् परब्रह्म, परमेश्वर, हरि हैं, जो हज्यामपु पारण
कर भूतल पर अवतीर्ण होते हैं । बात उनकी वास्तविक है । गायनारण्य
में वे जगत् रूप में वे ही वास्तव हो रहे हैं । यद्यपि उनकी हज्जा अभिजा
वीयात्मा ही है, जो उनके चिह्न है उत्पन्न हुई है । देव की संस्कार है
मिन्न नहीं कहा जा सकता । और और उनकी पुत्री के समान ही जूट
है लज्जा सम्पन्न है । एक और लज्जा का, देव और देवी का तथा लज्जा
और देवी का जो पारस्परिक सम्बन्ध है वही देव और देवी है ।
जूट और देव में यह मैदान सम्बन्ध ही मान्य है ।

यदि जूट नामक भीकृष्ण ही एक एक होकर परापर
विश्व के रूप में प्रकट है । जूट नामा है । किन्तु रूप में वह देवारी की

-
- १ - लज्जा भिन्न हरिभिः प्रकट रूप परमेश - हीताविर्भाव पृ० ४६।४
 - २ - हीट पुन्वाका में लज्जा जन्मात् मित्र पौर । .. ४६।५
 - ३ - वास्तव में ज्यों पुरी, य जगु न्यारी नांवि । .. ५८।३०
 - ४ - लज्जा पीके मित्रि देव्य ही, देवक नावापि पारि ।

मित्र नहींकर मिन्न है, एवं दिष्टांत विचार ।। वही पृ० ४८।२६

- ५ - लज्जा वह मिन्न है, ज्यों जूट जूना पुन ।

देवा हि न्यारी है, है एक ही स्वरूप ।। वही पृ० ४८।३१

- ६ - वास्तव लोटि जूटां में न्याय वस्ती पुन ही ।

वही पृ० ४६।३

यही है। जीवात्मा उसके उस स्वरूप में छान होकर ही परमानन्द की अनुभूति करता है। जीव परमात्मा की कृपा से ही उसके स्वरूप की प्राप्ति होकर विद्वानन्द का कल्याण है। विद्वानन्द का ही बिन्दु बिन्दु रूप में प्रकट है। यह उस रूप और नियन्त्रा है, जीव विद्वान् है। यही विवेक है। कर्म और ज्ञान की प्राप्ति जीवात्मा परमात्मा से मिलकर एकमेक ही जाता है। अतएव ज्ञान और जीव का यह वैवाचिक सम्बन्ध ही मान्य है।

अतएव, वही वाच्य एक होकर भी अनेक प्रकार से छिटा दिखाव कला है। यह एक है जो और दो है वाच्य में परिणत हो जाता है। तद्वर्तियों उनका दृष्टान्तार्थ स्था - जीवात्माएं हैं। जीव की कृपा की काम लोकर दृष्टान्तार्थ छिटाएं बनतूत जाती रहती हैं। "विष्णु मातुर्गत्त" के ज्ञान में ज्ञान ही प्रकाशित हो रहा है। ज्ञान, विष्णु, श्रीगोविंद जी ज्ञान के दैर्घ्य से ही छिटा रहते हैं और उन्हें भी यह विष्णु मातुर्गत्त से निदान्त रहित है। श्रीगोविंद पुरुष, तत्त्व विष्णु के हस्त -

१ - वादि सहेठी कुरवा, सोठ वाठ प्रकार ।

विश्वेष्टे सुख स्वयं है, वीर्य र सुखार ॥ छिटा विवेकित पृष्ठ ६६

२ - विद्वानन्द का काम निज, विद्वानन्द का छाव

विद्वानन्द का लक्ष्यही, देखें देखें रूप रसाठ ॥ यही पृष्ठ ७८:३२

३ - ये विवेक वादि जो बसो वादि ही नाहि । यही पृष्ठ ७८:३०

४ - एक अनेक प्रकार है, देख्य सुरत विचार ।

सर्वपरि दृष्टा शक्ति की, वाच्यय यही जगार ॥ छिटा विवेकित पृष्ठ ७

५ - स्व मातुर्गत्त प्रकाशित, कलाकपुरी पुरु । " " रसर

६ - श्रीगोविंद दैर्घ्य के, स्व में रहे वधान ।

कव निर्यो पावे कहां, बाहे बसुत जन्मराय ॥ यही पृष्ठ ३

नारायण हैं, वे भी एक नित्य विहारी मूलभौतिक श्रीकृष्ण के अंत
हीकर विद्यमान हैं । श्रीकृष्ण अवतारी हैं नारायण कादि उनकी
विभिन्न अवतार हैं । नरावर विश्व परब्रह्म परमात्मा श्री कृष्ण
से प्रकट होकर उन्हीं में समा जाता है । इस और चिह्नित का यही
मेवावेद सम्बन्ध है । एक अक्षर अक्षर सत्य ही कीटि कीटि प्रसफाड में
ऐश्वर्यामी छोडा का बिस्तार करता सुभाक्क अखिल विश्व के युक्त,
पावन और संसारकर्ता के रूप में नाहित हो रहा है । पूर्ण ब्रह्म
परवत्तर श्रीकृष्णाकीं हैं, नारायण कादि अवतार उनकी कैयें हैं ।
ये एक हीकर भी प्रकट और प्रकट हर हे छोडा दिशांकते हैं ।
सदा सनातन एक हूँ, अविद्यामन्द स्थान परमात्मा श्रीकृष्ण की
अनी काव्य आकाशज परिपूर्ण होकर वरत्तपर विश्व में व्याप्त
है । सम्पूर्ण विश्व इन परात्पर ब्रह्म की लोकार्ति है ही अपना
रहा है । दीवारवा उनकी दम्बर शक्ति के अनुसार ही अनधिक
जीवन के तैल मेहरक-दे-+ लेखा है । पाथाकुव होने से जगत का

६ - तादि पुरुष्य वाचोऽस्मिन्नेव विश्वे जीवाय ।

भारतमध्य किसी कपड़े जिनमें, नारायणा है नाम ॥ यही २४१३

२ - संकल्पना व्यक्तार्थ है, परि परि भाव्य की है ।

हम कहते हैं प्रकट है, हम कहते हैं भी जीवन ॥ पृष्ठी २५

३ - नव कीटा ऐलमरी की, जैटि जीटि कूआम्ह ।

करवर्षे महर्षेः परमार्थे, एके वापि जगन्तः ॥ पृष्ठी २२ । ६

४ - श्री गणेशाय नमः । श्री गुरुभ्यो नमः । श्री

५ - है प्रजार करि करत है, जगदा जगद विचार । यही रहस्य

1 - UPTA BHARATIYA UCHHAT, BHARATIYA BHARATI

कान्य कौत सुन श्री, बुद्ध विधि न विवृणु ॥ श्री. रत्नाम

प्राण ही मायावी है, जिसमें जीवात्मा ज्ञानात्मका है कारण मुझ
मटका रहता है । यही दिन के उपाधि का उक्त है ।^१ श्रीराधाकृष्ण ही
परात्पर कृष्ण है । उनकी बावजूद कृष्ण और जाना ऐसा नहीं रहता ।
जात्म ज्ञानी विज्ञ प्रलय ही इनके रहस्य को समझते हैं^२ । अतः -
प्राण्ड में परिध्याप्त इत्यादि शब्दों की इनके परात्परत्व की
विविधता कर रहा है ।

अपरिचित के श्रीकृष्ण ही साक्षात् कृष्ण और
जादीत है । मैं अपनी दृष्टा अतः ही संसार में फूट होती है ।
परात्पर विश्व उनकी में समाविष्ट है । मैं सर्वथा ज्ञाना है ।^३ अतः
उनकी वात्सल्य है ।^४ मैं अतः कृष्ण के विविधता, भक्ति के छिद्र

१ - दिवस उदारी यह जी, कामाधि विधि और ।

विज जन्मा विस्तार की, कृष्ण ही और ॥ टीका पितृति २५।२१

२ - राधाकृष्ण राधाकृष्ण समझी ही है ज्ञान ।

पार्थ पर और कृष्ण समझी ही है ज्ञान ॥

३ - अपरिचित का का नामन ॥

नित्यविहार पदावली ५७।१

अतः अतः रक्षा पुरि प्राप्ति ॥ नित्यविहार पदावली ७५।७७

४ - ज्ञाना की वादि ज्ञान का नावही । कृष्णत्व मणिनाथ ५०।१४।५

५ - वादि कृष्ण की मावही है, वाजी परमकिन्नर ।

अपरिचित का के विज्ञान, किन्तु कीनी विस्तार ॥

कृष्णत्व मणिनाथ १४० । २२०

अन्तर धारण करने वाले, निमग्नता के द्वार स्वरूप है ।^१ बीच
रसस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति कर प्रपंचात्मक बात से मुक्तकार या
जाता है । वह कृपाकण्ड है मानिक संसार में रहता हुआ भी माया
द्रष्टव्य नहीं होता ।^२ फेर भी उस कृपा को भवि - भवि तथा ज्ञान
अन्तर कहते हैं । साक्षात् ज्ञान की समाप्ति में भी वह ज्ञान्य है ।^३
वह परम प्रसादान, पूर्ण प्रसादान, सम्पूर्ण बीबी की बीबन देने
वाला निश्चिन्त हीलावी का विस्तारक^४ नित्य सनातन, अन्तर और
अन्तर है ।^५ वह अन्तर - अन्तर निराकार का अन्तर तथा अन्तर
के दुःखों का अन्तरकरी है ।^६ निगुणात्मिक माया परमात्मा

१ - अन्तर कण्ड अन्तर कण्ड अन्तर अन्तर के ।

अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

निमग्नता के द्वार स्वरूप की अन्तर । अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर
२ - अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

३ - अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

४ - अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

१ - १५ - ६

५ - अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

६ - अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर के ।

के चरणों की भरी बनकर रखी है । जीव परमात्मा की कृपा से उसके
 उस रूप को प्राप्त होकर परमानन्द की अनुभूति करता है । संसार बंध
 सुखर है । बिना जीव की इस संसार जगत् को पार करने में असमर्थ है ।

इस रहस्य केने राधा कृष्ण, सही कृष्णार्जुन और
 नित्य विहार वर्णन में वेदात्मिकादी दृष्टि करना है । श्रीराधाकृष्ण
 की अष्टक अष्ट परात्मा है । सही जीवात्मा है और नित्य
 कृष्णार्जुन काव रूप में प्रतिष्ठित है । नित्य विहार उस ही जीव का
 अर्थ है । परमात्मा है एकेश्वर होने का नाम यही वाचन है । ज्ञाना-
 त्मका वादा है वाच्यता के ब हीनर मति है विमुक्त रत्ना है ।

१ - माया ज्ञान प्रसूतिका वासु चरण की दास । यही ८२:१

२ - २ प्रनित्यारि प्रीतिमां बन बन बनती है कीर्ति है ।

बनती कृपा कृपा है या कृष्ण रूप की पीर है । यही ५० २०

३ - बंध कृष्ण है संसार बंध हुए तब ही जीव ही है । यही ५० ३८

४ - राधा हरि हरि कृपा है, वैष्णव विपिन विहास ।

नित्य वाचन अष्टादश श्री, वाच्यो परम निवास ॥

हरिकृपास बसन्त ५० ३१ १८

५ - सदा सर्वदा हर हर युक्त रूप में वन्द्य

६ - नन्द रूप हरि कृष्ण नित्य कान्त कृष्ण के दास । यही ८२:२

७ - नित्य विहार अष्टक बंध ही कृष्णार्जुन वाच । यही ३२:१०

८ - नव निरुक्त कृष्ण कृष्ण विहार, राधा नृपार वाच । यही ३१:१०

कम रसीपास की वस्तुओं की ओर झुकाव न होकर एक मात्र
भी राधाकृष्ण युगल के जीवन हाथों की ही बलिदाना करत हैं^१।
एक ही जानन्द मय कल राधा, कृष्ण, पल्लवी और कुन्दावन^२
का बार वर्षों में ^{विशाल} विकास देता है। उनके अभिन्नता और निष्ठा का
अभिप्राय है। अति वे निरानन्द अभिन्न होते हैं जो सभी निरानन्द
निम्न। नाम और धर्मों तथा मोक्ष और मोक्ष की यह जानन्दमय
मोक्षमय बाधा। दुष्ट सर्वथा मान्य है।

महान श्रीकृष्णकृत के वरणाश्रितियों की सेवा
होकर अन्य कोई उपाय नहीं है। वे कल्याण, अत्यात्मता, समस्त
पूर्वों के उत्तर होते हुए भी अपनी प्रकृति माया से प्रकट होते हैं। वे
जानन्द स्वयम् हैं। प्रियतमा राधा उनकी आशुविनी शक्ति है। भुक्तियों
में जो "सो वे सः" अष्टिदानम् का एक स्वरूप परब्रह्म का प्रति-
पादन किया है वे श्रीकृष्ण ही हैं। वैदोपनिषदों में श्रीकृष्ण के
परम ब्रह्म रूप का गुणगान हुआ है। योक्विद नाम है ही वे जाने
वाले हैं।

१ - काविकी काव की ठीका स्वाकृति की का वीथन रैन किया है।

श्री हरिप्रिया वरणाश्रु - पृ० १५। १०

विष्वादि सम्पति सेवत है सुख सम्पति के पुत्र की रूप धारि

पृ० १५। १०

२ - परम अष्टिदानम् का भी कुन्दावन नाम।

सम्पति सुख सम्पति अर्थात् श्री हरिप्रिया वरणाश्रु ॥ - श्री हरिप्रिया -

३ - पुनः कल्याण बलिदानि का एक वेदः है पुरि । ^{यदापुनः - पृ० २०। १६}

श्री कुन्दावन नाम है रसिक न कीर्तन पुरि ॥ पृ० २०। १०

रूप रक्षित्वेय कृत के सम्बन्ध में लिखते हैं :-

वादि जगत्त वाच्यार्थमय, वादि जगत्त रयतंत्र ।
हेतुतुल्य त्वं तत्त्वरी, निमित्त न पादार्थं यंत्र ॥^१

जगत्त लिखते हैं -

सदा जगत्तन रूप रय, वाच्यार्थमय रयतंत्र ।
जगत्त जगत्त पुरन पुर, जगत्त वाच्यार्थमय रयतंत्र ॥^२

यह जोटि कृतार्थ में व्याप रयतंत्र है । यह जगत्त है
जगत्त रूप है -

एवम् वाच्य जगत्त है, जगत्त रूप जगत्त ।
नित्य जगत्तन के जगत्त जगत्त, जगत्त जगत्त जगत्त ॥^३

राधि और कृष्ण की नाम होते जगत्त की रूप जगत्त है जगत्त

की जगत्त कृष्ण की नाम, जगत्त कृष्ण जगत्त ।
रूप-रक्षित रक्षित की जगत्तन रूप जगत्त है नाम ॥^४

१ - जगत्त जगत्त - रूपरक्षित्वेय पुस्तक २५-२६

२ - " " " " २५-२६

३ - जगत्त जगत्त कृतार्थ में व्याप रयतंत्र रयतंत्र ।

जगत्त जगत्त जगत्त की, जगत्त की जगत्त जगत्त ॥

जगत्त जगत्त पुस्तक ३६।२३

४ - जगत्त जगत्त रूपरक्षित्वेय पुस्तक ३६-४

५ - जगत्त जगत्त जगत्त जगत्त रूपरक्षित्वेय पुस्तक ३६ जगत्त २

उसका वादि है, न कन्ध है न उसमें माया का प्रवेश
है -

वादि कंठ काही नहीं, माया की न प्रवेश ।
प्रसन्न विराज्य कथन पर, सुंवाविधिनि पुष्य ॥^१

है ।^२
ये सदा स्नातन हैं बीर एक प्राण की देह

यह काम है काम है । उसे निमग्न की नहीं जान पावे ।
यह मरु की सुंमग्न की प्राप्ति ही ज्ञान है । उसी का स्मरण करना
चाहिये -

जो यथा काम हैं, काम जाँच, निमग्न न जानें जाहि ।
सो हैं पाई सुंमग्नहीं, काहि न सुंमग्न जाहि ॥^३

स्म-रासिक देव ने सिद्धान्त माधुरी में कहा है कि
यह तत्त्व एक ही है । देवा निमित्त जीव रूप वापादित होते हैं ।
प्यारी - प्यारी में देव नहीं करना चाहिये । यह प्रसन्न पुराण है
परी सज्जिमानन्द स्वरूप है । ये वादि, मन्त्र, कथान में एक रूप है -

१ - टीका विंशति पृष्ठ २६-२७

२ - सदा स्नातन एक रूप, सुंमग्न निमग्न ।

राज्य राजा रत्न कंठ, एक प्राण के देह ॥

टीका विंशति - स्मरसिद्धि पृ० २६-२७

३ - टीका विंशति - पृष्ठ ३०-३१

४ - तत्त्व एक ही है, देवा निमित्त जीव रूप वापादित हैं,

मद न करनी, य प्यारी - प्यारी नु की प्यारी ली है ।

की टीका विंशति - सिद्धान्त माधुरी पृ० २७

पुण्ड्रि पुरुष तें जी पुरुषोत्तमविद्वानंद कथा सु ।

आदि मध्य कथान में र रपत एक स कथा की ॥

यह राधा मऊरी के लिये पुण्ड्री पर अवतार लेती है ।

यह राधाकृष्ण की जीडी सनावन है -

मऊन छिद्र मु अवतरी नित्य धिरीमानि हैम ।

राधाकृष्ण जीरी सदा रूप-रसिक छहें भैम ॥

रूप रसिककी जी राधा १

कस लकी हृष्टा लीखी है जी लखन विस्वार लीखी है -

नित्यि उखरी देख को, कामादि बिधि लीखी ।

नित्य हृष्टा विस्वार को लखी छेह की लीखी ॥

भी बुंदावन का कथा मशहूर है । मऊ हथी जानवर
भीपावि नित्य बंधन करते हैं -

भी बुंदावन मशहूर, लखी छेह मन भिन्न ।

मऊ हथी जानि है, भीपावि बंधन निध ॥

भी बुंदावन मापुरी का मऊन ली लखी जान । लखनाम भी लकी सखरी
मुह से लकी हथी पार नहीं पा लकी -

भी बुंदावन मापुरी, लीखी छेह लखी जान ।

लखी लखी मुह लखी छेह, लखी पार न पात ॥

भी हरि ल की माया की लखी का जानी है । यह माया

जानावाह लखी है पार कराती है -

भी माया लखी हरि ल की, ली हरिमाय लखी का माये ।

ली माया हरिमाय माय की जानावाह न पार कराते ॥ ६

१ - पुण्ड्रि उच्छव नानिमात - रूप रसिकीय पुष्ठ २०

२ - " " " " " २०

३ - लीछा विंशति रूप-रसिकीय पु० २५-२६-२७

४ - " " " " " पु० २८-२९

५ - " " " " " पु० २९-३०

६ - हरिमाय मशहूर - रूपरसिकीय पु० ३१-३२

पंचम अध्याय

रूप रसिक देव का भक्ति पक्ष

‘ मय ’ शेषाशान वातु में किन्तु प्रत्यय छाने से नाति
कथ्य बनता है जिसका सामान्य रूप तब माया का शेषा प्रकार है । परम
पैरायसीक नाति हम्पदेव की उपाधना में रत रक्षा की शर्मा नाति है ।
वास्तविक नाति पैरायसी की नाति पर स्थित है । नाति है ईश्वर ही
प्राप्ति ही है और नाति की ही कुछ मित्रता है । नाति स्वयं वाच्य एवं
वाचन रूप है । निष्कट रूप है ईश्वरानुष्ठान की नाति योग है तथा प्रम
कथा आदि मय और अशान है ।

श्रीमद्भगवद् गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि यदि
कोई व्यक्ति पुराणों की जन्म नाम है मेरा मत हुआ, मेरी ही
निश्चय मन्त्रा है तो वह वास्तु ही मानने योग्य है क्योंकि वह यथार्थ
निश्चय वाक्य है। वह ही प्रतीति वाक्य ही जाता है और वही रहने
वाली परम शक्ति की प्राप्ति होती है। वह मेरा मत नहीं होता।
गीता के चारों ओर व्यास महर्षि के उद्घाटन कहते हैं वह स्थिति कहाँ
है वह मत की परा मर्त्य की प्राप्ति होती है। अन्तिममन्त्र वन-
प्रसन्न में ही नाम है स्थित हुआ, प्रसन्न चित्त वाक्य पुरुष न तो किसी
किसी के लिए लोक करता है और न किसी की आज्ञा ही करता है
एवं पूर्ण में अन्तर्गत हुआ मेरी परामर्श की प्राप्ति होती है।

१ - श्रीमन्महादेव जीवा - जीवा श्रै गीरपुर सं० २००६, ६-१०-१९

2 - " " " " " 2004, 5-11-24

बीमदुःखमय के अनुसार कि मुर्खों का किम मतदान है उन क्या है ऐसे मुर्खों की वेद विधि की हुई तथा विचारों का ज्ञान कराने वाली कर्म-प्रणाली प्रसार की प्रवृत्ति की मतदान की विलुप्ति नहीं कहा है। बीमदुःखमय में नहीं यौन के उदात्त के संवेग में मतदान का फल है कि कि प्रसार का जो प्रभाव उत्पन्न रूप से वस्तु की नीर बसा रखा है, उसी प्रकार भी मुर्खों के भयान मात्र है उन की नति का वेद वारायत्त विविधता रूप से कुछ सर्वान्वयियों के प्रविष्टी जाता तथा कुछ पुरुषोत्तम में निष्काम और काम्य प्रेम को ना बल निर्मुक्त नहीं यौन का उदात्त कहा गया है। नहीं का उदात्त बीमदुःखमय में इस प्रकार किया गया है -

है वे मुर्खों परी कर्मों यही पाठ्यपुस्तक।

विलुप्तप्रवृत्ति का तथा सम्प्रवृत्ति ॥ २-२-६०२

क्योंकि मुर्खों के लिए तत्त्विक कर्म नहीं है, निम्न मतदान बीमदुःखमय में नहीं की नहीं की होती, किन्तु किसी प्रकार की कामना न ही नीर की नित्य निन्दार की रहे, होती नहीं है हृदय कामन्द स्वरूप परमात्मा की उपलब्धि करे कुतूहल ही जाता है। मतदान की सेवा की शीघ्र ही नष्ट नहीं जाने पर भी बाकीय, बायें बायीय, बाक्य और मायुय मोक्ष एक ही नहीं है। बीमदुःखमय में नहीं की मुक्ति है बलकर बताया है, क्योंकि कि प्रसार है कारणतः जाने हुए मन ही बताया है उसी प्रकार यह कर्म संस्कारों के मन्दार रूप कि शरीर की उत्पत्ति मन्त्र कर होती है।

१ - केवादा मुनितिमर्शानुविज्जराणु । उत्पत्ति स्वरूपमन्त्री कृतिः

स्वानाधिकी व या । - बीमदुःखमय ३-२५-२२

२ - बीमदुःखमय ३-२६-२१, ३-२६-२२

३ - " " स्वरूप २२, वयाव २४ श्लोक २० से २५

भीमशुभानमय के एकाग्र स्वरूप के बीदम वधाय में भक्ति की योग-
बाल, ज्ञान विद्या, कानिष्ठान, कपाड और तम स्थान में भी
बद्ध कर माना गया है। उनका कर्म है कि भक्ति जाति योग है मुक्त
करने वाली है। भक्ति योग के द्वारा जो लोग बने पाएंगे वे मुक्त
होकर सुख की ही प्राप्ति को जानें हैं, क्योंकि हमें ही उनका -
वास्तविक स्वरूप है।^१ नमः स्वरूप में मनवान भीषणा करते हैं कि
यह भक्ति है द्वारा ही जाने जाते, भक्तों के यत्न में होते और उन्हें
वास्तविक होते हैं। ज्ञान और भक्ति का सामंजस्य भी मनवान ने स्थान
स्थान पर दिया है।^२

छांदित्य भक्ति पुत्र में भक्ति की व्याख्या इस
प्रकार की गयी है - वा परावुराविकरी स्वरूप^३ ज्ञान ईश्वर के प्रति
सम्पूर्ण कुराण का नाम भक्ति है, ईश्वर सम्पूर्ण ज्ञान विद्या का
नाम भक्ति नहीं है, क्योंकि योगी कुराण को भी ज्ञान होता है,
परन्तु उन्हें प्रति नहीं होती।^४ देव का प्रतिकूल और उस कर्म का
प्रतिपादन होने के कारण भक्ति का नाम ही लोकाराण है। वह
ज्ञान की भांति कुराणकर्ता के जातीय नहीं है।^५ छांदित्य भक्ति पुत्र
में भक्ति शब्द वाणी एक भक्ति का प्रतिपादन है जो पराभक्ति -
की भीतिवत् है। यका और देवा की भीणी भक्ति है।^६

१ - भीमशुभानमय	१-२-११	२ - भीमशुभानमय	१-३-६३ से ६८
२ - भीमशुभानमय	१-२-११	४ - छांदित्य भक्ति पुत्र २	
३ - छांदित्य भक्ति पुत्र ४		६ - " " " ६	
७ - " " " ७		८ - " " " १६	

नारद नाटक सूत्र में विभिन्न वाक्यांशों की नाटक सम्बन्धी व्याख्या का विशेष ध्यान है। उसमें लिखा है कि पारासर - नन्दन की व्यास की के अनुष्ठानानुसार भगवान की पूजा आदि में कुरान होना की नाटक है। की रमाचार्य के अनुष्ठानानुसार भगवान की पूजा आदि में कुरान होना की नाटक है। देवर्षि नारद के मत से कभी सब कर्मा को भगवान के दर्शन करना और भगवान का पीढ़ा हा भी विस्मरण होने में परम व्याकुल होना की नाटक है। नारद नाटक सूत्र में नाटक के उद्देश्य बताने के लिए लिखा है कि नाटक ईश्वर के प्रति परम प्रेम - स्था है और कृत स्थापना भी है। उसको पाकर मनुष्य शिक्ष की अपर न पुण्य की जाता है। उसके प्राप्त होने पर मनुष्य न किसी कष्ट में आसक्त होता है और न उसे विषयों की प्राप्ति में उत्साह रहता है। उसे प्राप्त कर ही मनुष्य उन्मत्त हो जाता है, स्वस्थ हो जाता है। और आत्माराम बन जाता है। वह कामना-मुक्त न होकर निरीय स्थापना है। नारद नाटक सूत्र में प्रकीर्णित

१ -	नारद	नाटक	सूत्र	१६
२ -	"	"	"	१७
३ -	"	"	"	१८
४ -	"	"	"	२३
५ -	"	"	"	४
६ -	"	"	"	६
७ -	"	"	"	७

“ कृष्णसंभान , तथा कर्मभूति में प्रतिपादित नित्य भौतिक वादि ”
का आवरण न हो परन्तु कृष्ण के अनुकूल होने वाली प्रकृति की सत्ता
है । उस भक्ति का उक्त ज्ञान के अनन्तर ही होता है ।

कृष्णदास कविराज ने वैतन्व्यपरिवाक्य में भक्ति की
एक दृष्टिकोण और भक्त का धन्वन्व बताया है । नक्ष दृष्टीद्वि मावान
से भक्ति का दरवान आगता है, क्योंकि उसके कारण ही भक्त का
दृष्टिकोण से मात्र एक भावा प्रकृता है ।

१ - कयाद्विपत्तिः कृष्ण ज्ञानमपिनापुत्तः ।

नामकृद्देन कृष्णानुपत्तिं भक्तिरुत्तमा ॥

श्री हरिभक्ति रसायन विष्णु सा मीस्थानी

पूर्व विभाग छहरी पृ० ११-१२

२ - (क) मावान धन्वन्व भक्ति अभिप्रेतः ।

प्रेम प्रयोजन वेद विन वस्तुत्तम ॥

प, व मध्यमिता , पारि ३ पृ० १३३

(ख) एक रसभक्ति पुनः भाविनी वाचा ।

मानी एक भक्ति कर नाचा ॥

रा. व. ना. व. ३५ पृ० ३५५

(ग) कनी प्रु भक्ति देह , वाची पुन नाचा ।

पु. रा. ६३ पृष्ठ ४५

कृष्णदास कविराज के अनुसार कृष्ण प्राप्ति के तीन साधन हैं, एक भक्ति, दूसरा ज्ञान, तीसरा योग । इन साधनों से दृष्टदेव तीन स्वरूपों में मानते हैं । भक्ति से स्वयं भगवान की प्राप्ति होती है । काव्य भक्ति कृष्ण प्राप्ति का उपाय व्यक्त होता है । कुण्डीदास का कथन है कि भक्ति से दृष्टदेव राम ही प्राप्त हो जाते हैं और भक्त पर क्या करते हैं । ब्रह्मका के बिना कौन दूर नहीं होते और मल-मय नष्ट नहीं होता । हरि की भक्ति के बिना बुद्ध की प्राप्ति नहीं होती ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

परब्रह्म परमात्मा के ही स्वरूप समझें जाने लगे :-

ब्रह्म विष्णु कर्णामणि मातु, रवी विष्णुः स सुकणी महत्मानः ।
एव तस्मिन् कर्णामणिः कर्णामणिः, तस्मिन् यमं मातारिखान नहुः १॥

कर्मों का उपासना, भक्ति, धर्म, प्रेम एक ही पर विचार की जा सकती है पुनः ही है। का: ब्रह्म, यम, मातारिखान और कर्णामणि के नाम नहीं हैं, प्रत्यक्ष रूप ही हीमा के और पुनः और कर्मों को प्राप्त करने वाले और नाम है।

कर्मों की प्रतीति का उपासना प्रतीति के रूप में करते हैं। डा० वेणीप्रसाद का कथन है, कर्मों में कर्मों और देवताओं का ऐसा सम्बन्ध है ऐसा जाने के हिन्दू धर्म में नहीं है। यहाँ देवता कर्मों की भाँति ही नहीं है। जहाँ का विचार है कि देवता उनकी उपासना करने करते हैं, उनके कर्मों का नाम करते हैं। वे कर्मों में प्रेम करते हैं और प्रेम चाहते हैं। भारतीय धर्म सम्प्रदाय का धर्म और कर्म है। यहाँ कर्मों में तात्पर्य और देवता के धर्म में तात्पर्य और प्रेम की कल्पना की जाती है। प्रेम कर्मों ने विष्णु की देवता और महात्म-कांक्षी बना है।

कर्मों का धर्म में देवता का नाम है ही कर्म है-१ है।
कर्मों का धर्म में विष्णु की कर्मों देवताओं की धर्म और धर्म है। कर्मों न कर्मों का मानता है कि वे पुनः ही प्रेम ही कर्मों करते हैं और पुनः

१ - ब्रह्मस्तान की पुस्तिका सम्बन्ध - डा० वेणीप्रसाद पृ० ४२

२ - वेणीप्रसाद धर्मिक सम्बन्धकार पृ० ४३

न पाने पर अनिष्ट करते हैं। अन्य जातियाँ पूर्ण, अर्ध, पार्श्व, पूर्वी जाति प्राकृतिक शक्तियों की उपासना करती थीं, क्योंकि इनके काम में प्रकाश फँसता है, पूर्वी डोबल और का पार्श्व पूर्ण होती है, बीच और पश्चिम धूर होती है। अतिवृष्टि कावृष्टि जाति का कारण भी उन्हें ही समझा जाता था। पुराण मानवान का जलजन्म ग्रहण करता था। अग्नि के ८ - १ - २० के पंख हैं लिखा है :-

ता तथा रश्मि न विभूती रश्म्या अक्षय्यते
उरमाधि तथा वाक्य ता ।

ज्याह में सूर्य के चामी, सूर्य के भण्डार, जो पृथ पुराण होते हैं सूर्य कहता है, जो ही भी आपका अक्षय्य ग्रहण कर लिया है और मैं जाहवा है कि का एक सदैव भी वाक्य की ही रही ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि, प्राचीन देव पूजा में देवताओं के दो ही भी जल उदात्त की जा जाती हैं ।

१ - देवता केवल पूजा पर ही प्रकार करते हैं, न पाने पर अनिष्ट करते हैं ।

२ - देवता ही बराबर उपकार किया ही करते हैं पर पूजा पाने पर विशेष उपकार करते हैं । इस वजह से अत्यन्त प्राचीनकाल के मनुष्यों ने देवताओं के प्रति हीन भाव ही रखे थे - फल, हीन और भुवना ।

अग्नि के पुराण मनुष्य में अग्नि की भावना पुराण के रूप में है । अग्निवाद के विचार में स्पष्ट रूप से देवी में अग्नि

उत्पन्न नहीं है परन्तु उसका प्रारम्भिक रूप भौतिक क्रियाओं की उत्पत्ति था। हाँ की भाँति कृषि के रूप में सूत का कुँडी की और यकृत की सहायताभावी ही तात्त तत्त तत्त सूत में व्ययक्त हो रही है। विष्णु की ऐश्वर्य रूप कारण करने वाला बताया गया है। विष्णु ने तीन का वह मानव वर्ग की रक्षा है। नाभी। वह भौतिक रूपों में विष्णु के प्रति साक्षात् की भावना है जो विष्णु भाक्ति के बीच रूप में है। विष्णु भेदी के कृतार रक्षा और हितकारी है। बाँह के भौतिक भेदी में बाराह कृतार का भी समावेश है। वह प्रसार एवं वह निष्पत्ति पर पहुँचते हैं कि भेदी में भाक्ति की कार-मिक रूप में रक्षा व भाक्ति की कृत तत्त उपस्थित है। यद्यपि भौतिक युग में शास्त्रीय निष्पत्ति नहीं हुआ है। उन के रक्षण का निष्पत्ति विष्णु का होकर रक्षा तथा जीवन रक्षकता रूप, उनकी ही भाँति नवता भाक्ति के संकर भेदी है गलत है।

उपनिषद्समूह के ज्ञान शोध में द्वितीय विष्णु ज्ञान की रक्षा करने वाले और दूसरे महा उपनिषद् ज्ञान की रक्षा करने वाले की भाँति विस्तार के हैं। बुद्ध्याध्यय, कर्त्तव्यनिष्ठा, जाति विद्वत्ति परक ज्ञान भाँति का और रक्षादाय्यादि उपनिषद् रूप परक ज्ञान भाँति का उपस्थित रहे है। रूप के साथ बुद्धि और दूसरे दोषों का योग ही वाँहें सभी रूप परक ज्ञान भाँति के भाँति का विस्तार हुआ। उपनिषद्गी में कहीं प्रह उपजा और कहीं निर्गुण कहा गया है परन्तु वास्तविक भाँति भाँति में उन के उपपात्त स्वयं की कर्त्तव्यता दोनों रूप निष्ठा और रूप है। उपनिषद्समूह में उपपात्त की भाँति व्यापक ही नहीं और उपपात्त ही पद्धति में ही परिष्कार ही गया।

उपनिषद् ग्रन्थों के ज्ञान में ज्ञान और
 नाश भी है यह भी । वास्तव अनुष्ठानों की प्रधानता हुई और कर्मकाण्ड
 का विशेषण हुआ । वास्तव तथा उपनिषद्काष्ठ में कर्मकाण्ड में वास्तव
 ज्ञान काष्ठ की प्रविष्टा हुई । नाश उपनिषद् ही ही नहीं परन्तु बड़ा
 हुआ में नाश के केंद्र विद्यमान रहे । ज्ञान प्रधान उपनिषद्काष्ठ के
 अन्तर्गतों के केंद्र है नाश के भाव कूट नहीं है । ऐतान्तर उपनिषद् के
 केंद्र के लोको है विदित होता है कि अनु नाश के धाम गुरु हैवा का
 महत्व की प्रविष्टा हुई । अतन्त्र विदित में भी ठिठा है कि -
 ' केव तथा उपनिषद्काष्ठान ज्ञान मार्ग है यौग नाश है की साक्षात् जाने
 यह कर निर्मित हुई । उपनिषद् में नाश के विविध कोषों का प्रवि-
 पादन है । अतन्त्र उपनिषद्में सब केसावों की कृष्ण की मानकर रुद्र
 हन्त्रादि केसावों का उत्पन्न करने वाला भी ब्रह्मा है । पारक
 का ज्ञान होने के लिए कृष्ण विन्दन करना आवश्यक है । इस हेतु पारक
 का धनुष प्रतीक प्रकाशों के धामी रत्ना वास्तव । ऐसा सादीन्य वादि
 पुराने उपनिषद् की अत्यन्त मान्य उपकारी प्रतीक प्रकाश की नाश मार्ग
 का कारण है । कृष्ण विन्दनार्थ प्रकाश के कोषों की या बीजार की
 तथा जाने ककर रुद्र, विष्णु हत्वादि वैदिक देवताओं तथा -
 आकाशादि पार अन्त कृष्ण प्रतीक की उपासना प्रारम्भ होकर अन्त
 में होती हेतु कृष्ण प्राप्त्यार्थ रा-गुण्य नृसिंह वादि की नाश प्रारंभ हुई ।

१ - बीजा रत्न - अतन्त्र विदित - ५.२०

२ - अतन्त्र विदित ४ - १२ - १३

३ - ऐतान्तर उपनिषद् - ४ - २

४ - बीजा रत्न - अतन्त्र विदित ५.२०

देवताओं का स्थान निर्गुण ब्रह्म है, निर्गुण ब्रह्म का स्थान साकार ब्रह्म है
 दिया तथा विष्णु की महत्ता सुगुण स्वरूपों में बढ़ती गई। ब्राह्मण
 काष्ठ में विष्णु की देवता स्थापित हुई तथा अग्नि की विष्णु से
 गौण स्थान मिला। मैत्री उपनिषद् के विष्णु की जगत्पातक ब्रह्म
 का स्वरूप बताया गया कठोपनिषद् से वात्सा की उष्नीषी गति की
 विष्णु के परमेश्वर की ओर जाने वाला पथिक कहा गया।

जगत्पातक ब्रह्म की विष्णु का रूप बताया गया। मण्डूक
 उपनिषद् में गति भाषना के सम्बन्ध में इस प्रकार उल्लेख है, ब्रह्म की प्राप्ति
 परीक्षात्मक स्वरूप की उपलब्धि, प्रमत्त, ऐसा तथा बहुत दुर्लभ है नहीं होती।
 ब्रह्म कि पर कृपा करते हैं, उही की उनकी प्राप्ति होती है वात्सनेय जना
 स्वरूप उही के समान होकर रह गये हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि यहाँ से
 कई रूप स्वरूप की प्रशानता दी जाने लगी, यहाँ से गति मार्ग का कारण
 है। वेद के नाम पर प्रसिद्ध कर्मकाण्डी निम्ना नीचा में सर्व स्थानों पर
 की गयी है। विष्णु के इस रूप साक्षात्कार के लिए ब्राह्मण ग्रन्थों में
 कुछ कर्मों की आवश्यकता बताई। एक स्थान पर ब्रह्म ग्रन्थों में बताया है
 कि हेतुओं की ओर ध्यान की प्राप्ति के लिए पुराण मुक्त द्वारा योग्य ब्रह्म होना
 या की ओर गति के स्थान पर प्रवृत्ति दी जाती थी। अब से देवताय यहाँ में
 किंवा ब्रह्म समझी जाने लगी लगी से देवताय ब्रह्म में किंवा स्वरूप का
 प्रारम्भ होता है। यहाँ से स्वरूप ब्रह्म का वाच्य होना है या।

१ - ऐतरेय ब्राह्मण १-६

२ - मैत्री उपनिषद् ६-१२

३ - कठोपनिषद् ३-६

४ - मण्डूक उपनिषद् तृतीय मन्त्र

५ - गीता २-४८, ४९

६ - उत्तर ब्राह्मण १३-६ - १

७ - देवताय ब्रह्म का विनाश की विस्तार - ब्रह्मायत वा साय २०२० वापस

कास्त्री, कल्याण वर्ष १६ की ४

मन्त्र करने वाले ब्रह्मगुरु मुनिष्ठ होने के कारण शास्त्र नाम से प्रसिद्ध हो गये । ————— ब्रह्मगुरु देव्याय वर्ग का नाम "शास्त्र वर्ग" पड़ गया । इन वर्ग विद्वानों के विचार सीधा है कि उपासना के ये वैदिक ऋषि ही प्रमाणवादी नहीं थे - अग्नि परीक्षार्थ, क्या, प्रेम बलिआ आदि रूपों की पुस्तिका का भी प्रकार था ।

देव्याय वर्ग विद्वानों का उत्कर्ष राधायण काष्ठ में हुआ । वास्तविक के रूप सम्पूर्ण होने के साथ, ध्यातव्य, स्तुति और आकाश रूप हैं । उपासना, मन्त्र और उपासना के कारण होने वाले विष्णु के दो बंध और सीधा करने के रूप है । इन देवों के कि उपासना बाद की पूर्ण प्रतिष्ठा राधायणकाष्ठ में ही नहीं निर्गुण रूप मानव वर्ग की रक्षा करने के लिए दुष्टों को बचाने के लिए, मन्त्रों को प्रदान करने के लिए मन्त्र रूप कारण करता था । । सत्य दृष्टि की विषयी, वास्तविक और वास्तविकी माया की राधा के वास्तविक है । माया के रूप है दुष्टों पर मोक्ष की प्राप्ति होती है । अन्तःकरण की शुद्धि के लिए माया है दुष्टों पर मन्त्र करने वास्तविक, किन्तु मोक्ष की प्राप्ति सीधा है वास्तविकी मन्त्र के साधन के लिए राधायण स्वरूप एवं कीर्तन की देव्य मानते हैं । मन्त्र की इस महत्त्वपूर्ण स्थापना की खुला उपनिषद् काष्ठ से करने पर विचार होता कि मन्त्र में देव्याय वर्गों से बना एक नाम स्थापित कर दिया था । यथार्थ के विभिन्न आत्माओं और पार्श्वों से प्रसिद्ध होता है कि उनमें कीर्तन की वास्तविक दुष्टाविषय का नी निम्नान्वी का नाम सत्य समुच्च अन्तःकरण मानकर उपासना की गई । वास्तविक में शास्त्र वर्ग की सर्वप्रथम माना । यथार्थ में की वास्तविक, शास्त्र वादि सम्प्रदायों का प्रतिपादन है और विधि प्राप्त करने के भी वास्तविक निधि हैं । यथार्थ के वास्तविक अन्तःकरण में शास्त्र वर्ग के प्रकार की प्राचीनता सम्पूर्ण की प्रमाण उपलब्ध है । इन प्रमाणों के आधार पर इन २४ निष्कर्ष

१ - देव्याय वर्ग का विकास और विस्तार - दृष्टाव्य भास्त्रव रूप २०

वाचार्थ आत्मी अन्तःकरण वर्ग २६ वंश ४

२ - देव्याय वर्ग के विभिन्न मन्त्रार्थ ५० ४ - ५

पर पृथ्वी है कि ४०५० ७०० वर्ष के लगभग तथा उसके पूर्व भारतवर्ष में वायव्य वर्ष १, मेघनाद वर्ष १, या उसका प्रसार पश्चिमोत्तर चीमा प्रान्त तक ही गया था और संकर्षण वायुदेह, कहरान-वायुदेह आदि की पुनः संयुक्त रूप में होती थी ।

महाभारत के श्रौति पर्व में भैरव पर्व पर स्व सप्तर्षिर्वा एवं स्वायम्भुव मनु के शपथी नारायणी सम्प्रदाय के वत्स पुनादि भी हैं । भारत के स्वतः दीप बाहे प्रान्त में उनकी प्रार्थना से प्रान्त होकर वायुदेह वर्ष की कलमान पुनादे हुए कहे हैं कि संकर्षण बीच बीच मात्र के प्रतीक और वायुदेह के ही रूप हैं । यह वायुदेह दृष्टिपूर्वक आत्माओं के आत्मा और परब्रह्म परमात्मा हैं । वेवता मनुष्य तथा अन्य पदार्थ उनकी ही उत्पन्न होकर उनमें ही लीन हो जाते हैं । श्रुति में ब्रह्माय में कहा है कि यह सर्वा-त्मिक वर्ष बही बीजा वर्ष है जिसे कृष्ण ने जन्म से कहा था । कलमान विभिन्न रूपों में पृथ्वी पर कलमान लेते हैं यह भी माना गया है । कलमान वायुदेह वर्ष संसार की में वायु - दन्तों और महा पुराणों की कलमान धुल श्रौति का साग्राज्य फैलाते हैं । स्वतः नारायण ही स्व वर्ष के प्रतीक हैं ।

महाभारत और गीता से पूर्व की वर्ष प्रदान और ज्ञान प्रदान मार्ग की वारहे में उनकी कृष्ण के योग का अधिक महत्त्व नहीं था । परन्तु वास्तविकता और गीते कृष्ण के योग की आवश्यकता प्रतीत होने लगी और दन्तों ने जो भेदरूप का किम्बदन्त तथा साधना मार्ग की प्रक्रियाओं का विधान स्मृति श्रौतिक व्यवहारों में कर दिया । गीता ने व्यावहारिक पूर्ण कलमान वर्ष की स्थापना की । ज्ञाने बताया कि वर्ष बही, वर्ष कलमान की उष्ण होड़ के ही वास्तव । यज्ञ द्वारा यह कलमान साधना से हुए जाती है ।

गीता का मक्ति मार्ग प्रु मक्ति में निरन्तर साधक को फलदायकता है दुःखस्व संसार में कुछ कार्य करना सिखाता है । यह निवृत्ति परायण ज्ञान काण्ड के स्थान पर प्रवृत्ति परायण मनकामक्ति की प्रदाता है । गीता में बीजात्मा में भ्रष्टा, समर्पण और मक्ति की भावना की महत्ता दी गयी है । उसके अनुसार कर्मों का समर्पण ही मक्ति वस्तु है कर्मों का परमिष्ठान ज्ञान में है और ज्ञान की वंतिम पराकाष्ठा वात्स्य समर्पण में है ।

गीता में मक्ति का कर्म-ज्ञान- समन्वित व्यापक रूप दृष्टिगोचर होता है । गीता के अनुसार मोक्ष ज्ञान है ही होता है तथा मक्ति द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है । काः मक्ति ज्ञान का साधन है गीता के अनुसार ज्ञान प्रसाद के भीतर ही मक्ति होती है । हम हीनर की मक्ति नहीं कर कर हमसे हैं कर्म कर कि हम उसकी जान पाते हैं । गीता में ज्ञानी मक्त की वैश्व बख्ताया गया है । गीता में मक्ति ज्ञान का पर्याय नहीं है । श्रीकृष्ण मनमान का कर्म है कि मक्ति द्वारा में वस्तुतः जाना जा सकता है । मक्ति के प्रभाव में ही मक्त उस ज्ञान मार्ग में उत्तर होता है किमि मनमान का स्वल्प प्रत्यक्ष होता है । ज्ञानी मनमान के स्वल्प का जो ज्ञान प्राप्त करता है उसी वस्तुत्व रक्षा है, पर मक्त ज्ञानी उस स्वल्प में कुल है हीन ही जाता है ज्ञान द्वारा मक्ति होती है और मक्ति द्वारा ज्ञान होता है । गीता वात्स्य समर्पण के भाव है जीव प्रीति है जो मक्त की वंन्विम प्रक्रिया है । हमारे समस्त कर्मों संकल्पों वांछारिक और वाक्युय केन्द्र पैष्टावी का कारण के वर्णों में समर्पण होता चाहिए । मनमान का कर्म है कि महामान पुरुष ज्ञान

-
- १ - गीता ५-२
 - २ - गीता १०-६
 - ३ - गीता ४-३३
 - ४ - गीता ९-१५

की प्राप्ति होती है तथा ज्ञान के कारण उसे समस्त प्राप्ति है परन्तु अज्ञान
मिलती है। नीलाचरी और कर्मदा मक्ति की समीक्षा है। नारायणीय
और नीला का मान्यता भी एक ही है।

ग्रीक ज्ञान के प्राप्ति के लिए वेन कर्मदात्मियों ने मंदिरों
में बने दीपकों की वन भूमिों स्थापित की। अतएव वादी बीलों ने
महायान की स्थापना की, महायान के संस्थापक जलपौष के दिग्ग माना-
जुन है। महायान, बीलाचार कर्मदान वादि सम्प्रदायों ने मिलकर मंजु
कलौकिंसेसर, भैरव वादि बीनित्त्यों की भूमिों स्थापित की। वेन
बीद कुरुक्षेत्र पर बीबीस कलारों की प्रतिष्ठा की गयी। बीलों में
भूमि पुनः का प्रारम्भ हुआ।

नीला के विचारित मान्यता भी की ज्ञात्या करने वाले
बीमद मान्यता, नारद मक्ति पुन बीर अहित्य मक्ति वन बीन मुक्त पुन्य
है। इनमें नारद पांचरत्न में नंद केन का भी कुछ समानता पर किया गया।
सम्भवतः मान्यता बीली अज्ञाती में वन भूमि भी उनके कुछ केन बीलीय
मान्यता भी है कुछ विन्य है। नीला ज्ञान भी एवं उपायना बीनों का
सम्भव करती है और कर्मद मक्ति का उत्कर्ष स्थापित करती है, अतएव
बीमदमान्यता रूप है मक्ति मान्यता की उपदिष्ट होती है। बीमदमान्यता में
ज्ञान और वैराग्य की मक्ति की संज्ञान कहा है। मक्ति पुनार और पुनार
मान्यता पुन्य में ही हुआ। मान्यता ने बीमदमान्यता के मान्यता का तीनों
की स्थापना करके कुरुक्षेत्रात्मता के भव्यता पंन, प्रमि, महासाष्ट,
पुनराष्ट, राक्षसाष्ट, उग्र किमुक्षान और ज्ञात में स्थापित मिले।

नारायण है वाचिक वाच्य है अधिक संत्य संत्य है अधिक
वाच्यता और वाच्यता है अधिक रति मान्य में रक्षा है।

१ - नीला ३-३६

२ - बीमदमान्यता - महात्म्य प्रकरण, अध्याय १ श्लोक ३५

३ - मदादी वाक्यता का दृष्टिगत ४, ५, पांचोरकर प्रेम वन्द

पृष्ठ १९०

मानव का वास्तविक मान रवि मान है। रवि मान की माँ की माँ में सबसे बेस्ट सम्पत्ति बाँटा है। रवि रवी महारम प्रधान करने की श्रुति में मान लीला, कीरलण, महाराज इत्यादि हैं। श्रीमद्भागवत में रवि मान के परिपोषक महाराज की श्रुति का कड़ा मर्म-स्पर्शी वर्णन किया है। श्रीमद्भागवत में योग की प्रक्रिया है माँ की रीति की पद्धति को प्रकट और तीव्रप्रद बताया है। रवि मान द्वारा मानव की इस श्रुति में परमानन्द प्राप्त होता है। उस चक्षुष्य नीतिश्री का उद्धार मानव ने प्रेम के लक्ष पर किया।

श्रीमद्भागवत में माँ की सर्वोपरि स्थान दिया। इसके अलावा स्कन्द के अद्वैत ब्रह्मत्व में मानव स्पष्ट रूप से कहते हैं कि मैं न योग के द्वारा न साँस (आन) के द्वारा, न स्वाध्याय एवं तप (आत्मप्रयत्न) के द्वारा और न स्थान (स्थान) के द्वारा ही प्राप्त होता है। मेरी प्राप्ति का मुख्य साधन ही माँ है। एक विच्छा है की हुई मेरी माँ काँकात तक की पवित्र कर देती है जो मनु मनु बाणी है प्रिय प्रिय को, कभी लीला हुआ, कभी लीला हुआ कभी लीला को लीला नावा हुआ और नाकवा हुआ, मेरी माँ में निरव होता है वह उस निरव विज्ञान की पवित्र कर देता है।

श्रीमद्भागवत का सार के साक्ष्य पर बहुत प्रमाण मिला। निरुक्ति के स्थान पर प्रुक्ति परायणता का चिह्न है प्राकृतिक हुआ। रामानुज मध्य निम्नार्थ, भ्रम्य बल्लभ आदि सब जापार्थ श्रीमद्भागवत के प्रामाण्य हुए। सुखी, दुःख आदि सभी माँ की कर्मों में उन्हीं के जिज्ञास्यों का प्रकटन हुआ।

१ - श्रीमद्भागवत १-४-६३

२ - श्रीमद्भागवत स्कन्द स्कन्द, ब्रह्मत्व १३ श्लोक २० है २६

निम्बार्क सम्प्रदाय की भक्ति भावना

निम्बार्क सम्प्रदाय के अनुसार वेद का उद्देश्य ब्रह्म की प्राप्ति है। इसका उपाय उपासना है। प्राणी को भगवान की उपासना में आने से प्रथम गुरु की उपासना में जाना आवश्यक है। उपरान्त गुरु के आदेशों से मार्ग का अनुसरण करते हुए भक्त भगवान की ओर क़दम बढ़ाता है। गुरु शिष्य को उपासना के रूप में उपदेश देता है। उपासना भगवत् प्रेम का साधन है। इस सम्प्रदाय में भगवान की पूजा के रूप में उपासना प्रारंभ कीजिये। निम्बार्कवादी यह शीकी में लिखते हैं -

उपासनायं निवर्तो कोः सदा प्रामाण्यं ज्ञानं त्वमी नुपुस्ते ।

मानव को भगवान की उपासना से आनाम्बहार है भक्ति निवर्ती है। पांचरात्र विधि में उपासना की आवश्यक बताया है। निम्बार्क-सम्प्रदाय उपासना प्रधान है। निम्बार्कवादी में अनन्तर उपासना प्रणाली का प्रस्तुत इस सम्प्रदाय में किया। इस सम्प्रदाय में चार विधि - विधान का प्रचार है। इस सम्प्रदाय का प्रत्येक भक्त गुरु, देवा, भगवत्, नाम कामगवत्पुत्रा की ओर भगवत् रूप विधान का अनुष्ठान करता है।

उपासना तथा पूजा में आंतरिक तथा बाह्य भावना का अन्तर है। इस भावना को दो प्रकार से करते हैं - (१) स्वयं एवं उपास्य के स्वरूप का चिन्तन, (२) उपास्यदेव की सेवा भावना एवं स्वयं चिन्तन भावना का वर्तन प्रकटित है सम्बन्ध है। इसका आधार वैदिक दर्शन है। वेदुतः सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान, सर्वभूषणी की सर्वोत्तर श्रुति की ओर अत्यन्त भक्ति करते श्रुति स्वरूप वेदों का विवेक स्वाभाविक है। निम्बार्क-सम्प्रदाय

मैं यह स्वरूप निम्नान्न भेदाभिद नाचना है किया जाता है क्योंकि उपास्य
 [५५] व्यासक एवं देवी है और उपासक [वीर] व्यास्य एवं देव है । यह
 देवी नाच मुक्तियों में जीव स्पर्शों पर फैलने की शक्ति है । नीचा मैं
 लिखा है परमेश्वरी के लोको के बीच मूलः सनातनः भी व्यास की ने बड़ीना
 नाच्य पदीशाल के आकार पर ली सून का प्रतिपादन किया है । अतः
 भेदाभिद नाचकुशार उपास्य और उपासक के स्वरूप का निम्नान्न करना ही
 वही शास्त्र का अभिप्रायः है । तदेवादी बाधार्थ कीद नाचना पर यह
 देते हैं । निम्नान्न सम्प्रदाय में प्राचीन ज्ञात है मूनाश्रिता की परम्परा
 नहीं जाती है । भी एतदादि की है यह उपासना भी नाच की शक्ति
 और भी नाच में ली मूना शक्ति का उपदेश भी निम्नान्नार्थों की शक्ति
 एवं उपासना का वाक्य शक्तिशक्ति सुद्ध है वाक्यार्थ नहीं होता ।
 अतः कारण यह है कि मूना वकीयापी जगत् स्वरूप है । जिसे उपास्य
 का कर्मण ही रहा होता है यह इन शक्तिशक्ति सुद्धों की और व्यास की
 नहीं देता एवं मूनाश्रितापर एवं है ब्रह्म और जीव सुद्ध नहीं है । ली
 उपासना का उपासना, वाक्यमात्र, एतदादि एवं उपासना वादि नाचों
 है उत्तम उपलब्ध होता है । अतः उपास्य देव । भी व्यास्युन्दर ई
 एवं रूप है । उन्हीं एवं रूप प्रभु की प्राप्ति होने पर यह जीव वास्तविक
 सुद्ध शक्ति का अनुभव करता है । वही शास्त्र उपासना के ही वन्दन
 नहीं जाता । यह है ज्ञान की पीथक है और उपासना है भी वही

१ - नीचा ११-७

२ - ज्ञान सून २-३-४२

३ - भी है मूना उत्तम ७-२३-१

४ - ली देवः एतदेवा यं उपासना वानन्दः भवति । दे० उ०

जीव जीव है । डॉ० नारायणदास ज्ञान ने दाहीनक चिन्तन पद्धति एवं
 स्तोपासना की एक ही वस्तु है की कहा जाने है । ये जाने लिखी हैं -
 सुन्दारका उपनिषद् में इस की एक स्थान पर परम ज्ञानम् स्वल्प कथ-
 कर पिर एकमेवानन्दम्यान्माति मूवानि - मावामिपर्वीवन्ति (५०४-२-२३)
 उनके ज्ञान की भाषा है जन्म प्राणी मात्र की उपवीक्षित कहा गया है ।
 'श्री प्रिय स्त्री देवातिनिष्ठ पुरुष काकर और नीलर कु कर्षि जानता
 है श्री ही प्राण ज्ञाना । (२२२) है जातिनिष्ठ पुरुष की वद नी कहा
 कु नहीं जानता । यह बीज का ज्ञान ज्ञान और ज्ञानज्ञान शोक -
 निहित समान्तर है । १. ५० ४-२१ । स्तोपासना के मूल में की यही
 चिन्तन भावना काम करती किताब देती है । इस रीति है स्वल्प चिन्तन
 के जतिरिक्त जन्म स्तोपासना के की नी की ज्ञानाय केवा भावना कर्तते है
 जो मानवी सेवा कर्तते है । पुष्प, पुन, मेघि जति रात्रि है सागर
 समुद्र ज्ञान स्वल्प के ज्ञान की पूजा कर्तते है । स्तोपासना नावतिष्ठ चिन्तन
 प्रदान है । यह स्तोपासना में पुष्प का ज्ञान ज्ञाना जाता है की हादिक
 भावी की ज्ञानकता होने के कारण यह पुष्प की सेवा कर्तते है ।
 निम्नार्क स्त्रीनी में बार प्रकार - मृत्यु, पुन, नित्र और प्रिया भाव
 कर्तते है । परा या रात्रिनामति की स्तोपासना का यही मूल आधार
 है । इहम् गित्युत विवरण हरिश्वादीयस्त्री की म्यात्मा है किताब

१ - निम्नार्क सम्प्रदाय और उनके पुष्प भाति किन्ही जति पुष्प १२३

डॉ० नारायणदास ज्ञान ।

२ - निम्नार्क सम्प्रदाय और उनके पुष्प कर्षि मर्क किन्ही जति ५० १२३

डॉ० नारायणदास ज्ञान ।

३ - देहिनिष्ठ मनुः प्राणिनाति किताब समाविष्टः ।

मृत्युपु पुनपु देहिपु प्रियावन्तिवत्तव ॥

रम्य जीवनी १६

है। निम्बार्क में क्या स्वीकी में राधा कृष्ण के युगल स्वरूप का विवेचन किया है। उर्वरकर्मों शक्तियों की राक्षसा की सेवा में विमुक्त बताया है। निम्बार्कचार्य ने बहुत संदिग्ध द्वात्रिंशत् रूप में साम्प्रदायिक सिद्धान्तों की कथा के परम्परा में कई सारभूत और निश्चित हैं। फेस काश्मीरी के कुम्हारिका ग्रन्थ में उपासना विधि के सम्बन्ध में लिखा है। वन्दोनि मनवान के वात्स्यायि का प्रतीक यहाँ की रक्षणी उपासना की ही बताया है। उपासना के लक्ष्य में पुनः पुनः है। निम्बार्क सम्प्रदाय में इसके तीन पैर हैं -

१ - वैदिकी पुनः

२ - शक्तिपुनः

३ - कुम्हारिकापुनः या सेवा ।

वैदिकी पुनः :-

यह सम्प्रदाय वैदिक विधियों का बड़ा वादर है वे विधियाँ मनवान की ही सम्बद्ध होनी चाहिए। पुनः कर्मकाण्ड इत्यादि लिख आवश्यक है। येन वेदों के अनुसार मनवान की पुनः का प्राधान्य है। इनके लिए शास्त्राग का बहुत मोचल की प्रतिभा बड़ी प्रस्तुत है। यह सम्प्रदाय का शास्त्राग सेवा मुख्य चिन्त है। प्राचीन वात्स्ययि की वात्स्यायि के और भी प्रकार है तथा शास्त्राग की गति वात्स्ययि की है। विद्याम सक्त पर उन्हें वात्स्ययि स्थापन पर लिख कर वेद छुट्टि करते हैं और फिर शास्त्राग मनवान की पुनः कर लिखी। दूसरे कार्य में लक्ष्य होती है। वैदिक पुनः विधि में मनवान के भीतर (१५) उपचार

निम्नलिखित (३२) उपचार या षष्ट मन्त्रारित्य (३३) उपचारों
के मंत्र बौद्ध धर्मकर पुस्तक में हैं। ये मंत्र, सुक्ल, पाठ, ध्यान और
का भी इसके मंत्र हैं। वेदिकी पुस्तक में मंत्र निम्नलिखित षष्ट पुस्तकें हैं
विष्णुसंहिता विधि - विष्णुसंहिता पुस्तकें लिखा जाता है कि "विष्णुसंहिता"
कहे हैं। आचार्य या गोपाय प्रणित है कि विष्णुसंहिता है।

वैदिकी पुस्तक :-

वैदिकी पुस्तक में गोपाय के ही द्वारा कथा
की जाती है। तन्त्र शास्त्र के अनुसार प्रत्येक देवता का विशिष्ट
प्रकार का रोजात्मक स्वरूप है। देवताओं की विविध स्वरूपों को
मंत्र कहे हैं। मंत्र का प्रकार विष्णु, ब्रह्म, शिव, इत्यादि के
संयोग के कहे हैं। कम देवताओं के मंत्र में पारंपरिक शक्ति देवता की
स्थापना होती है और मुख्य षष्ट मंत्र के कारण ही स्थापित होते
हैं। उपचार-च मंत्र, ध्यान के समय तकनी पुस्तक की जाती है।
मंत्र, का, ध्यान की लिखा जाता है। निम्नलिखित विष्णुसंहिता
द्वारा गोपाय के द्वारा पुस्तक कही है। गोपाय विष्णुसंहिता स्थापित
गोपाय तन्त्र, ब्रह्मसंहिता तन्त्र आदि मुख्य गोपाय पुस्तक के कारण
हैं। प्रायः विष्णुसंहिता की एक स्थापना पर लिखा रहती है वैदिकी
पुस्तक कहे हैं, ध्यान का तरीका ब्रह्मसंहिता द्वारा प्रणित है।
इस विष्णुसंहिता का महत्वपूर्ण पुस्तक है।

जो वे साम्प्रदायिक दत्त वाता में ही प्रयोग करते हैं। हिन्दू की सभी गुरुओं की बन्धना और उनका कीर्तिमान उसी दत्त नाम से करते हैं। यह सम्प्रदाय के दार्शनिक आधार जीमवृत्तान्त, ऋग्वेद-पुराण, परशुराम काण्ड हैं। सम्प्रदाय के कृत्याधिकारों के परम दत्त-राज्य निम्न काजरी जू काजरी की कृष्ण चन्द्र गौरी-विधारी हैं। उनका परम दिव्य लोक भाषा भाषा से पूर्ण है अर्थात् गौरी-वादी दत्तनामका निम्नान्त सम्प्रदाय में प्रचलित है।

यह सम्प्रदाय में काजरी नाम की ही प्रकृति है जो जीमवृत्त में ही उच्च लोकोक्ति। वाक्ता कला काजरी के अन्तर्गत वाक्ता दत्त, भाषा काजरी की लोकार करता है। सम्प्रदाय में यह प्रचलित है कि दत्त भाषा के कृतार की निम्नान्तवादी रीति के अन्तर्गत के है। वे दत्त की कष्ट लोकोक्ति में है एक है। यह प्रचार हम देखते हैं कि निम्नान्त सम्प्रदाय में दत्त उपासना प्रारम्भ है ही प्रचलित है। निम्नान्तवादी के अन्तर्गत दत्त लोकोक्ति में कुछ उपासना के साथ बगवान की काजरी-लोकोक्ति की दत्त की प्रकृति की लोकोक्ति किया है। वे लोकोक्ति की भाषा की पूर्ण कला वाक्ता और दत्त दत्त उपासना की लोकोक्ति है। अनुसन्धानिका उपासना में निम्नान्तवादी की - दत्तनामका कीर्ति - दत्तनाम काजरी के अन्तर्गत की लोकोक्ति है। यह नाम का दत्त दत्त प्रकृति है ही लोकोक्ति है दत्तनाम काजरी

रूप प्रथम मण्डल में नित्य बुन्दावन प्राप्त है । उसकी सत्ता का
 अनुभव श्री कृष्ण की कृपा से उनका ज्ञान्य मत करता है । मत
 एक मात्र यमुना पुलिन की र बन कुंजी में कृष्ण की छीछावों का
 करने करना चाहता है । इस निरुद्ध छीछा में श्री राधाकृष्ण की
 सेवा ही कुरान जन्मा माधुर्य भाव की परिपक्वता जन्मा है
 इस सेवा का अधिकार पुराण के नाम धिछीन होने के उपरान्त
 सही भाव में ही मिलता है । कम नारी भाव में ही कुरान
 समर्पण, सेवा के रूप में अपने अकृत्य का व्यक्तित्व को वारा-
 ज्य का करना देना ही सम्भव है । मत दुमल रूप बुन्दावन -
 विहारी की वष्ट्यापन सेवा करता ही अपना जीवन समर्पण है ।
 वष्ट्यापन सेवा में प्राप्त वस्तुत्व है केवल राधा की राध श्रद्धा का
 अन्विष्ट है । मत वष्ट्यापन की छीछावों का चिन्तन तथा -
 कीर्ति करता हुआ विविध साधनों से प्रभु की उपासना करता
 है । हरिव्यास देव ने महाराधी ने रत्नोपासना का बड़े सन्दर-
 भं से विवेक किया है । ज्ञानि महाबाणजी के मते प्रभु में
 की परात्परत्व का ही श्री कृष्ण रूप में उद्घाटना, उद्घा भव
 है उनकी वाङ्मायिनी शक्ति का व्यक्तता, नित्य नित्य बुन्दावन
 प्राप्त के नित्य विहार में उनकी रक्ति का प्रकाश जितना
 सुखोद्देश्य समगरी रूप की वात्सा कल्याण साधना है वहां
 सांकेतिक रूप से उंगित किया गया है ।

परमेश्वर विद्यान्त बुद्ध के अन्तर्गत इष्टता विस्तार विवेचन है -
 रत्नोपासना, महापुरुष, महामन्त्र और अत्यन्त गोपनीय
 रहस्य है पूर्ण है इस कारण महावाणी के सेवा बुद्ध और
 सुरेश बुद्ध के इस की उपासना का अनिवार्य है कि अन्य
 साधकों को हो सकता है ।

साधकों को श्री का अन्वय देना निष्कर्ष
 होकर निम्न निष्कर्ष कर्तों का परिस्थान करके मूठ, क्रोध,
 निन्दा और करके केवल साधकों पर अत्यन्त रक्षित हुए
 बीच भाव पर क्या नाम रहने लगे । साधकों का सर्वथा
 परिस्थान करी, साधकों नाम अत्यन्त होकर एक पक्ष पर के
 लिए भी वह रहस्य की न हो । इस प्रकार का अन्वयान्त
 होता नास्ति । दूसरे निष्कर्ष का नाम लेकर उत्तरी मुक्ति के
 अन्तर्गत अत्यन्त नाम की सेवा अन्वयान्त का निष्कर्ष करके है
 और उक्त है अत्यन्त उक्त नाम की उक्त है ।

इस अन्वयान्त के दो साधकों के लिए भी
 अन्वयान्त है । अन्तः प्राप्ति के लिए यह भीष्टों का
 विधान है :-

पक्षी रहित जल को ऐसे, दूरी क्या कुछ पर है ।

बीबी की मुनिष्टा रहित, बीबी क्या अत्यन्त है ।

१ - निम्नार्थ अन्वयान्त और उत्तरी अन्वयान्त अत्यन्त अत्यन्त

पु० हर० का० नारायणदास कर्त ।

२ - निम्नार्थ अन्वयान्त और उत्तरी अन्वयान्त अत्यन्त अत्यन्त

पु० हर० का० नारायणदास कर्त ।

पंचम पद पञ्च कुरात, षष्ठः रूप वक्षिष्या मामे ।
 सप्तमि प्रेम धिये विरचाये, अष्टम रूप ध्यान गत वाये ॥
 नवमी कृपा निरूपे वक्ष्ये, दशमी तत् की वारिषा वक्ष्ये ।
 या कुरुम ते मे कुरुमी, ओः ओः जगते निरवर्णी ॥

एव प्रसार का वावरण करते हुए साधक श्री
 किशोर, किशोरी के नित्य कुन्दासन धाम परिकर में प्रवेश
 कर जाता है । श्री निरंजनशरी विधारिणी स्त्री वारि-
 षा के लिए नित्य विहार करते हैं ।

नित्य विहार :-

निम्नार्क सम्प्रदाय के अनु अनु कीक कवियों ने
 नित्य विहार का वर्णन किया है । इस सम्प्रदाय की उपासना
 का यह मुख्य तत्त्व है । श्री भट्ट जी, हरिनाथदेव, त्यागी -
 हरिनाथ, रूप-राजिन्देव और विधारिण देव ने भी नित्य विहार
 का वर्णन किया है । रासिक कोविन्द ने झूठ झूठ-भाषुरी के
 बावा भावबलात्त ने 'निरंजन माधुरी' में तथा रूप-राजिन्देव ने
 'उत्कृष्टावली' के विद्वान् भाषुरी ने नित्य विहार और -
 उपासना चाल का सुन्दर विवेकन किया है । नित्य विहार के
 चार अंग हैं :- १ - परात्पर जल परब्रह्मके प्रीतुष्य -
 २ - समीप आह्वानिक शक्ति की राधा, ३ - वैवाल्या रूप
 सङ्गरी स्त्री, ४ - निरद कुन्दासन धाम । नित्य विहार के चार
 अंग हैं । नित्य विहार में श्री स्वागत स्थान का नित्य किशोर
 रूप ही वृत्तमान किया गया है । किशोरी की का मङ्ग रूप उनके
 पञ्चम पद का परिचायक न दीवर्तनी करणा का परिचायक

१ - मलामाणी गृष्ट रूप सरस्वती

रूप-रसिकत्व की शक्ति याचना

महर्षि शांख्य में परमानुसि कर्मात् कर्तृ एवं
 प्रकृत कुरात् की ही शक्ति कहे हैं^१। ममत्वात् के प्राप्त परम प्रेम
 ही शक्ति है^२। यह कर्तृ स्वतन्त्र ही है^३। कर्त्तृ समस्त कर्मात् की
 ममत्वात् की शक्ति करना और उनका बौद्धा हा भी विस्तारण
 होते पर परम व्याकुल होना ही शक्ति है^४। की निष्कारणाय
 कान्त, शक्ति स्वभाविक स्वतन्त्र - गुण - सत्त्वादि है महान
 रमाकान्त पुनः शीतल परकृत - ममत्वात् की शक्ति की ही शक्ति
 की निरन्तर शक्ति ही शक्ति है^५। रत्नमन्त्र गुण में -
 गुण और प्रेम के बीच का नाम ही शक्ति कहा है।

- १ - वा परानुरक्ति दीप्ता - साहित्य मणि सूत्र २
 २ - वा रत्नात्मन् परम प्रेम रूपा - नारदस्य सूत्र २
 ३ - समुद्र रत्नयोः सः नारदस्य सूत्र ३
 ४ - नारदस्यु वरपिता तिला पारिता वक्रिपत्नी परम -
 अष्टाङ्गुलीति । नारदस्य सूत्र ३६
 ५ - विष्णुर्वाचं नाम्ना प्रभूत्वं १ - १ - १
 ६ - विष्णुवाचिण पत्न्या नाम वक्रावलि तीर्णकि विष्णुस्य पुण्ड्र २२

हरि मक्ति बिना जीवन का कल्याण सम्भव है। मक्ति बिना जावा-
गमन का का सम्भव नहीं है। मक्ति के बिना जीवन मुझे फल-
हीन फुल की भाँति शून्यहीन है। बिना मक्ति के बिना फुल का, लव
ज्वान, ज्ञान प्रद संभव सब व्यर्थ है। हरि मक्ति के बिना कर्म निर्णय
है। मक्ति हीन नर यदि स्वार्थ के कारण किम्वद कर कहेगा है,
तो भी उधका फल जी प्रसार निश्चित है, कि प्रसार फुल का फल
कृष्ण पर मन्त्र मान है दूट जाता है। परब्रह्मण्य ने मक्ति की फल
के लगे पर ज्ञान, कर्मकी पुष्पादि का स्वयः नष्ट होना बतलाया है।
जीव वास्तविक दृष्टि है परमात्मा का ही बंध है, परन्तु ज्ञान मन
सांसारिक फल, विषय वास्तविकों के रूप में फलर जने स्वयं की मूल का
जाता है। मक्ति ज्ञान ज्ञान है। हरि मन्त्र है ही सब वस्तु नष्ट
होता है। यह संसार नाशवान है।

१ - जो छवि हरि धुमिरन नहीं करि ।

सब लव जीवन जान कारण भरि भरि दुःख पारि ।

परब्रह्मण्य पदावली ५० ६४

२ - हरि मक्ति फल हीन नर प्रब्रह्मण्य की पैट छि मक्ति ।

मक्ति की भाँति जीवन है सांसारिक फुल का फल ॥

परब्रह्मण्य वा० पुन्य हरिकवि १०

३ - परसा फल फल निमति फल की वन मान ।

फल उपज्या है स्वयं ही मन्त्र पुष्प की त्वान ॥

परब्रह्मण्य वा० पुन्य ज्ञान कवि २६१

४ - जो कर्म फल हरि मक्ति कर्म नहीं फल ।

जीव का बंधन है कर्म न फल ॥ परब्रह्मण्य पदावली ५०६० ६५

मति में तीन फल होते हैं - काराण्य, काराक और काराका विधि । इनके कारण मति के तीन वैवाक्योद भी नष्ट हैं ।
 तान्त्रिकः मति के दो भेद हैं - १ - बेदी कथा गौणी मति और
 २ - रागात्मिका कथा अंतुकी मति । बेदी मति में विधि विधान तथा अस्त्र मर्मादि का पूर्ण निवारण होता है । उपासक, उपास्य पुत्र, पुत्र्य, पुत्र विधि नेत्र आप, बेदी मति के दो भागों में से एक है । काव्य पराजयिनी में तान्त्रिक प्रेम है जो मति की मूल में प्रवृत्ति होती है और जो रागात्मिका कथा अंतुकी मति होती है ।

मीमांसायन में काराका विधि के भेद है मति के दो प्रमुख भेद बताये हैं । १ नारद मति सूत्र में प्रेम तथा मति की व्यास वाक्यियों का उल्लेख किया है - गुणवाशात्म्यासक्ति, स्वा-
 दकि, पुत्रासक्ति, स्मरणासक्ति, दास्यासक्ति, दात्यासक्ति, भान्यासक्ति, दात्स्व्यासक्ति, आत्मनिवेद्यासक्ति, तन्मयासक्ति और परम विद्यासक्ति।

बेदी मति के कथनीय कथन के नाम का भक्षण, स्मरण, कीर्ति कथा इनके रूप का विविक्त आत्म प्रत्यक्षानुसार पुत्र, कर्तव्य वाक्य किया जाता है । साका मति है जो की एतद्भावा है न काव्य का विधान करतापूर्वक स्मरण, भक्षण, कीर्ति, काराका आवश्यक होता है । परिभाषा का स्मरण ही वह निमित्त पूर्व है जिसके प्रकाश है

१ - कुली दत्त का० ब्रह्मसूत्राय वि० पृष्ठ ६०

२ - भक्षण कीर्ति विष्णोः स्मरण साव देवताय ।

करी कन्दन दार्य सत्यमात्मनिवेदनम् ॥- मीमांसायन ७-५-२४

३ - नारद मति सूत्र ८२

कर्मविपर । का नाश हो जाता है । श्री हरि को कभी कृप्य में
 कारण कर ही उनका भक्त - स्मरण - कीर्तन करता है । उसे बड़ा
 भक्त क्या भक्त - याचना का लिलार नहीं होता भक्त । फिर वह
 निर्भीक होकर परम सुख प्राप्त करता है । श्री नानाभक्तारण की मांगि
 हरिनाम भक्त का भी कृतमन्त्र है । नाम भक्त है भी जीव है -
 पाप-लाप भुक्त जाते हैं और कृप्य में निर्भीक भक्ति का उदय होता है -

भक्त सुख हरिनाम हरि का स्वयं न छानि ।
 सुख सिंग ही भक्त, पाप भुक्त जो नाम ।।

वस्तुतः राम नाम का कला पाप की क्षीय उपवासना
 है । का पर भुक्त लिलार लिलार राम नाम रहता जाता कला भक्त है ।
 नारद भक्ति भुक्त है लिलार भक्ति के पाद पैर, भुक्त, कर्म और वाक्य
 इन चारों ही भुक्तभक्ति के लिलार लिलार भक्त है । निम्नार्थ सम्प्रदाय
 में श्री राधाकृष्ण स्वयं ही सर्वेश्वर परमात्म की पूजा जाति का
 विशेष विधान है । भक्ति लिलार में पाद पैर, भुक्त, कर्म और
 कला का भुक्त लिलार लिलार भक्त है । का प्रकार के भुक्त विधान भिन्न

१ - लया लली रहे परभक्त श्री हरि लिलार हरि नाम ।

श्री भुक्त भक्त भक्त भक्त, लिलार भक्त का लिलार ।।

भक्ति भुक्त परभक्त भक्त भक्त भक्त

२ - भक्ति भुक्त परभक्त भक्त भक्त भक्त

३ - नारद भक्ति भुक्त भक्त

४ - लिलार लिलार भक्ति । सर्व जीव की लिलार भक्ति ।।

परभक्त भक्ति भुक्त भक्त

के प्रति उपासक के हृदय में केवल भाव का प्राधान्य रहता है। यह भाव जो है वही पूर्ण की भाव भुक्त करता है वही भक्त है। इस प्रकार के भक्त विधान में ही भावान के किशोर की सेवा के साथ ही उनके समस्त कण्ठक, प्रणाम, नामोच्चारण, कीर्तन, ध्यान तथा यज्ञ कर प्रभावशाली प्रकृतिक हृदय की उल्लास जाति जाता है।

भक्ति के क्षेत्र में वास्तव, सत्य एवं आत्म-निवेदन का ही महत्वपूर्ण स्थान है। भक्त वास्तव भाव से भावान के समस्तिक हेतुओं एवं अभिष्ट कल्याण का भुक्तमान करता हुआ उत्तरी भुक्त की याचना करता है। भावान में समुत्त साधक है। वे काम्य के सम्य और काम्य की काम्य कर सती हैं। उनके भक्त की अभिष्ट, दीन-हीन और काम्य है। भावान केवल के परम भाव्य हैं। केवल की उनकी कृपापूर्ता एवं महत्त्वता पर पूर्ण विश्वास है। प्रभु की भक्त वास्तवता, कल्याण एवं सम्यता का प्रथम वास्तव भक्ति का भावना का प्रभाव है। विनय करने हुए भक्त सभी भावान से कुछ भी विधाना नहीं चाहता। वह उनके सामने सब कुछ छोड़ कर सब केता है। उनकी सभी उल्लास के लिए आत्मनिवेदन-

१ - आरति प्रभु कल्याण भन करत मुखि परो ।

ठाठो बसवार द्वारि करत कानि परो ॥

मोह की लियो बुझारि परो पुं० बाँट परो ॥ परब्रह्म पदा०

२ - परब्रह्म पदावली पु० सं० २५

३ - जो कम नै सुखु न लोह । प्रभु करि है राम पुं० है लोह ।

४ - कम है लोह लोह कम पुं० कीर्तन प्राण विषुं परो ।

कम पुं० ही लोह लोह, लोह । आरति करि न परो ॥

परब्रह्म पदावली पु० ६

१३/१२/५

स्मरसिन्धु ने छीला बिछोड़ में हरि मछि-
माधुरी * की रक्ता की है । यह हरि मछि समस्त कर्णों में
जिह्मोर है । इसके समान जोह और नहीं है -

जो मारन हरि मछि है, सब कर्णों जिह्मोर ।
मछि जनि को मध्य कर दा हन नहिं जोह और ॥
जबल जियण्ड राव मुनो मुनो कल का नभावा है ।

मछि के सम्बन्ध में स्मरसिन्धु लिखते हैं :-
परा प्रेम नमवादि है, उला, मध्यम हीनि ।
जब हमने कानि कही, सुनह कान्य प्रदीनि ॥

जोह जो प्रेमर ले कानि का कर्ण निम्न
प्रकार है :-

मनन कीरवन जो स्मरन पुका बुनि पद देव ।
मनन वाक्य रु सत्यता, कवन जनि रुव ॥
ह नमना के ले हैं, जब हवन पाछ्यानि ।
सकनि मुह बुनिवो कवा मवन मछि कीह कनि ॥
हरि मुन नावे करति जह, कीरवन है जोह ।
जक कि बुरावि न मुकही, सुमिरन मछि जोह ॥

१ - छीला बिछोड़ - स्मरसिन्धु पुस्तक ४५-४

२ - मुन मुन में कानानि रक्तो जियण्ड कानो राव ।

जोह जो स्मरन कही, कहीं भी कथ ॥

छीला बिछोड़ स्मरसिन्धु पुस्तक ४५-४

३ - छीला बिछोड़ - स्मरसिन्धु पुस्तक ४५-४

सभें सभें देवा लो, सभें माँका धारि ।
 फाँठ सैन प्रकाँ लो, पूका लो विचारि ॥
 बदन लछाईं फाँट दी, का जिर विर उमार ।
 नव सैका लो माँक है, पुनि नमिह तिर नाह ॥
 पेंका माँक पु यक गही, पावे लो प्रमार ।
 का जिर का जिर के लो, बंका बाँसवार ॥
 रहे काम कर जीरिह, जो न दाहा मंग ।
 दाह्य माँक लो जाँवर, पुनपु दल्यत्य प्रम ॥
 लपु न किहुरें संग रहे, कि विर जनी श्याम ।
 फुला रावे मिकता, दल्य माँक लो नाँप ॥
 का मा का फु नैद्वी, दल्यविह लप वल्लु ।
 की सपका हरि मिची, काकम नरपन एजुवे ॥

परिशिष्ट, कुलेव, प्रकाद, पुन, पका, कुर
 जादि लो सदाहरण है । कानान, लोम, मति जादि नवका माँक
 है लो नै नरपूर है । यक हीन माँक है । नवम पुन माँक में काक
 के लमस्त निमन लुट जाते हैं । का माँक की ज्या दका लो जाकी है -

१ - लोका विहोति - कपरदिहिय पुन ४६, ७ वे ल

२ - लोका विहोति - कपरदिहिय पुन ४६-४७ - ४६ - ४७

३ - हीन माँक लो मल कही, का पुनि नवम पुन ।

पावे फुटि काक है, फुटि काक लप नैन ॥

लोका विहोति - कपरदिहिय पुन ४७-४८

बकि :-

उन्मत्त है कि कि किरे, सुनि न रहे घर बार ।
 है उन्मत्त रीमांश है, दुगनि कौनका घर ॥
 लोह पेद की कानि जो क्यू न मो नहिं लं ।
 गुल त्रस जू कड तंज, बिभरे लोह निरंत ॥
 काका और सुनं नहिं, कांतिन ली न और ।
 गुल सौं और कहे नहीं, हति रोवे कौं नौर ॥
 कबहु नदगद् कंड करि, लम्हनि लीत प्रकाश ।
 कबहु धुई उन्मत्त है, नांवाह मेरे गुलाब ॥
 कबहु मोन नहिं है की, गुल्य को किन कूति ।
 हरिं विनि प्रेमाशक्त है, काह सके सुनि मुक्ति ॥

इसके प्रथम में प्रेम नाक प्रगट होती है जो निर-
 दिन नींद नहीं आती । उपरिस्मृत उदाहरण के रूप में प्रेम सुंदरियों
 की कानि है जो नीम मेह से परी रहती थी -

जो प्रेम सुंदरि ली, यह प्रेम ली हीनि ।
 है कापनि हरिणी नहि, नारि नारि मेह नहीनि ॥

१ - डीठा विनोद उपरिस्मृत पृष्ठ १० - १२ से २३

२ - विनोद नींद न आवती, र प्रगट उन्मत्त कानि ।

विनोद प्रगट कानि, प्रेम नाक लोह कानि ॥

डीठा विनोद पृष्ठ १० - १२

३ - डीठा विनोद - उपरिस्मृत पृष्ठ १०-१६

निम्नोक्त ज्ञापना

स्परितिक निम्नोक्तार्थ है, उनके काव्य में निर्गुण-
पातना प्रकट नहीं हुई है। परन्तु ऐसा नहीं है कि स्परितिकदेव के
काव्य में निम्नोक्तार्थ स्वीकारना न मिलती हो। निम्नोक्त सम्प्रदाय
की परम्परा के अनुसार उनके काव्य में भी सर्वेश्वर महाशक्ति के प्रति
हो गई मक्ति मानना किताबें देती है। निम्नोक्त सम्प्रदाय में सर्वेश्वर
मन्त्रान की हो रहीपरि देवता माना जाता है। क्योंकि ये ही
निम्नोक्तार्थों के लक्ष्य हैं। स्परितिकदेव के काव्य में भी सर्वेश्वर-
मन्त्रान के प्रति मक्ति मानना दृष्टिगोचर होती है :-

काव्य के लोभ मन्त्र, काव्य के लोभ देव ।

रहित वहु कर नैव करि, सर्वेश्वर की देव ॥

स्परितिक देव के काव्य में अन्य लोक स्थलों पर भी
सर्वेश्वर नाम भी आया है। यदि सर्वेश्वर की मक्ति जानकी हो फिर
जानने की कसिष्ठा नहीं रहता क्या उनको जान लिया हो और वहु
जानने की नहीं क्या क्योंकि यही सब होर विमानन हैं ---

रहित जानी क्यों की, मन्त्रान की मक्ति काव्य ।

की सर्वेश्वर जानकी, ही मे कही न जान ॥

सर्वेश्वर की रसिलीय, की जागन की बीर ।
 जानी है ली जानि है, जिसके लुके एक ठौर^१ ॥

निम्बाने सम्प्रदाय की विशिष्ट उपासना -
राधाकृष्ण की निरुप सेवा है । इस सम्प्रदाय में सर्वप्रथम भक्त
 वर्णित राधाकृष्ण की निरुप भक्ति प्रकाशों का विधान करा
 है । भरतिलीय के गुरु हरिदास देव ने अपनी महावाणी ग्रन्थ
 में रसीपासना का वैदिक एवं सांन्यास वर्णन किया है ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

१ - भरतिलीय वाणी राधारीदा ४१ भा० राधप्रसाद झा

जनन्यथा

स्परशिक के वृष्ण और राम जन्य हैं । ये समुद्र की वृष्ण भी निर्गुण हैं । स्परशिकीय का प्रभु सम्बन्धी इष्टिजीन जति व्यापक है । उन्हींमें लोक स्थानों पर उनके सर्वव्यापी स्वरूप के दर्शन कराये हैं -

प्रभु व्यापक सब नादिक के स्वरूप पर स्वरूप दिखावायें ।

स्वरूप नीर परतेव नाम का नादिक समावायें ॥

युग निर्मल, ईश्वरस्य निराकार, सकल व्यापी सुख मूक और सब में समाया है

युग वेषन निर्मल निराकार आकार हरि रूप निम रूप तावद नावी ।
नाहीं कहा सकल व्यापी न सुख मूक सुख जीव जेसादि सब में समायी ॥
युग निर्विष्ट आविष्टि ताविष्टि साक्ष्य युग नाति पैरी सु भेदावपायी ।
नीर निस्वार कारणि कृपा विंदु तुही फाट परदा प्रभु नाम जायी ॥

एक प्रभु अधिपत नाथ है किन्ना प्रभार है साक्ष्य में पावक,
पुण्य में सुवाह है, विरु में देख है, दुग्ध में पूज है, ली प्रभार आरा-
जता कहे है हरि फाट ही जाता है :-

बलिब नाथ निरंज राधा । बंज बर्म रहे समाधा ।
दिष्टि न दीने युष्टि न बाधि । कष्टि नही सकाँ न गवाये ।
दीति प्रगट सकल सकारावर । जावानका न करे सदा गिर ॥

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

बंज नाहि निरंज जाना । ज्यो बाबल काष्ठ पाछाना ।
कीड़े मयन प्रगट होय जाय । मंज हीन होय तिही जाय ॥
बुध नाहि ज्यो बंधे सुखावा । यो सब नाहि ~~कै~~ प्रको पाछा ।
ज्यो ठेठ ठिठ में दाखाने । पीछा है प्रगट होय जाये ॥
ज्यो बुध नाहि पूर रहे समाधा । मयन किया है बाहर जाया ।
बोह प्रगट हरि कारावली होई । ज्यो सुमिरे कि न सुखदाई ॥
कर नविन्त्य हथ्या नी तारी । नाना रूप देख कि पारी ।

हरि के स्वल्प का वर्णन इस प्रकार किया है ---

कनक सक्त कल जैने । कंठ्यानी बज्जुत रहे ।
कनक करण करण कलावा । त्याद विविध कि सदा सुमावा ॥
बंजित पुराण जमात्रा सीई । निराकार आकार न सीई ।
परम जात्मा पुराण गुंठा । बार मल साधनी का जैता ॥

यह एक है, और सक्त का एक सार है ---

१ - रूप सिकन्दर (उत्तराई) इन्द कवि २०६ का० तारिका प्रवाद -
निकट ।

एक कौला एक रघु एक माय एक तार ।
 एका एकी एक ही एक सक्त एक तार ।
 इन्द्रा इन्द्रास्य साहव उग्र एक समान ।
 सत्ता के रजाव उग्र एक एक वाप एक जान ।
 हव रघु कौरि एक ही कदे न न दुखन लीया ।
 उत्पति मादिन रुद्रमंत्र मे अतिगर लीम ॥

यह काल, वाग्व्य रक्षक, अविनाशी, जगम जगिषर तीर तज है :-

अगति नाथ काल कह वाग्व्य रक्षक ।
 अविनाशी जग करन अविनाशिकार कृपा ॥
 जगम जगिषर कह निगम वाग्व्य ते न्यारा ।
 वाग्व्य वागी जग कर उगम जागरा ॥२

यह पूरा निरंजन, निर्विहार, निरिद, निराकार
 निरीप, निराचार तिष्ठति में निमित्त है ---

१ - २५ एतिस्येव (उग्रराष्टी) इन्द्र कविद ३१६ का० शारदाकृत
 २ - " " " " ३२० "

नारायण निर्वाण नाम निम्न निर्माह ।
 निर्नीतिन निरूप निरन विरुद्ध निरुद्धाह ॥
 निरि नाथ निर्जन निरिनाह नरिनि निरुद्ध निरिप गेह ।
 निराकार निरुप न मन निरि निरिह ॥
 निराकार निराह्य निरिद्वयन वरा नी निरुद्धा ।
 निरुद्ध निम्न निरुद्ध निरुद्ध निरि देही ॥^१

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

नाम - आधार

रूप रहितकर्म नाम का ही आधार ।

उनका विस्मय है कि जो कुछ भी करता है सो हरि करता है और
किसी के करने से कुछ भी नहीं होता ---

जो कुछ करे सो हरि करे और का किया न कोई ।
और का किया कष्ट सत्य हरि करि है सोई ॥
जब मन बाजार हरि की ओं आराम ।
क्षण करण स्मरण मोक्षण सुख नामी ॥^१

दीनों पर क्या करते पाते वही दीन कन्धु है ---

हरि दीन कन्धु दीन को क्यात कुपात सो न कोई कुपन पात
दीनी द्वेष की संपात सदा सब सोई ॥^२

छोटे, भेदों, पाते सबकी हरि नाम का ही सुमिरण करता बाहिर
क्योंकि एक वही सत्य है ---

१ - उपरहितकर्म हंस कवित १४ भा० आरणाप्रवाद पित्त

२ - " " १५ " "

सौंख्यां पैसा बाहवा दुनिहिये सत्य हरि नाम निष्क न जानी ।
फुट या हाणि की सुनवि जानुं संव हरि मया दीपावि मेरी न्यानि॥

साहे कृष्ण कही जगदा राम एक ही है । उही के
स्मरण है समस्त जगद पुणों की जाते हैं । जिस प्रकार मैं पाये राम-
नाम की मया बाधो —

नाम जगिण हरि एक ही, कृष्ण कही या राम ।
परहराम प्रु के सुनि, दुनिहिये हरि सब काम ॥ ३५०

पद नहीं करि नाम में, पावो कदाहि माय ॥
पदना पावो की प्यो, जिस वाही की जाय ॥ ३५१

हरि के समता भक्ति होना चाहिए । हरि का रूप करना चाहिए ।
और उसे कही कृष्ण है नहीं निमलता चाहिए -

हरि सन्मुख विर नाह्ये, बाप्यो हरि की माय ।
हरि डरते न किताहि, परदा प्रेम मिठाप ॥ ३५६ ॥

१ - उक्त पृष्ठ ३३ की किमीनी विलेखर

२ - उक्त पृष्ठ ३०६ की किमीनी विलेखर

उपना कर्म है कि कि प्रहार बर्षा के बिना जीव
 दुष्टी ही कहा है उही प्रहार पापी नाम के बिना दुष्टी रक्ता है :-

ज्यों बाला की परधरा जीव दुष्टी कुछ नाहि ।
 त्यों प्राणी हरि नाम कि, नाहि फिर मरि बाहिरी ॥ १०८६ ॥

बी हरि का सुमिरण करा है मही निरुद्ध है ---

हरि सुमिरण सुनि ही निरुद्ध ।
 हाथ निरुद्ध बी पीये पनी क ॥ २

१ - उपना पुस्त १०६ बी कौमी विश्वेश्वर

२ - बी स्मरतिनीय - पद ८-३६ का० रामप्रसाद झा ।

वर्णाश्रम - निर्मेतावा

परशुराम देव ने हिन्दु और मुसलमान दोनों को कट-
कारा है। बाहुवाङ्गुलर एवं बाधरी देव-भुषा में जीहं वास्या नहीं
रही है, उनके यहाँ श्रमान है। ऐतनर वाक्य, समन्वात्मन्वा, एवं
रक्षयवादी प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति वाकी वाचित्य में जीहं स्थलों पर
कीकी है। इसी वच नाव का बोधक होता है कि हमें वने निर्मेतावा
की नाचना थी। उनके अनुसार वकी वन्वावृ एक ही वात्मा है, जो
परमात्मा का वंश है। वच दृष्टि है अन्वाक दृष्टि जीहं एवं उदार-
दृष्टि का परिणम वकी वाचित्य है वन्वाचित्य है उपलब्ध होती है।
हम कह सकते हैं कि हमें वर्णाश्रम निर्मेतावा की नाचना विमान
थी।

वर्णाश्रम निर्मेतावा :-

परशुरामजी की है अनुसार उलम, मज्जम एवं वीन
वकी वकी है व्यक्तियों का निर्माता एक वकी वृत्तवा है ववाञ्ज
उलम, मज्जम और वीन व्यक्तियों में वेद कला व्यक्त है वच समान है -

उलम मज्जम वीन की, एक ही धिरका वार।

वच परवा, परशुरा, वरि मच पावे वार ॥

पर्वनामाचार

दीक्षा के समय दिव्य के संस्कार चिन्ते होते हैं, उनके नाम हैं आप, विष्णु, माता नाम और मन्त्र । गुरु की प्रणम्य के रूप में उनको दीक्षा पर धारण करना पड़ता है, जहाँ सभी संस्कार का मुद्रा धारण करना ही आप कहा जाता है । ओं नमः धारण के ही प्रकार हैं होठ और अक्षरान या अन्य मुद्रा निराल गुरु - स्थायी ही धारण कर रहते हैं । निम्नार्थ सम्प्रदाय के अनुसार - गुरुओं ही अन्य मुद्रा धारण नहीं करनी चाहिये । आप नमः प्रायः होठ मुद्रा का ही प्रकार है । ओं नमः आधार की वायु निर्मित मुद्रा का गोपीनाथ द्वारा मुक्तकों में तीव्र शरीर का नाम ही प्रथम संस्कार है । ओं नमः स्नायु का अविनाशः विष्णु भाग्यम का ऐश्वर्य होना है । भक्त में गान्धर्व के समय मात्र दास्यविक्रम ओं नमः धारण करते हैं । इस लोक में सब मुद्राओं ही धारण करना भक्त के पार्षद होने का पूर्व रूप है । पूर्व काष्ठ में विष्णु के माधवेय स्वरूप की जो स्थापना की गयी ओं नमः उसके मूल है और विष्णु के राम वृष्ण का जीव बलाने के लिए इन चिन्तों का धारण करना आवश्यक है । दीक्षा के निम्न का मैं मंत्र और वायु उपकरण में विष्णु नाम का बहुत अधिक महत्व है । प्रति और प्रभावशाली आचार्यों के आप ही ही वेद विद्वानों में मान्यता ही जाती थी और दूर दूर है आर्य का आप के लिए उनकी धारण में आते हैं ।

रूप रसिकदेव वादिना है कभी के लिये भी हरिध्यास देव के पास
जाये थे । रूप-रसिकदेव ने हरिध्यास यज्ञाभूष में लिखा है ---

मल मल सब ही मल, कभी कभी डोर ।

रूप रसिक हरिध्यास की, मल हीति मू जोर ॥

म। मू डोर सम्पन्न कि, सबका ज्ञान ज्ञान ।

रूप रसिक हरिध्यास की, ज्ञान मर मल वाप ॥ १

पूजन - मक्ति

वीर कृष्ण का जन्म है, इसलिए इस जन्म में जीवन का जन्म प्राप्त करता है। वीर परमात्मा विवेक है इसलिए ध्याष्टि दृष्टा [वन्द्य दक्ष] है वीर परमात्मा ध्याष्टि दृष्टा [वन्द्य दक्ष] है। यह सत्य वाच्य को एक साथ कल्पित करता है। यह समग्र - जीवन की अनुमति करता है इसलिए ईश्वर कल्याण है। इन सब जन्मों के कारण ईश्वर सर्वज्ञ और विविध जन्मों का जन्म होने के कारण वीर विवेक है। वीर सर्वज्ञ नहीं है। इस हेतु कृष्ण के जीवन में है। वीर जन्म की अधिकतम नहीं करता। जीवन और जन्म का रक्षित होने के कारण कृष्ण की ईश्वर कली है। ईश्वर कृष्ण वीर कृष्ण और जन्म कृष्ण के जीवन काधार कृष्ण है ही प्रतिष्ठित है। यह निर्मल कृष्ण जन्म का उपादान और निमित्त कारण है जन्म कृष्ण की निर्मल कृष्ण है। यह निरन्तर में एक ही निमित्त रखा है। यह वाच्य सर्वज्ञ कृष्ण के जीवन को प्राप्त करने के लिए वीर ही एक मात्र वाच्य है। जन्म को जन्म दक्ष कृष्ण की कृष्ण रूप में विस्तृत करता ही मक्ति जन्म का वाच्य है। मक्ति जन्म की उपादान वीर रूप में पूर्ण होती है। जन्म की कृष्ण रूप है वीर कृष्ण प्राणीमात्र में ईश्वरीय वाच्य रखे हुए उनकी सेवा करना मक्ति की अनुमति उपादान है वीर वाच्य का वन्द्यः कृष्ण पूर्ण रूप है निर्मल ही वाच्य है। जीवन और जन्म के वीर सर्वज्ञ सर्वज्ञितवान् जीवन मय कृष्ण का - सुखान्ध कृष्ण है जन्म कृष्णमक्ति जीवनानुमति उपादान है। जन्म की कृष्ण रूप मक्ति जन्म जन्म में जन्म वीर कृष्ण मक्ति का पक्ष रूप

है। जीव मात्र ही ज्ञान का स्रोत मानकर उनके प्रति अनुमाना रखना और सेवा करना अधिक ब बरा रूप है। तथा जो ज्ञान ही मुक्त रूप का स्वः करण में हासिल करना अधिक का सीधरा रूप है। एवं प्रकार अधिक की दृष्टि में ज्ञान अनुभव और निम्न दोनों है। ज्ञान और जीव में ज्ञानानुभव रखना हासिल अधिक का सीधरा रूप है। एवं प्रकार ज्ञान की दृष्टि में ज्ञान अनुभव और निम्न दोनों है। ज्ञान और जीव से ज्ञानानुभव करना हासिल अधिक की प्राथमिक काला है। इसके हासिल से विश्व निमित्त - जीव विश्व और काला ही प्राप्त की जाता है एवं ज्ञान की - विश्व पराधीनता का ज्ञान अधिक की काला पर हासिल के ज्ञान और जीवों के प्रति केवल काला ही, काला, मुक्ति हासिल के माय है और काला ही है ज्ञान ही है।

ज्ञान की ही ज्ञानात्मता है निम्न और अनुभव। ज्ञान काला ही है ज्ञान अनुभव पर जीव की काला में हासिल के लिए निम्न अधिक का ज्ञान अनुभव करता है। अनुभव से जीव की ज्ञान प्राप्त होती है। निम्न अधिक जीव के मुक्ति का विरोध करता है। ज्ञान के विरोध से जीव में काला, केवल के विरोध से ज्ञान करता है और विश्व के विरोध से ज्ञान प्राप्त होती है। इसके जीवता काला है मुक्ति और परमात्मा की काला प्राप्त करता है। अनुभव अधिक की काला ही है। अनुभव अधिक की स्वयं अधिक है तथा निम्न अधिक गुण अधिक है। परम पुरुष परमात्मा दृष्टि के ज्ञान में काला हासिल अधिक की काला कर काला प्रकृति। ज्ञान। नामक अधिक की काला करता है। प्रकृति के ज्ञान, रण, काला गुण है। परम पुरुष की दृष्टि, स्थिति और संसार के लिए इन जीव गुणों

के वासन से ज्ञात, विष्णु और शक्ति का रूप धारण करते हैं। पर ज्ञानमान भीरुपणा है। ज्ञानमान भीरुपणा विज्ञान मात्र सर्व कल्याण से रहित और निर्मल है। ये ही पूर्व कथित ज्ञान विषय ज्ञान रूपों के मध्यस्थी हेतु के समान हैं उनकी समानता है ही पूर्व रूप ज्ञान और कथित रूप ज्ञान, ईश्वर की समानता प्राप्त कर ज्ञान से ज्ञान सुख का वास्तव प्राप्त करता है। ज्ञानमान भीरुपणा विज्ञान मात्र सर्व कल्याण से रहित और निर्मल है। ये ही वास्तविक ज्ञानमान परमेश्वर हैं कभी ज्ञानमान-नन्व सुख सुख के कन्दर ज्ञान वस्तु सुख का समीक्षण करने वाले ज्ञान विष्णु और शक्ति ईश्वर रूप माने जाते हैं। ये ईश्वर और उनकी शक्ति विज्ञान के ज्ञानमान के निर्मल रूप पर ज्ञान भीरुपणा और वास्तविकी शक्ति भी राणा के रूप से प्राप्त होती है, भीरुपणा - सर्वेश्वर ज्ञान है।

सत्यमेव जयते

निम्नांक साम्प्रदाय के मानक सम्प्रदायों का कुछ विवरण

सम्प्रदायों में जातीय परम्परा और विचारों का बल महत्व है। ये साम्प्रदायिक जाचार्य के जन्म का हैं। हमारे देशवासियों के कुछ साम्प्रदायिक विचारों का उदाहरण दे सकते हैं — ये हैं कुष्ठियों की संकीर्णता, ऊँचे मुण्ड, ठोकर, संत, पुरुष, गंगा और नदी। कुष्ठियों की माता कोश के उत्पन्न कण्ड में तथा एकीकृत चरण कला चाली। गुरु की शरण में जाकर विषय का उनके देशवासियों की शक्ति है। वह उसका दुष्टा बन भाग्य जाता है।

देवा

प्रत्येक देवा में भी राधाचरण प्रपानका का ज्ञान
रखा बाधित है। नीम भुंगार आन्ध्रम कादि सर्व प्रथम की प्रिया
की का सीना में बाधित काद में भी छल की का ।

बुद्धी का दावी का नाम है का: भी भी है परनाई
पदाईं कावी है और भीम लगावे समय कामनिवा में काठकर प्रपाद
में लोड़ी कावी है । इसका कारण यह है कि बुद्धी चरण देवक
है । नाम देवा का ज्ञान निय का मन्त्र है । नाम देवा की
मानवी देवा का ही साकार रूप है । स्वल्प दुःख बाध्य क्या
मानवी देवा नाम बाध्य है । नाम देवा की कां दुःख की वा-
च्यकता नहीं है कां मानवी देवा में नामी का साकार नाम
ही जाता है । यदि उरीर स्वल्प नहीं है तो प्रष्ट देवा सीना
आत्मन है, ऐसी दशा में नाम देवा द्वारा साक जनन्द प्राप्त
कर सकता है । परदेश गमन कथा प्रपाद काठ के समय नाम देवा
ही सम्मन है आपत्ति काहीन समय में नाम देवा ही सम्मन है ।
नाम देवा रक्षित साक्षा का का ही छल उपाय है । साक नाम
देवा कभी घर पर कथा स्थान विहीन पर स्थापित कहे स्वल्प
देवा की नांति सम्पादित कर सकता है । भी किशु के साथ भी
नाम देवा स्थापित की जा सकती है । नाम देवा पवराने की
पदाति है कि बुद्धी काष्ठ कथा बुद्धिकला पाञ्चांग पर या
वागु पदाति पर " भी राधा " नाम कीति कर दिया जाता है ।
बुद्धी काष्ठ पर भी राधा नाम छोट पदा स्थान मुकुट कादि

यदि कौं पर रोटी भावन यदि द्वारा निमित्त कर चारण
 करना चाहिये । कौं पर नाम चारण के मूल में यह भावना
 निहित है कि प्रेमानुभूति की चरम स्थिति में चारण्य का नाम
 रोम रोम में व्याप्त हो गया है । नाम देवा का एक प्रकार
 का स्मरण और चिन्तन भी है । जो देवा किन्ता किन्ती वाक्य
 उपक्रम एवं उपादान के द्वारा सम्पादित की जाती है उसे मानवी
 देवा कहते हैं । इस देवा का कुंहरा नाम ' ज्ञान योग ' भी है ।
 श्री रामकृष्ण की देवा उन के पूर्व एवं परमात्मा की मधुर लीलाओं
 की मानसिक भावना करनी चाहिये । प्रकट देवा में किन्तु मांति
 मंगला चारणी यदि का रूप होता है उही प्रकार मानसिक देवा
 का भी रूप किन्तु करना चाहिये ।

समाव

श्री राधाकृष्ण की विभिन्न रूपों की छानों का राग रागिनी एवं गानों के स्वर में गायन की समाव करते हैं, जिस प्रकार बल्ल सम्प्रदाय में कीर्तन व्यवस्था है उसी प्रकार निम्बार्क - सम्प्रदाय में समाव गायन की परम्परा है। समाव गायन का प्रधान गायक मुखिया कहलाता है। प्रथम गायन मुखिया करता है शेष - समावी उसी का अनुकरण करते हैं।

समाव गायन राधा माधव की आन्तरिक रूप - छानों की वाक्य भाव विन्यास पूर्ण गान है। कन्धरंग में प्रिया प्रियजन की छाना करते हैं और सक्रियां उस समय जिस भाव का पद गान करती हैं वह रंग समाव में उसी भाव का पद समावी गाते हैं।

साम्प्रदायिक मान्दरी में समाव गायन के वाक्यों का होते हैं। निम्बार्क सम्प्रदाय में समाव विशिष्ट नन्दरी पर होता है। उत्पत्तियों के अनुसार ही पदों के काल है समाव गान होता है। उत्पत्तियों के अनुसार नित्य विचार के जिस पद विन्यास का वर्णन होता है, श्री की का उसी प्रकार प्रसार किया जाता है। समाव के पदों का पद संग्रह वर्णोत्तर कहलाता है। निम्बार्क सम्प्रदाय में महावाणी के पद भी समाव गायन में प्रयुक्त होते हैं। वास्तव में समाव गायन राधा माधव की कन्धरंग छाना का गुणगान है। समाव

की परम्परा कायम है। स्वर और वाद का सुयोग पाकर रागा-
 नुष्ण की रस लीला की स्रवणा है समाज नायक तथा बीवा
 दोनों की रस मग्न होती है। समाज नायक रागावलम्ब सम्प्रदाय
 की देन है जो नायक का प्रायः जीवन मरिच सम्प्रदायों में प्रवाहित
 हो गया है। निम्बार्क सम्प्रदाय का समाज नायक भी उही है -
 प्रभावित है।

सप्तमः अध्यायः

साम्प्रदायिक नैमित्तिक उत्सव

मनवान की सेवा में उत्कृष्टता और दीक्षा होने के लिये सम्मानानुसार विविध उत्सव मनाये जाते हैं। कबूतर जादि पक्षियों के कुल में त्योंहार मनाये जाते हैं, जो की उत्सवों की हीला मनाई जाती है। उत्सव सामुहिक रूप में होते हैं जिसमें एक समूह संस्कारान उत्सव हीला के अनुसार पूर्वानामों की वाणिज्यों का गायन करता है। उत्सव के अनुसार ही ठाकुर की आशुभार एवं सेवा की जाती है। मुँग, चम्परा, जिवार जादि की कन्द-ज्वनि है मुँग वहाँ है राग-रागिनी प्रभावित होती रहती है। अतिमय सुरम्य वातावरण का समावेश जाता है। सम्प्रदाय की एवं विधि का नाम समाज है। ऐसी समाज कर्म दिन तक भी चलती रहती है। साम्प्रदायिक दृष्टि कलात्मा अपने मूल्य रूप है सम्पन्नित होती है।

निम्नार्क सम्प्रदाय में परम्पराकार त्योंहार की प्रकार के होते हैं :-

- १ - देवताओं के सम्मानित
- २ - महापुरुषों के सम्मानित

निम्नार्क सम्प्रदाय में देवता सम्पन्नी त्योंहारों के उदाहरण हैं जो - कन्याष्टमी, रागनवमी। महापुरुषों एवं गुरु सम्पन्नी त्योंहार की निम्नार्क सम्प्रदाय में मनाये जाते हैं जो- निम्नार्क जन्मी जादि। निम्नार्क सम्प्रदाय में हिन्दू धर्म के सभी त्योंहार मनाये जाते हैं।

उत्सव में सम्मेलन हुआ वी रात ही छा भी
 होती है। पहले कुछ मास बाँटे छोटे बाँठों का युगल रूप में भुंकार
 कर समुदाय पुष्टि की जाती है फिर साधु देवा होती है।
 उसमें आमन्त्रित मेम्बरों का र मजदूरी का प्रसाद है उत्सव किया
 जाता है। उत्सवों में कान्ठ, लोही, फूल, लहसुन आदि मुख्य हैं।
 समय समय पर विशेष उत्सव भी होते रहते हैं। कम-दिन जमा
 पारोत्सव विधियों में ही जायाओं की विधियाँ मनाई जाती हैं।

निम्नार्थ सम्प्रदाय में मासिक मास पूर्ण युगल
 उपासना की मुख्य है। इस विषय में मान्यता है कि अपने भ्रम -
 मजदूरी के इस उपासना का प्रसार करने के लिए श्रीगुरुजी अपने कन्ध-
 रंग परिहार की लिखी लकी ली कुछ मण्डल में भेजी हैं। लोहिक रूप
 में वे ही जायाई की जाते हैं। इसलिए पुनर्जायाई के कमीत्सव भी
 समारोह है मनाये जाते हैं। इनकी भी समाज - संकीर्तन, नगर परिपुषा
 साधु देवा आदि किये जाते हैं।

कमठारी की कमी उत्सव प्रायः शास्त्रीय
 रूप पर होते हैं। इनमें उपवास, पूज आचरण होता है। फिर
 निर्दिष्ट समय पर पंचानुष्ठान है मन्थन का अभिषेक कर भुंकार किया
 जाता है। स्त्रीय पाठ, फल मास और संकीर्तन होता है। यह सम्प्र-
 दाय आठम्वर आत्म त्यागि है दूर रहकर अपनी मीरम आदि
 मायका की मन्थन के चरणों में अर्पण करना ही जीवन का पूज

मानता है। निम्नांक सम्प्रदाय में निरुपेक्ष निहारी राधाकृष्ण का सम्प्रदाय विस्तृत सम्प्रदाय स्वीकार्य मान्यता का है। निम्नांक विस्तृत ज्योतिष की ही उपासना राधानाथ रूप में देखते हैं। उक्त वेद की स्थापना के से करने सुझाया है कि उपासना की भाव प्रकृति कादि के नाम पर भी परकीया भाव की ओर स्थान नहीं देते। उनकी उपास्य नहीं राधा है जो कृष्ण के सामाजिक में शिष्ट परम्परा से देखने वाली देवी है। इसके सम्प्रदाय में सामाजिक स्थापना के प्रति निरुपेक्षा और वास्तव-वास्तव स्पष्ट है।

समाप्त

चिह्न

निम्बार्क सम्प्रदाय में प्रत्येक नास्तिक की चिह्न उगाना आवश्यक है। भेषज की ऊर्ध्वपुच्छ की उगाना चाहिये। निम्बार्किय कर्म पुस्तिका में मंगा यन्त्रा कुम्भीवादि की वाक्चिह्न प्रकृति या गोपी - वाहन के चिह्न करने की कहा गया है। निम्बार्क मत के पुनराव- वाहन के चिह्न या चरण के वाक्चिह्न मूढ़ का चिह्न होना चाहिये। चान्दिर में 'ओ' प्रकृति होती है। चिह्न के बीच में विन्दु उगाना कहा है। कुछ निम्बार्कियों में गुरु परम्परा के स्वाम विन्दु उगाने का प्रचार है। यह भीपुष्प के स्वाम स्वरूप का प्रथम है, साथ ही विन्दु के मध्य की रेखा में सही रूप का भी वाक्चिह्न है। अन्य सम्प्रदायों की अपेक्षा निम्बार्कियों का चिह्न सिद्धान्तानुसार अधिक है। उनके मत में गोपाठ मन्त्र रात्रि का वाक्चिह्न भीपुष्प का पुनराव वाक्चिह्न स्वरूप है। उनके ऊपर का चन्द्र विन्दु उनका छार मूढ़ वाक्चिह्न है। यह चन्द्र विन्दु का वाक्चिह्न ही निम्बार्कियों का चिह्न स्वरूप है। निम्बार्क सम्प्रदाय में दो प्रकार के चिह्न प्रचलित हैं -

- १ - ऊर्ध्व पुच्छ चिह्न की वाक्चिह्न के कई मान हैं प्रारम्भ करते समस्त छाट पर वक्ष्य किया जाता है। यह सम्प्रदाय में हार्ध-गोपिक रूप से प्रचलित है।
- २ - ऊर्ध्व पुच्छ चिह्न की वाक्चिह्न के कुछ मान पर नौक छेद समस्त छाट एवं केश पर्यन्त विस्तारित होता है।

सदाचार छार संज्ञा में ऊर्ध्व पुच्छ की मन्त्रा का चान्दिर कहा गया है जिसकी कोई रेखा कृता का रूप चाहिये -

जिस रूप, मध्य में भी वाक्यान्त रूप स्थित रहता है वह विष्णु रूप
 माना जाता है। अतः बीच में स्थित करना चाहिये।^१ मायान के
 रूपों की भी ऊर्ध्व पुण्ड्र की कला मन्दिर करके प्रतिदिन पूजन
 करने की आज्ञा दी है। यहाँ तक कहा गया है कि उसके बिना
 उष्टपूजादि और सम्पत्ति वस्तुनादि सभी निष्फल ही जाते हैं।
 किन्तु ऊर्ध्व पुण्ड्र जिसका न ही उसका शरीर स्पर्शान के समान है
 और उसे पैरों की निर्वीच है।^२ स्थितियों की भी ऊर्ध्व पुण्ड्र करना
 चाहिये। जिसकी उच्चाई के सम्बन्ध में निम्नार्थमें आचार ग्रन्थों
 में उल्लेख है। १० अंगुल का जिसका सर्वोत्तम माना जाता है। अन्य
 सब मध्यम या निम्न होते जाते हैं। जिसका सभी उल्लेखों से किया
 जा सकता है। मरुतु कानिना सर्व कायना है। मरुतु है
 वायु कर्षा है। अंगुल है शरीर पुष्ट होता है। सभी मोटा -
 दाहिनी है। "उत्तं नमो नारायणाय" इन आठ कार्यों की
 नारायणी मुद्रा का भी उल्लेख पर लिखी जा विधान है। स्त्री
 और शूद्रों की अनन्यता सम्बन्ध है ही जिसका करने का आदेश है।

१ - उदाचार चार अंगुल पुण्ड्र २४

२ - उदाचार चार अंगुल पुण्ड्र २३ श्लोक ८

कंठी

कंठी कच्चा माछा के ही रूप है। गले में पाधनने की कंठी
बीर का माछा। पवित्र कछी के पीछे है ही माछाओं का काना -
बादल का कछा गया है। कावान के नाम गुणों के ऊपर छायागति
का बीजक बच्चा की नाम होता है।

विष्णु, माछा, मन्त्र आदि गुरु की बीर है शिष्य की
प्रदान किये जाते हैं। इन कस्तुरी के प्रदान करने से गुरु का शिष्य में
पुण्य प्राप्त हो जाता है। यदि वह विरक्त शिष्य हो तो गुरु के -
पश्चात् संपत्ति का अनुमति मिलती है माना जाता है। पत्नी के -
त्याग वाली विरक्त निम्नार्थियों की संपत्ति कौन - बाकदाद नहीं
होती थी। उनकी वास्तविक संपत्ति कभीकल या जिना कस्तुरी या
प्रदाद जातीकाल रूप में शिष्य केकाल में दत्त जाता था। अतन्त्र
गुरु की पत्नीक रूप में शिष्य की उत्तराधिकारी कस्तुरी मिलती थी।
जो - बरणापादुका, धन, धन-पट, जलान की बीर पवित्र पुस्तक
आदि। शिष्य गुरुदेव की पवित्र स्मृति को अनुमति रखने के लिए उनके
उपयोग किये हुए कछा, मुकड़ी, मोठा, कुमरी प्रभृति की पुनः स्थान
में स्थापित कर लेते थे। निम्नार्थियों महात्माओं की कंठी निधि -
पत्नी के ही कछी थी बीर का भी कछी है। सम्प्रदाय का सर्वस्व
सकलकर उनकी कछी धार संपादित रखी जाती है। जो विष्णु -
मन्त्रक पान्थ बीर गले की मुकरी कंठी से मुक्त स्वरूपों की पाकता
की जाती है वे ही कछाके कछा आदि से गुरुदेव के निवास का
ध्यान किया जाता है।

षष्ठ अध्याय

रूप रसिक देव का काव्य पक्ष

अष्ट अध्याय

रूप रसिक देव जी का नाव्य पदा

वर्ण्य विषय -
रूपरसिकदेव

निष्कार्क अध्याय में हमने गुरु जी मान्यता रखी है ।
जी रूपरसिकदेव जी के गुरु जी हरिध्यासदेव थे । हरिध्यासदेव के यश
का गान करने के लिए उन्होंने " हरिध्यास यशामृत " की रचना की ।
उस सम्पूर्ण ग्रन्थ में हरिध्यासदेव के यश का गान किया गया है ।
उनके गुरु की भक्ता, विशेषता आदि का वर्णन ही इसका मुख्य वर्ण्य
विषय है । यह रूपरसिकदेव की प्रथम रचना प्रतीत होती है । ये -
लिखते हैं -

जाबत है जिहि मुन्य मे, व्यास बिना हरिनाम ।
रूप रसिक टोरे लह, तो भो नहिं जान ॥
मरु मरु सब की गिरी, जमन जमन ठोर ।
रूप रसिक हरिध्यास की, मजन रसिक कू जोर ॥^१

हरिध्यास देव का जो एक बार भी नाम जप्ता है ,
उसके ऊपर उन का जो सर्वोच्चोच्चार दीजिये -
जो कौन हरिध्यास को, नाम जो हथार ।^२
तन मन का वा ऊपरी, दीजे लक्ष्मी धार ॥

१ - हरिध्यास यशामृत - रूप रसिकदेव पृष्ठ २-७-८

२ - " " " " " ४-३०

भी हरिव्यासदेव ने महाभारत की रचना कर सुखद्वार
का उद्घाटन किया -

जो जो भी हरिव्यास ने, रचित किया सुखद्वार ।
महाभारत की रचना की, उन्हींको सुखद्वार ॥

उन्होंने कुन्दावन वन्दु की छीछा बना कर बड़ी
पूजा की । कुन्दावन नाम ने रामाकृष्ण उपासना है । यह हरि-
व्यास कुमा बिना पूर्ण नहीं हो सकती -

भी रामा कृष्ण उपासना, भी कुन्दावन नाम ।
भी हरिव्यास कुमा बिना, पूरणा होय न काम ॥

जब रत्नमेख का ज्ञान है कि वह हरि हरिव्यास बिना
जाना नहीं कर का सम्राट :-

लौह जैसे हरि वीर्य ही मैं है, लौह जैसे हरि पञ्चन मांछी ।
लौह जैसे हरि वाय्वन ही मैं है, लौह जैसे हरि हैं सब भांछी ॥
लौह जू जैसे लौह जू जू जैसे, है परित्याग की डाक न छांछी ।
जब रत्न मेखारि जैसे हरिव्यास बिना हरि जाना मांछी ॥

जिस रूप का भेष, नीम, मजीठ ने भी चार नहीं
पाया है उस रूप भी हरिव्यास की ने नामा है :-

१ -	हरिव्यास यज्ञपुरा	-	रूप रत्नमेख	पृष्ठ	६-६०
२ -	"	"	"	"	१०-६३
३ -	"	"	"	"	१५

ज्यास जु मेद के पारि रिते विनहु मैसु नहीं धन की दरसायो ।
 पांच बी मेद केद कियो मरामारव बी हविदाससु मांछि दिमायो ॥
 शारद माव सुरेस जी हेण मछि मणीउहु पार व पायो ।
 बी रस सुलैम हूँ हें सुलैम सी रस बी हरिण्यास सु मायो ॥^१

बी हरिण्यास के बरणा के बाधय में जाना बाधिये —

रे मन बी हरिण्यास सु, रहिकन की क प्रेम ।
 तिनके बरणाभित बिना, बंध्यो सकल का प्रेम ॥
 रे मन बी हरिण्यास के, बाध जान पिसु माव ।
 तिन ही रों कीये सदा, मल्ल टल्ल की बाव ॥
 रे मन बा संसार में, मल्ल कीक प्रभार ।
 बी हरिण्यास उदार बी, मल्ल पार बी धार ॥
 सु भरी बाध की धिहु, बीसी कहीं बिचारि ।
 रे मन निरखी कर सदा, बी हरिण्यास बिचारि ॥
 राधा माधव मिलन की, बाध यही सब जान ।
 रैनन बी हरिण्यास पद, बीय लो मखियान ॥^२

बी हरिण्यास परम गुरु की के मल्ल करने की ये
 कही हैं किन्हींने बीनों बीनों में पालि प्रदान की है :-

बीकी हरिण्यास परम गुरु की ।

कव ई बाधियाई। चिहुन राति दम्पति सेव पुरेकर की ।

गुरु प्रभुति भरी किन्हीं की बीबी पालि धिहुं पर की ।

१ - हरिण्यास यशसुस - रत्नरत्नसिद्धि पुस्तक ११-१२

२ - " " " " १२, १३ - २१ से २४

भी उपरिस्थित की एक अतिरिक्त रसिक है । दिव्य
महाबाणी के प्रगट करने के लिए ही उनका अस्कार हुआ था । वस्तुतः
ये भी प्रिया - प्रियतम ही दिव्य सखरी साक्षात् स्पर्शिक रूप है
गुच्छ पर प्रगट हुए थे । भी उपरिस्थित की को साक्षात् स्पर्शिक रूप माना
है और त्याग त्याग की परम प्रिया भी रसिकी की के परिष्कार की
सखरी माना है । भी कृष्ण उत्सव मणिमाल का प्रारम्भ इस प्रकार
होता है ---

प्रका सुनारि भी गुरुचरण, करन सकल अब कह ।
तापु कृपा-कल कल ही, कुरुत्सव मणिमाल ॥
करि वारम्भ कान्त है, ध्येयका आवसि ताहें ।
रूप रसिक का नाम को, यो अब सत्य कहलहें ॥

अनुप्रास युक्त, काव्य गुणों से संयुक्त, मधुर एवं समुदाय
भाषा में नव किशोरी के रूप का वर्णन देती है ---

करन सकल करीब रसिक पखरी नव रंग ररी ।
बाव यो ही ली लीकी, मैन कर मागनि गरी ॥
पाऊँ रस दाऊनी रसि मंद मंद सुपाऊनी ।
कूनन कूनन सुपाऊँ रसि दाऊनी रसि राऊनी ।
नौर नोरी मुर नोरी नव किशोरी गाँवहीं ।
कीकि कल कीर माना रंग दर उपजावहीं ॥
लिक लिक सुसुंरि कर कल कल कल कल ॥
कल की रसि कल कल कल कल कल कल ॥

१ - भी कृष्ण उत्सव मणिमाल - रूप रसिकीय पृष्ठ १-२-२

कल्लांवही र मल्लांवही सुख पावेंही सब कुछ वसु ।
 मेन मानों मोन के हें भाऊ कीरति की कियो ॥
 फलहि यह दुष्मान जाय सम्हारि कुंवरि मल्लांवही ।
 निरति निरति कुंवरि सोभा सुखद उर उल्लांवही ॥^१

बुद्ध उत्तम मणिमाळ का अंतिम दोहा निम्न प्रकार

है ---

बी रघुवर कलावही पङ्क सुने विद्यालय ।
 स्पर्शिक जिनके सदा, सुख संपाति सरसाय ॥^२

बी छीछा विश्ववि का प्रथम दोहा निम्न प्रकार है ---

प्रथम पुनिरि हरिनाथ बू - सक्त की के पीय ।
 विन पद - कल्लांवही का रवी, छीछा विश्ववि नाम ॥^३

उसके बाद चौपाई में स्पर्शिकीय लिखी है ---

पांच मैवरी पांच विद्यालय ।

मावरी पांच पांच सुख पाय ॥

या प्रकार विश्ववि सदाह ॥

निम्न निम्न पुनि कहुं सुनाई ॥^४

१ - बी बुद्ध उत्तम मणिमाळ - स्पर्शिकीय पृष्ठ १०१ पद २२७

२ - " " " " " पृष्ठ १७७

३ - छीछा विश्ववि - स्पर्शिकीय पृष्ठ चौथा

४ - " " " " " पृष्ठ २ चौपाई २

इस प्रकार हमें मल शिक्षा मंजरी, रस मंजरी, रसिक-
मंजरी, रंग मंजरी, प्रेम मंजरी, पांच मंजरी, नव विद्यास, नायना -
विद्यास, नित्य विद्यास, रति विद्यास, फूट विद्यास, पांच विद्यास,
नाम माधुरी, माधुर्य माधुरी, गुन्दावन माधुरी, सिद्धान्त माधुरी,
हरिभक्ति माधुरी, पांच माधुरी और चार सुख, सनेह सुख, स्वरूप सुख,
सुखान सुख, खीर सुख, पांच सुख, बीस छीछाओं का वर्णन होने के -
कारण इसका नाम छीछा विहंगि है । मंजरियों में रसिकरंग और प्रेम
का वर्णन है, विद्याओं में नित्य रति वर्णन है, माधुरियों में माधुर्य
नामावलि वर्णन है । पांचों सुखों में चार, सनेह स्वरूप वर्णन है ।
यहिये —

मल शिक्षा रस मंजरी जनी ।

रसिक रंग वर प्रेम कानों ॥

मंजरी में पांचों सुख सुनिये ।

पंच विद्यास वना पुनि सुनिये ॥

नव नायना नित्य रति कलिये ।

फूट विद्यास पांच नौ छलिये ॥

नव माधुरी कवच समुत्तम ।

नामावलि माधुर्य सुहाई ॥

गुन्दावन सिद्धान्त भक्ति हरि ।

ए माधुरी पांच स्थि में भरि ॥

पुनि सुख पांच सुख क भाषा ।

चार सनेह स्वरूप सुहावा ॥

होरी सुख पंचम परिभांती ।

हीठा विंशति वहिं विवि जनों ॥

सुने मुने समुक्त वरा पावे ।

हो निज मळ टळ सुख पावे ॥^१

उनका अर्थ यह है कि कुम्भावन के सुख को प्राप्त करने के लिए भी हरिव्यास की भजना चाहिये ---

हे मन भी हरिव्यास भक्ति, भक्त मूर्ति सब ही ॥

कुम्भावन सुख उद्यम की, और उपाय न की ॥^२

पुनः पांचवीं मंत्रों परा प्रेम की राशि है ।

हरि भक्ति का मार्ग सब जनों में शिरमौर है । इसके समान कोई और नहीं है । -

ही पारम हरि भक्ति है, सब जनों में शिरमौर ।

भक्ती जनि की मध्यकर या सम नहीं जोउ और ॥^३

भिन्न भिन्न वृत्तों का उदाहरण हास्यिक भाषुरी में स्वरचित्तवैय ने इस प्रकार दिया है ---

एक पीछे भित्ति देख्य हीं, देख्य भावहिं धारि ।

भिन्न नहीं वह भिन्न है, वही दिष्टांश विचारि ॥

१ - हीठा विंशति - स्वरचित्तवैय पृष्ठ २३ । ३-४-५

२ - " " " पृष्ठ ४ - १

३ - " " " " ४५-४

जो पिंटा बारि की, बरसो बारि की नाहि ।
 बांछिन में ज्यों फूरी, र क्यु ज्यारी नाहि ॥
 हमेक बर निम्न है, ज्यों फुल फुलना पुन ।
 देवा तिस ज्यारी है, है एक ही रूप ॥

नित्य विहार पदावली में नित्य विहार के पद
 हैं । हमें जो बिलास वर्णन है उसके वर्णन से उक्त उपरिख्येय की
 भी सुब मिलता है :-

बिल पिंछि पिंछि लैं हूं सुत दीन्की ।
 जति ही उदारि ज्यारी हरिनी र कीन्की ॥टेम॥
 लोभ लमाठ लाल के र बारि कीन्की ।
 कंन की भेति ज्यों छेति छपटीन्की ॥
 बरत रम्याव ही हैं सब पिंघि कीन्की ।
 हम रसिक मया मयमान कीन्की ॥

मल की राभिला ही भति है । वह उन्ही सुत दूर
 करने की प्राप्ति करता हुआ अपना वाचना करता है तथा का कल
 करने की प्राप्ति करता है ---

ज्यारी नु लम ही नाहि बेरी ।
 कू बिना जाले दुष हरिये नु लों
 बेरी जल - कम की बेरी ॥टेक॥
 ग्रामि मृदु क-क बलि बलि र नु ।
 ललित न लनक लों सुत की बेरी ॥

-
- १ - लीला विहंगि - उपरिख्येय पुस्तक ५८-२६-२७-२९
 २ - नित्यविहार पदावली - उपरिख्येय पुस्तक ७६ पद ५६

दीन हीन पर क्या प्रेम की ।

तू तुम कि कहीं सरानि निहिं करी ॥

हहिं जगदर का परहरि हीं थी ।

तू कहां सरानि नीहिं निहिं है तू देरी ॥

मन्दागिर में बहिय फिरत हीं ।

तू मलामीत दुरमति की धरि ॥

कृपारि परि अनुपमा की धरि ।

तू दीये का मोनी दस देरी ॥

रूप रसिक का मोनि बाझी ।

तू राखी परन कमल हीं धरि ॥

स्वामी स्वाम देवति नित्य रति रस में की ली
 है कृपारि कहीं ग्रीष्म का जल नी दिव्य जल हीं लगी है । उनका निहार
 बर्णन देखिये ---

देवि री देवि लखन लखी री

ग्रीष्म रसु रसि रसि हीं लखति ।

प्रेम कृपार परत रहे निरालिन

देवति रति रति रस में पानति ॥८७॥

बाहिन नदीन का लीखति

रदन लदन लखि लीखति लीखति ।

निष्ठ लख निष्ठ लख के लख की

लख रस लख रसि लखि लीखति ॥

नित्य लख लख मुदादन,

नित्य लख लख के पुरन लखति ।

१ - नित्य निहार पदावली - कृपारिदेव मुक्त ८३-पद ७७

रूप रसिक बहिराङ्ग ।

निरति निरंतर स्वांग स्वांगि ।।

जब प्रणार रूप रसिकवैष की स्वांग स्वाम के
विचार को देखकर बांगविष होवे और नित्य विचार में लगी
रही हैं ।

1- निम्न विचार पदाङ्की का सत्य देव सूक्त 38-39 पर 5 ।

रस

निम्बार्क सम्प्रदाय के लोक कवियों ने राधाकृष्ण की वात्सल्य छीटा का प्रतिपादन किया है और राधा के स्वकीया भाव पर विशेषता बत किया है। सच्चिदानन्द मयदान की रस-स्वरूप है। श्री राधाकृष्ण उर्ध्व कृष्ण की जाह्लादिनी लीला है। श्रीकृष्ण की माँसि श्री कृष्णमानु कुलारी ज्ञ प्रोत्पन्न उनकी वन्दनादि का वर्णन है। सुमतिश्रीर श्रीराधाकृष्ण की पूजा - उपासना और उनका ही ध्यान करने का विधान मय-पुराण के पाञ्चक इन्द्र ब्रह्म ८२ के लीला ३५ से ५० तक पन्द्रह लीलों में मिलता है। कृष्णायन में गोपी, भक्त्य और उनके सन्निवृत्तयों राधा की सत्तियां पूज्य है। उन सत्तियों में श्री राधा की परम पूजनीया है। सत्तियों की हेन्दु रसा श्री राधा की हैं और सबकी प्राणनाथ भक्त्य श्री राधा-कृष्ण हैं। श्री निम्बार्क सम्प्रदाय में रसोपासना की प्रधानता है। इस पद्धति वाले साधक को लगे ही श्रीकृष्ण प्रिया श्री राधा की की सती मानकर दिन रात श्री सुमतिश्रीर की सेवा करना लीला है। यह भाव सत्तियों की कस्तूरें बर्न जलता है। श्रीराधाकृष्ण की छीटा और परिकों का ज्ञानिबर्ध पुराण में पर्याप्त विवरण मिलता है। श्री नारायणदास उर्ध्व का कथन है कि "निम्बार्क - सम्प्रदाय में निरुक्तिशरीर राधाकृष्ण का सम्पूर्ण विस्तृत छीटा सम्पूर्ण स्वकीया भाव का है। निम्बार्कयि एक ज्योति गौरी छीटावरी राधा भावक रूप में देखते हैं। लीला वेद की पर्याया के है हकी अनुपायी हैं कि उपासना की भाव पुष्टि लादि के भाव पर श्री परकीया भाव

को कोई स्नान नहीं दिया जाता^१। स्पष्ट है कि निम्नार्क सम्प्रदाय में स्वीकीया नाम की ही प्रशानता दी गयी है। इस प्रकार निम्नार्क सम्प्रदाय में ही राधाकृष्ण के स्केति, नित्य - विहार औरकीकी उत्सवों का विस्तृत वर्णन है श्री राधाकृष्ण के दाम्पत्य जीवन, स्केति, नित्य विहार और उत्सवों के वर्णन के कारण भुंजार एवं के संयोग का ही विस्तृत वर्णन है। यहाँ जहाँ नित्यकी भावना है वैसा है। राधाकृष्ण के हीनव्यं वर्णन के वर्णन में यहाँ किसी भी बात है। यदि कोई दूसरा एवं प्रसन्न है तो वह नित्य एवं है। वास्तव में संयोग भुंजार की ही प्रशानता है।

संयोग भुंजार की प्रशानता होने से राधि
स्वादी नाम है। कृष्ण राधिका आठवला है। लकी, मुली,
ल, लला, कन्द सांकी, पुष्प नदी वट जादि सदीपन विभाव
है। स्वराधिकीय हीका विर्गति में लिखी है —

कीक का कुं में कुं, नागर निगट प्रीन ।
पुष्प का वास्तव्यन कल, राधि एवं वाक्य हीन ॥

स्नाना और स्नान दोनों का रंग भीला वर्णन
एवं प्रजार है —

१ - निम्नार्क सम्प्रदाय और उनके कृष्ण यहाँ लिखी गयी -

का० नारायणकल जहाँ पुष्प १३२

२ - हीका विर्गति - स्वराधिकीय पुष्प १२-८१

स्वामी स्वाम दीठ रंग नीले ।

ठाठे कुंज कन की बहियां गर गर बहियां दीर्घ ॥ टेक ॥

बह को क मू मू कोलि वाह बांन निवि नावे ।

कुन्दाक कून्को फल फलियो धारंग राग सुखमि ॥

वरु भेरी पुन नीर भेति निर पालि की पुनि धाही ।

कुल निगीर नीर हवि ऊपर हय रविक बलि बांही ॥^१

स्वामी स्वाम सहेलियों के साथ अपना कर्म मूढ

रहे हैं —

मज्ज दुपदरी मेक निवि निवि

कूठव हय कूना क मांही ।

स्वामी स्वाम सहेलिन संगति

बलि हय रेलिन केति बांही ।

किर का किरव मेक से रावे

के पुनकी निवि की बलि बांही ।

प्यारी परकी बहुरि निव संगति

निमलव बांनिन मेद बांही ॥

मेक की मेक दीठ का

बहु निवि का बांनिन पुनकी ।

हय रविक उला उला हवि

हवि रवी निविनी विव बांही ॥^२

१ - नित्य विहार पदावली - स्वरचित्त्विय पुष्प ६२ पृष्ठ २३

२ - नित्य विहार पदावली - " पुष्प ६२-२४

उज्जैन से प्राप्त श्री लीला विंशति के अन्तर्गत श्री वृन्दावन माधुरी के अन्तिम दोहे :—

जलविपरीति रूपरसिकनिर्केंद्रीयेंवदैयुगलपदधीति॥१॥ पंहरासैरुस
तासिपामासोनमआसोज। यहप्रबंधपूरनभयोशुक्लासुवर्दिनयोजा
रतिहंदावनमाधुरीरसिकनजीवनप्राने। पूर्णतापाईपहैदोइअसीदो
होना॥१॥ दोहा अवसिदांतजुमाधुरीकरोंलिखनमुखेदाई। श्रीर

[४]

भाषा

रूपरसिन्दूष ने की हरिव्यास देव के शिष्य एवं स्वामी
स्याम के उपासक थे । ब्रह्मा महिष सम्पत्ती समस्त रत्नार्थ प्रायः ब्रह्म
भाषा में ही थे । रूप रसिन्दूष ने भी ब्रह्माभाषा में ही कभी ब्रह्मों
की रचना की है । उनकी ब्रह्माभाषा परिनिष्ठित और ठोक्कीटि की
संस्कृत भाषा से दान्तिन्य रत्न की होती है । बृहद्वाचस्पति महिषास के
छोटीछोटी प्रकरण में कवि स्यामा स्याम की कवि निहारने की कथा
है - बीकन बुद्धि मधुर, भावुर्न मुग्ध संयुक्त भाषा के अनुप्रासका रूप
देखते ही करते हैं ---

बाव कवि में निहारो की ।

कूटनि कील कल कूटनि है जव पारो री ॥

खील सुन्दर कल्प मनोहर, कल कल्प निहारि ।

हलिल भावुरी बलिल कलिल दुलि देलि वलिल म्यारि ॥

मुरबनि मुरनि मोरन पुरबनि, कीली सुन सुहार ।

परन प्रभा पटली बटली, पर पुठकि की सुनेमार ॥

कूनि कूनि ककलनि दिनि ककलनि, रलकनि रल वरसाव ।

कटकि कटकि कट क कटकि कटकि कट कटकि कटकि कटकि ॥

उमं अं अं अं रं रं रं कलक कलक के ।

कलक कलक विनल कलकल कल कलक रवि में ॥

कलकि कलनि में कलनि अं कलकि कलकली बीप ।

देखत पुन निमेष न डगल, पनि नुरे कल रीप ॥

विन्द केति कथेति रेति एव कोति कोति बीर ताठ ।
परम पीय पाने कुराने, वरत परत केनाठ ॥^१

फूँटों के नुमान कान पलने, फूँटों की माठा
पलने फूँट डीठ पर खाना खान की बुलोनिक बो रहे हैं देखी ---

फूँटे फूँटे राका है, फूँटन की डीठ पर,
फूँटे फूँटे फूँट की माठा उर पावें ।
फूँटन के नुमान कान फूँटे फूँटन के,
फूँटे फूँटे फूँटन की बटे बनि बरें ॥
फूँटों प्यारी की बाव फूँट के करव बाव ।
फूँटे पिय रिमिक पीके को रंग गहरें ॥
फूँटे फूँटे दोरि स्प-रसिक प्रवीन बोला ।
फूँटे नैन पीन परी माधुरी हैं गहरें ॥^२

एव बीड़ी की समता कीहं नहीं कर समता ---

करी किम कोटि यथन की कीहं ।
या बीड़ी के पट्टार की कीठ के न व हुवी न कीहं ॥
एक रंग एव कल्य प्रान काँ, कल्य मात्र वन कीहं ।
जानेंत केहनकी बलि बलि यह रूप रसिक का कीहं ॥^३

धरत, धरत, कीकत रुन्दावली नुन भूति नपुर माणा
का उदाहरण देखी ---

१ -	बृहस्पत्यन	मणिमाठ	-	स्परसिक के	पृष्ठ २१ पद ६६
२ -	"	"	"	"	पृष्ठ २१ पद ७४
३ -	"	"	"	"	पृष्ठ २२ पद ६४

जान जान जन गरबा नीर नीरि,
 नैक निमुनि छोरि जार्ने कुकुनि नीर की ।
 छेदीय पीपी कछनि फरिहनि की नीकी धुनि,
 धुनि धुन धनि पछवनी बहु नीर की ॥
 रावि निनि कोछा विराये नीर छछ नीरी,
 नीर की रसाछ नीरी कुछ निनीर की ।
 कसुन कसुन रूप रसिनि निहारि के,
 पावत हैं केन केन आवेद न नीर की १॥

यशोदा ने गोमाछ छछ की जन्म दिया है । उन कृष्ण
 का रूप सोन्दर्य क्या है देखी ---

नीटिक नाम सुपांन कछि नीरि, कृष्ण कछ कछ नीर की ।
 पछव रूप कसुन नीर कसुन पछ-नीकी पछि की गति पं ॥
 नीर सुनेह सुहाव छछीने, माछ निहाछ धुन धुटार ।
 उन्मत्त नाचा कपर धुरी, चिबुक नीर सब पुन नी नीर ॥
 नीटिक रावि मुन छवि पर नारुं, भानि पर उन्मत्त निहार ।
 नीटिक नीर नीरी छछि, नीर सुहावा कपर निहारि ॥ २

कही प्रणार नीर कछी से संयुक्त भुनुर उन्मावही
 देखी ---

नीर छानि नीर की छानि धु कछनि ज्ञानि वन कू ।
 सन वन वन धिनि सुन क, निरनि निरने कू ॥

१-सुवसुत्तव मणिमाछ - स्मरधिलेख पृष्ठ ३६ पद ६६

२ - " " " " पृष्ठ ७१ पद १०३

पाँवाँनि पाँवाँनि घरनि पुकारावति, पाँवाँनि नृत्य करीति ।
गाँवाँनि घुराहिं पिछावाँनि पिछाहिं, रिक्कावाँनि बस उपरांति ॥

स्मरतिव देव का कल्प है कि उनके पिता जी ने उनका नाम रसिकरूप रखा है और वे यह विनम्र करते हैं कि - हे प्रभु प्रेम की । वृक्ष मणिमात के परिशिष्ट का एक कविच देखिये ---

मेरी नाम मेरे पिता बरखो है रसिक रूप,
सौंद सत्य करि के को सभे जाव जायो है ।
बरख दितायो लीक पछी मोहि लहीयु की,
रही का लीहि बह ललितान्न दायी है ।
करी ली काधिक को कविच नरेख पूछुं,
गोद बाव लालन की कुल विकारायो है ।
लीक यह लिखी क्यारि मझारान हूँ ली,
गरीब निमाव देहु नेहु मेरा का मायो है ॥

कोक स्थानी पर उनकी माया भव है । लीक राम रामनिर्वा का प्रयोग उनकी माया में हुआ है । इसलिए उनकी माया में स्थापनात्मक रूप है गेयता लागर है । वृक्ष उत्पन्न मणिमात के परिशिष्ट के पाठनी प्रेम में वे लिखी हैं ---

मझारान लीक फलना पछि कूछत कूछ ली मात कूछावति है ।
कुल मावति बाव दूना घुर ली का मावति को घुरावति है ।

१ - वृक्ष उत्पन्न - मणिमात - स्मरतिव देव पुष्प १२४ पद २४४

२ - " " " " परिशिष्ट ५०१५ कविच ७

जोष जोरि जिं मुठ जोरि रही, ज्यों बलीरिहि बंद सुझावति है ।
बलि रूप निहारिहि बाख्ति प्राण प्रत्यंगन भीर समायति है ॥

गीबर्दन बालीत्यय में बन्द के जीव करने पर
जब बाकाश में भेष धार जाते हैं तो ऊँच व्यंजा से भर्षों की गज
तथा मयंकता का एक चित्र बनाने वाली जा जाता है । देखिये ---

अन सुख ही अन्त सब भेष पाये ।

वरति वरति वरति वरति, वरति वरति वरति जाये ॥

बाधत बाधत बरु अग्नि क प्रमनवर्त सकल प्रवृत्त प्रव पर च्छाये ।

धीर कर धीर कर धीर कर धीर कर धीरकर धीर कर कराये ॥

उठका पाव जावाप बापाव का कर केवल का छूटि जाये ।

धीरि धीरि धीरि लाकरी धीरि लाकरी लक उठायि ॥

देखि मे भीत के पावि प्रव क सबे जाय गीपाठ की वष सुनाये ।

हरी विनि कही जब रूप रहित सु प्रु, उच्छागिरिराव सबकी कथाये ॥

धुर मे मेघ वर्णन जीव प्रकार से किया है और
भर्षों की विविध छानाये की है । परन्तु रूप रहितकेव का भी मेघ
वर्णन अविश्वीय है और मेघ वर्णन की सुन्दर वर्णन में उनकी भाषा
का भी जीव दान है ---

लेका से नीके हैं र कंका हैं नीके हैं

कुरंग से नीके हैं र मैं जाति नीके हैं ।

हैं न सुख ही के हैं र मेन सब ही के हैं,

र धीर चित ही के हैं वरन हरि ही के हैं ॥टेका॥

१ - बृहद् उत्सव - नागनाथ - उपरिस्थित परिशिष्ट पृ० १४

२ - " " " " पृष्ठ १३२ पद २०४

मीन चरती के डी ३३ रजनी के रूप

रसिक रही के प्राँन जीवनि र की के हैं ।

टोना र कही के हैं निनीना मोहनी के हैं

किछीना रवि -पी के हैं कि दोनां के की के हैं ।

दो चार स्थानों पर जगता कहीं कहीं पैदा की फल
विस्तार देता है जहाँ पर पैदा की भाषा के कुरुरण पर भाषा का
प्रयोग हुआ है । की राधा कमीत्यम का वर्णन देती ---

छाटा दित्त नित्या के कीला लाव ।

जणी के छारै र गरीब निवाव ।

पूरियां किउ कमाइयां नन्दराय कुषामन्ना ।

छदे राधा उपान्निषां कीर छदे उपन्नां कन्ना ॥

बीबण के कल छहै छयां मुपत छडे नन्ना ।

जसी कुँ कजरी की गल्ला माणियां बुसा मुँ कन्ना ॥

छानू रूप-रसिक की रानी नीकी छाप कहांवा ।

की रठियां जंजी पैलण की निधर कहां पांवा ॥

पैदा की के नाम छूँ के फुट का उदाहरण देती है ---

१ - नित्य विहार पदावली - अपरिचितमेव पृष्ठ ७७-७८ - ४७

२ - मुकुटस्थव - माणिमात - अपरिचितमेव पृष्ठ ८२- १६४

बरबुरवार रही घेंडी कर बंदी बाँ दे ।
 तेरा भिखार चलक दी बुलियाँ कम चलत बिहेंदी बाँ दे ॥
 ज्यों जुल दी जीकी चन्दी जुन दी लुन छाँचनियाँ दे ।
 कप रसिक गरीब- बरबर दे बंदी पैरी पर दी बाँ दे ॥^१

यह पुनार हम सब से है कि उनकी भाषा निम्नोक्त
 है ।

बृहस्पत्यम भाषाभाष में हरबीत्यम के वर्णन में सुन्दर
 वर्णन है साथ कुछ सुन्दर लक्ष्य भ्रमणा एवं मनोमलक भाषा का
 प्रयोग दर्शित है :-

मुन करकनि चरकनि कंचुकि कम बुरि नु रहे बुरि कं ॥
 कुंठ कचक ठठः पीसनि की, नरक मात कनि देत ।
 फलक ठठक नन फलक, फलक मुन, कलक संगीत लोस ॥
 का फलकनि नट कटकनि कटकनि नृपान नर कटकनि ।
 कटकनि धार मुन की फलकनि, ऊँ ऊँ कटकनि ।
 कंद कलनि नोक्ष की ललनि नु कुलनि जलनि का कूठ ॥
 ललन कान कन पिच्छि नु नकल, किरनि किरन के कूठ ॥^२

१ - बृहस्पत्यम भाषाभाष - हपरविन्देय पृष्ठ ६२-६०६

२ - " " " " पृष्ठ १२४-१२४४

स्वरसिद्धि के नायक थे। उनके काव्य में जीक राम रागनिर्घोष का प्रयोग हुआ है। राम-रागनिर्घोष के प्रयोग के कारण उनका काव्य सारंग मधुर एवं सरल है। उनके काव्य की लुदायवर्ती बड़ी संयत एवं परिष्कृत है। जीक रामनिर्घोष के प्रयोग से उनका काव्य और मधुर बन गया है।

हरिध्यास यज्ञाभूष में रामकान्ध, राम कल्या, राम-विष्णुवत्, राम देव मंदार, राम का नीराधार, राममन्य, राम-बुद्धावर्ती, राम मदार, राम मेरु, राम धीरु एवं राम कंकरी, आदि राम जाये हैं।

बृहद उत्पल मणिमाळ में भी जीक राम जाये हैं। इसमें राम कल्या, रामजपरी, राम विष्णुवरी, रामकान्धी, राम-काया, राम कावरी, राम धारंग, राम धेकी सिद्ध, राम काकवत्, राम नीरी, राम कान्धी, राम परव, राम काया सिन्धु, राम काया-वरी, राम नीरी, राम कलि, राम धीरु के, रामपंथ, राम कनकी रामपिराक, राम विष्णुवरी, राम कंठा, राम काष्ठी, राम करावी राभिराव, राम कटवारी, राम विष्णुवरी, राम विष्णुवत्, राम कल्याण, राम धेकीवी, राम विष्णुवत्, राम धारंग, रामनीमरुदराम, काकि-वरी, राममान, रीक सं, रामनीरुद, रामकाकिवरी, राम मान राम परव, राम कायावरी, रामधीरु, राम धारंग आदि राम जाये हैं।

हीराकिर्तव और नित्य विहार पदावली के पदों की भी जीक राम-रागनिर्घोष के आधार पर रचना हुई है। इसमें राम भरम राम देव मंदार, राम रागनिर्घोष, राम कावरी, रामकान्धी, राम धारंग, राम नीरी, रामकान्धान, राम कंठानी, राम वेदारी, एवं राम कंकरी आदि राम जाये हैं। स्पष्ट है कि उन्हें राम-रागनिर्घोष का अच्छा ज्ञान था। उन्होंने भाषा की उनके अनुसार संवीया है।

छन्द- विधान

इस सतिका में अपने ग्रन्थों का प्रथम प्रायः दोहा, चौपाई, जोर पदों में लिखा है। प्रत्येक ग्रन्थ पदों में लिखा है ।

छीर व्यास काव्य में यह दोहा, चौपाई, के छीरिका जोरका, काव्य जोर काव्यों का भी प्रयोग हुआ है केछीर व्यास काव्य में इनको के सन्ध्या में लिखते हैं -

की छीर व्यास छीरिका इस लिखी काव्य भाव ।

की छीर व्यास देव का अम्बर तामर लिखी काव्य ॥

तामर काव्य छन्द नामा लिखी तो जहरी काव्य ।

सुख रत्न दाई यह काव्य इस सतिका का भाव ॥ ॥॥

सुख उत्कृष्ट मीमांसा की रचना भी प्रायः पदों में की है। नीला चिह्नित की रचना भी दोहे का चौपाई में की है। नीला चिह्नित का प्रथम दोहा इस प्रकार है -

प्रथम छीरिका छीर व्यास का, सतिका का भाव ।

लिख यह काव्य का रत्न, नीला चिह्नित नाम ॥ ॥२॥

चौपाई का उदाहरणदेखिये -

पाँच गेहूँ पान, लिखा काव्य। जहरी पान पान का भाव ॥

का प्रकाश चिह्नित काव्य । भिन्न भिन्न छीर काव्य काव्य ॥ ॥३॥

नित्य चिह्नित काव्य की रचना पदों में हुई है। ये पद गेहूँ के जोर राम रत्निका काव्य है, देव भाव के जोर प्रोक्त निम्न पद देखिये -

जहरी काव्य काव्य का भाव ।

काव्य काव्य काव्य काव्य काव्य काव्य ।

देवी काव्य काव्य का भाव ।

१- छीर व्यास काव्य - इस सतिका देव काव्य ।

२- नीला चिह्नित - इस सतिका देव काव्य । दोहा ।

३- * * * * * काव्य २-३

जठंगर बीजा

स्वरसिन्धु के जन्म में जठंगरों की मरमार है । जीव
स्थानों पर बहुत से जठंगर स्वाभाविक रूप से ही प्रकट होते हैं ।
अप्राध, रूप, उत्प्रेक्षा आदि जठंगर की बहुधा प्रकट होते हैं ।
अप्राध जठंगर के अविश्व उदाहरण दृष्टव्य हैं —

विश्व को नागर नर, निरति निरति निव मेन ।
सुखि मदन मद म्मं, नहिं जीवन दिन रेन ॥

इसमें पुनरुक्ति प्रकट की जाया है । मंजु मनि फिट-
फिटवाही की पुन्य की शीघ्र करवी है —

मंजु मनि फटफटावि छल्लि नावि नरम पावि ।
विम विरावि कल्लि कावि कैठि पठा कं ॥

सुन्दर रूप पर लीये लीये वीनीवज्जल समर में सज्ज है —
विन विन प्रवि प्रवि प्रविशिन प्रुपिष प्रेम विमूणादिं पावि पावि ।
रूप रहित रह वरणव वरणव कुराणी कुरावि रावि ॥

छलीनी का मौलीनी मंजु मनि की पाठा की पुन्य में
वारण लीये लीये है —

छलीनी मौलीनी का मौलीनी मंजु मनि की पाठा ।
कहिं विम म्मारी प्राम है वर कलिनी पाठा ॥

१ - बी जीका विरति - स्वरसिन्धु पृष्ठ १४-५

२ - " " " " ५७-१९

३ - " " " " ६२ - पद १३

४ - " " " " ६६ - २४

राधिका के सुगंधित तन और रूप के ऊपर का -
मोहन का मन मेंहरा रहा है । उनकी वाणी और उल्लासों का सुंदर
वर्णन देखिये ---

कोकनद केवली केवन कुरविंद हूँ,
केसर कलिर धेरि केसरि सुमन मे ।
मोहसिरी मलही मालही मेलही मंगल मे,
जुही मे सुनाय जाय दुखी के छवन मे ।
कं कं माधुरी के कौरन मे कूनि कूनि,
सूनि सुनि सरस सुगंध के मन मे ।
रहं मेहरानी मन मोहन जी मन मया,
रसिक कबीरी धी रूप का का मे ।^१

कनक स्वाम जी की की की कीकृत किया उस सभी मे
राधे का रकार कावा है ---
मीर मंडिता मे मियरा मे मारु मोहर मे,
के हरि की कीरि मे करीहं रसिकों की ।
केसर करन मे करी मे कुडु मंडिता मे,
मुलही मे निधि हो मुर सुना हो ॥टेका॥
पीतांबर मे प्रसिद करि ररि मुर मे
वादि हो मनु रसिक की की ।
कीर कीर कीकृत कीनीं सुन स्वाम तारि
राधे के नाम की रकार सब मे की ॥^२

१ - टीका विहंगि - रूपरसिनीय पुष्प ७७-१४

२ - नित्य विहार पदावली - रूपरसिनीय पुष्प ७६-८० पद ६१

देखिये बीनों रंगमल्ल में भी सुसौन्दर्य हो रहे हैं -

राज्य रंगिष्ठ बीर रंगमल्ल रसनी ।

मुद् - मुद् मुकुटाव महा-वीर न सम्राट का

बाव बरदाव जाव बाव गुनन में गी ॥टेक॥

जोड़े पट एक पोंड़े वीर किंक के निपट

मानव सुव - सत्तर में छे मुक्त मयंक है ।

स्पर्शिक न किरी कुंर बीर स्वाप नीर

काहु उरति नीर बी किरी करव रति री ॥

देखिये प्यारी बीड़ कर भी प्रीतन की के में

मरवी है ---

कवि री बचीकी रीत कत कत करिके

प्रीतन की नीर प्यारी कीमें के मरिके ॥

क विहारीरूप का वर्णन देखिये ---

सुम सुम्य वरीवर में निहित करव केति कत कुंन विहारी ।

बस परव बरसव बसनि यदि विपुल पुष्प का नीव महारी ॥

सनकादिन नीर नारद के वागम का वर्णन देखिये---

नीर नीरी नमुर नीरी नव किरी नी नांकी ।

जीन्हा कत कीर नाना रंग वर उपकावही ॥

✦ ✦ ✦ ✦ ✦ ✦ ✦

१ - नित्य विहार पदावली - स्पर्शिकीय पुष्प ८१ पद ६६

२ - मुकुट उत्सव मणिमाल - स्पर्शिकीय पुष्प ९०

३ - " " " " " " ३६

सीमा शिवा नु की की की उज्ज्वारी रूप स्यात ही ।
 किन लंक मानी मयंक , कई सपुंदा रुचि मात ही ॥
 की। नीह म्नु फेकव नयन, मनु उदकि मति ये वीर ही ।
 सुक सासिकापर निम्न फात, तिहिं परमानि लंके बायीं वीर ही ॥
 पुन सुकसीरुनि मनि, माऊ भूति पुनन नटिख बराय ही ।
 किं निमुक स्वांन विहोनि म्नु मति हानि रखी लुकाय ही ।
 लंक सुष्ट सुपीति मनि कु दाम विविध विनाय ही ॥
 कु लंक पर हवि देव म्नु विना सुष्ट सुलगाय ही ॥^१

वीरों के सुत हरिह वसुध के रूप बाटि हैं । उनके
 हरिह की वरिह वसुध के नाम वीर की वरिह हैं । वीरों के हरिह की
 वसुध है रूप यीजा देखि —

वसुध नीह सुत के विष्णु हरिह ।
 स्वांन स्वांन स्वरूप उजागर नागर मुन मनीर ॥१॥
 की की लंक वरिह रुचि उमंग मेह रूप वीर ।
 रूप हरिह का लयवत है निर्विह सुत सुमा की वीर ॥^२
 उमंग लंकार वीर रूप लंकार का हांवा देखि—
 सुत पैम पीका लुग लय
 मेह विहि बहेना लपटानी ॥^३

-
- १ - सुष्ट उत्पन्न मणिनाथ - उपरसिद्धि पृष्ठ २८-२९
 २ - नित्य विहार पदावली - उपरसिद्धि पृष्ठ ६१ पर ६२
 ३ - नित्यविहार पदावली - उपरसिद्धि पृष्ठ ७४-७५

स्वामि हाथ से दर्पण दिखा रहे हैं और स्वामि
छिर के नीचे संभार रही हैं । सति नन्द राधा की ज्योति को
स्वामि एक टक देख रहे हैं :-

कर से दर्पण स्वामि दिखावत
स्वामि ने संभारत छिर के नीचे ।
एक टक रहे निरति सुंदर नर
सदा सदा सतिवर्त्ता की नीचे ॥^१

गुरुद उत्तम गणिमात में एक देखी -

नो नर सुन हूँ की छारत ही ।
कर केन नरि नरि निवर्त्ता, नो केनरि की नारति ही ।^२

गुरु पद के पैदा होने पर गुरु का ऐसे उमड़ रहे हैं
जो छानर उमड़ रहा ही । अपना यहीन है -

कीन प्राण सक्त न मायी, कभी नु गुरु पद ।
तब गुरु का तब यही छानर ज्यों, परति प्रकाश ज्यों ॥^३

प्राण ज्योती राधा के कल गुरु के फन के समान हैं
उपमा देखी -

१ - नित्य धिक्कार फावटी - अरविन्द - पृष्ठ ८० पद ६३

२ - गुरुद उत्तम गणिमात - अरविन्द - पृष्ठ ३ पद १३

३ - " " " " " पृष्ठ ७० पद १०२

मृग

स्वामा स्वाम के जीव उत्सर्ग, भेदि प्रंगों, रस प्रंगों एवं रूप हीनत्व के वर्णन के कारण रूप रसिक मन के काव्य में प्राद और मातृ मुणों की परमार है। वास्तव में कुसाभा का मातृ का बाहिर है। उनका काव्य कंठारों और जीव राम रामनिर्वा है वृत्त है। राम रामनिर्वा द्वारा वह जीव के कारण उनके काव्य में मातृ मुण की और भीवृत्ति ही गई है। जहाँ पर भी वर्ण विनाय की सरलता है काव्य मुक्तिवत् है जहाँ प्राद मुण की प्राप्ति स्वामा-विक है। हरिभ्यास वशाकृत में भी जहाँ जनि मुण की गरिमा गई है जहाँ पर प्राद एवं मातृ मुण स्वामाविक रूप है प्राप्ति हुए हैं यैतये :-

क क हरिभ्यास देव देवार्थिक कृत सेव जानक दे

मेव परण करण रामें ।

सकत सुख निषाग जान कृत कृत प्रकृत मान मेक

मरत जनि उर वसान विनिर पानि ॥

नित्य रसवि रस विहास कृत न किन कुसावस

परम पद निषाग बाह वीवन्वी न पानि ।

जानि वन्वी वदव कं भरी ववि पानि जनि

भरी है रस कं भरी कदा जाने ॥

१ - हरिभ्यास वशाकृत - इपरातिनीय पुस्त ५० पद १

प्रायः पुणः वैशिष्ट्ये ---

प्रायः समस्त हरिव्यास नाम का जीवैः समस्त ज्ञानं सारं ।
 किञ्च नाम प्रायः पद्यैः ही प्रायः समस्त ज्ञानं हरिः सारं ।
 सम्पूर्णं हरिव्यास नाम का मन्त्राणि ज्ञानं कर्तुं नहिं सारं ।
 हरिव्यास वन्द्य परम् रूपं रचितं नमः पुनः स्ववारी ॥^१

एवमन्येन वैशिष्ट्ये ---

मन्त्रं हरिव्यास महा पुनः सारं ।
 मन्त्रं पुनः पुनः मन्त्रं स्वाधीनं वन्द्यमन्त्रं ज्ञानं सारं ।
 एव पुनः सारं सारं ज्ञानं नमः सारं सारं पुनः परं सारं ।
 श्री हरिव्यास सारं नमः नमः सर्वं सारं सारं श्री सारं ॥^२

सप्तमः अङ्कः

-
- १ - हरिव्यास यज्ञावृत्त - स्वरसिद्धिः पृष्ठ ५६ पद २
 २ - " " " " पृष्ठ ७७ पद १

ः स्व तत्त्व देव जी का निम्नार्क साहित्य में स्थान

स्व तत्त्व देव जी छिरयास देव के ज्ञान के चिन्ता के मातापिता जी रक्षा की। मातापिता निम्नार्क सन्तान के विज्ञान का मे सम्बन्धी रखती है। मातापिता का निम्नार्क सन्तान का पूरा महत्व है। एक प्रकार से स्व तत्त्व देव मातापिता के व्यवसाय को करते हैं। स्व तत्त्व देव ने छिरयास सन्तान में अपने गुरु जी और मातापिता की महत्ता का ज्ञान दिया है। उन्होंने कहा है :-

भक्त भक्त सबही मित्र, अपनी अपनी छोर । [1]

स्व तत्त्व छिरयास जी , भक्त तत्त्व का छोर ॥

जो जोउ जी छिरयास जी , जान को अन्तर ।

तब का का तब उपदे, दीये साक्षर ॥ [2]

जी छिर यास का छिर , स्व तत्त्व का जाति ।

नीचे है उनी जियो दीयो लोक र पानि ॥ [3]

जी सदा कम उपाका, जी बुद्धावन धाम ।

जी छिर यास का ज्ञान, पूरा दीये न ज्ञान ॥ [4]

उनका विज्ञान है कि छिरयास ज्ञान उनका कोई नहीं। छिरयास देवापनम देव के मन कावरे। किन्तु मेव के भारी प्रकाश को प्राप्त किया जा सका -

छिर यास देवमनम व का कद मेव ।

किन्तु मेव नीचे पाएव भारी प्रकाश मेव ॥ [5]

है का जी छिरयास किन्तु तेरी नाच न होय ।

जब का दीयेव , भारीप्रकाश दीये ॥ [6]

1-	छिर यास काका स्व तत्त्व देव पृष्ठ	2-8
2-	"	पृष्ठ 4-30
3-	"	पृष्ठ 8-7
4-	"	पृष्ठ 10-23
5-	"	पृष्ठ 20-6
6-	"	पृष्ठ 31-11

छीर व्यास का अंतर्धान सब पापों का नाश करने वाला है -

जहाँ नाम छीरव्यास का, वहाँ सब अन्धकार ।

नाम के पुरे जगत् के कुल विनाश ॥

141

जिसे छीर व्यास भजन के योग, काम, क्रोध, द्वेष सबारी जादि सभी का देव कुल है ।

जोगी को जे द्वेष, सबारी द्वेष जादि ।

जिसे हरण छीर व्यास पद, सब दर्शन सब जादि ॥

142

हे प्रिया मेरे ऊपर तुम करो जिससे मेरी देह निश्चिन्त मेरे चरणों-में पड़ी रहे -

करी प्रिया मेरे पर करी, करी कछुप का ।

निश्चिन्त रहे तुम चरण की, लख पड़ी मेरे देह ॥

143

जो प्रत्यक्ष रूप ने सब उच्च भक्ति का भूमि में प्रिया है -
जो सब संसार देव जो सब अद्वैत संसार है । प्रिया महापापी जो सब करने के लिये उत्तम हुआ था ।

144

सब संसार देव ने छीरव्यास देव जो जे और उनको महापापी का बहुत प्रकार प्रकार प्रिया करि को उनका निम्नार्थ सम्प्रदाय में बहुत महत्त्व पूर्व और विशिष्ट ज्ञान है। छीर व्यास देव निम्नार्थ सम्प्रदाय के सिद्धान्तों और निम्नार्थ सम्प्रदाय के प्रचारक रहे हैं। उनकी विन्दी साहित्य में विशिष्ट ज्ञान है। निम्नार्थ सम्प्रदाय में महापापी एक केवल ग्रन्थ माना जाता है। करि को विन्दी य देव जो भी निम्नार्थ सम्प्रदाय में एक महान ज्ञान है। महापापी में सबकुछ कुल जो सब प्रिया गया है।

1- छीर व्यास का नाम सब संसार देव पृष्ठ 90-92

2- " " " " पृष्ठ - 92-9

3- " " " " पृष्ठ 91-9

4- सब उच्च भक्ति का भूमि पृष्ठ 9 सम्प्रदाय सब ।

एक संतक जी की अन्य कृतियों से तुलना

एक संतक देव जी का काव्य महान है। जो एक काल पर उनकी उन्नता और भावना हिन्दी के प्रमुख कृतियों से निम्न है। सुदास ने नेत्र धर्म जो सुरनागर में किया है उसकी समता में एक संतक देव जी का नेत्र धर्म है। पितृ संतोष के निम्नोत्तरी से निम्न धर्म कला राज है, पितृ सेराजी में साधारण-प्रतिष्ठ की नौति रंगितों के जाने ।

अपि अल्ल लोच कृष्णधर्म न दीन अमुको माने ,

एक संतक देव जी की साक्षात्कृत की प्रेम मीरजी में धर्म है -

सकल लोक नृपमानी अपि नाम प्रवीण ।

अपि प्यारी प्रेम के जाने है रहे दीन ॥ [1]

विहारी नाम रीतिज्ञान के प्रमुख धर्म हुए हैं। उनके दोषों के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि मागद में मागद भरा है। उनके दोषों "देखत में छोटे लो जाय अल मीर"।

एक संतक देव के जोर पर विहारी के दोषों से तनका लगे है ।

नौवे का उदाहरण दण्डक है "विहारी का दोष है -

पितृ पितृ कर्मो पढी किन्तु पितृ भवि कमान ।

नान निरु केरु नृपति नहि बंध विनोदनि मान ॥ [2]

एक संतक देव निरु विहार पदा जी में निम्न है -

विहारी प्यारी कर्मो पितृ पढी ।

विहारी पनति केरु पितृ ठारे भवि रहत निरु जी ।

विहारी साधों केरु जान जु जान दुतारीत लडी ॥ [3]

विहारी नाम ने विहारी कर्मों में निम्न है-

तो पर प्यारी उरवती, पुन साँके कमान ।

दु मोहन को उर लगी , है उरवती कमान ॥ [4]

1- साक्षात्कृत प्रेम मीरजी एक संतक देव पृष्ठ 9-2

2- विहारी कर्मों - विहारी नाम दोषा 396 विहारी रत्नाकर ।

3- निरु विहार पदाजी एक संतक देव पृष्ठ 39

4- विहारी कर्मों विहारी नाम दोषा -25 विहारी रत्नाकर

सब सत्त्व देव विहारी है ॥

जान उर की उरवारी प्यारी ।

यनि भुज्ज लो अस्त उरवारी प यन्तु विह प्यारी ॥ [१]

विहारी जान मे नैनों का कर्म करते हूँ विहारी है।

सब विहारी गंजु लिये गंजु गंजु देन ।

गंजु गंजु ॥ विहारी गंजु गंजु नैन ॥ [२]

उज्ज है गीते है प उज्ज है गीते है ।

पुनः गीते है गीते है नैन विहारी है ॥ [३]

सब प्रकार हम देखते हैं कि सब सत्त्व देव के अनेक कर्म विहारी साहित्य के उज्ज जोति के बिकारों के कर्म से कर्मा करी है। सब प्रकार हम यह देखते हैं कि सब सत्त्व देव उज्ज जोटि के बिकारों के और उनकी बिकार उज्जोति के विहारी बिकारों के कर्म से कर्मा में किसी प्रकार कम नहीं है ।

1- विहारी विहारी प्यारी सब सत्त्व देव पद - 43

2- विहारी अस्त विहारी जान दोन 44- विहारी रत्नाकर

3- बीजा विहारी नित्य विहारी प्यारी सब सत्त्व देव पद 46

हिन्दी साहित्य को हम किस देव की का प्रदेव

इस तत्त्विक देव ने छीरब्यास यन्त्राक्ष की रचना की जिसमें अपने गुरु छीरब्यासदेव के कम का गान किया । निर्गुण भीष्म परम्परा में गुरु के प्रति बड़ा भाव रहा है और गुरु को उस बीचर को दिखाने जाता कबल उसी भी कबल कहा है । वस प्रखर छीरब्यास यन्त्राक्ष की रचना से गुरुओं के प्रति बड़ा ही भावना की जोड़ि हुई और बड़ी के प्रति जादूभाय बड़ा । वृद्ध उरुतय नजिभास में इस तत्त्विक देव की ने ओक उरुतया का वर्णन किया है।

उन उत्सवों में ब्यापार ब्याम का बेमि झोड़ा करते थे और जानबूझा करते थे।

एकसे अनुसन्धातृत्व का कृति की कृति होती है और जीवन में जहाँ का सभी भावना का अभिव्यक्ति का विकास होता है जिससे जीवन भी जीवन का होता है । भारतीय संस्कृति के प्रतीक ओर उत्कृष्ट जीवन में उत्कृष्ट का जीवन की भी कृति करते हैं । जीवन में उत्कृष्ट जीवन का विकास का निर्माण करते हैं । साहित्य का उद्देश्य जीवन को जीवन का बनाना और जीवन-मूल्य बनाना है । जीवन की उत्कृष्ट में जीवन का । जीवन का जीवन में जीवन का जीवन का जीवन है । जीवन का जीवन सम्बन्धी साहित्य का प्रकार प्रकार हुआ । जीवन का प्रकार प्रकार में जीवन का जीवन का जीवन है । जीवन का जीवन पर जीवन का सम्बन्धी साहित्य का प्रकार प्रकार प्रकार हुआ ।

निम्बार्क सम्प्रदाय में महावाणी का अद्वितीय सम्बन्ध है । यह प्रकार
 है यह विद्वान्ता ग्रन्थ है । महावाणी के प्रचार प्रसार के कारण निम्बार्क सम्प्रदायी
 साहित्य के प्रचलन में हम सचिक देव ने बड़ा योगदान किया । वे प्रतिभशाली
 श्री हरिश्चात देव के शिष्य थे उन्होंने निम्बार्क सम्प्रदाय सम्बन्धी साहित्य
 का कुल उनके कारण हुआ और निम्बार्क सम्प्रदाय का और अधिक प्रचार
 प्रसार हुआ ।

एक सत्त्व देव की भाषा थी ईर्ष्यायुक्त ब्रह्म भाषा थी सर्वज्ञो ब्रह्मभाषा की नीवूँट उनके कारण हुई । ब्रह्मभाषा के शोभार्थ का विजयत हुआ । हिन्दी साहित्य की नीवूँट हुई ।

एक संस्कृत देव के पदों तथा वाक्य में कौन रागरागिनीयों का प्रयोग हुआ है जिससे यह कहते हैं कि उनका वाक्य गैर है । ब्रजभाषा के कौन कवियों के वाक्य में उनके अनुसंधान पर रागरागिनीयों को स्थान मिला । उनका वाक्य रागरागिनीयों से सम्बन्ध है क्योंकि हिन्दी साहित्य में गेयता का आभाव है ।

एक संस्कृत के वाक्य से निम्नार्थ दर्शन एवं विज्ञानों का प्रकार प्रसार हुआ । इस प्रकार हिन्दी साहित्य में वैज्ञानिक विज्ञान का समावेश हुआ और प्रकार प्रसार हुआ । उनके साहित्य के कृत्यों से निम्नार्थ सम्बन्धी अन्य विषयों की संख्या में वृद्धि हुई ।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि एक संस्कृत देव का हिन्दी साहित्य को अधिक योगदान है। जहाँ एक ओर उनके साहित्य ने हिन्दी साहित्य में वैज्ञानिक विज्ञान सम्बन्धी भाषा का प्रकार प्रसार दिया वहीं ब्रजभाषा को राग रागिनीयों की ओर उन्मुख किया । उनके ग्रन्थों के समावेश से ब्रजभाषा तथा हिन्दी साहित्य का भेदाद भेदा ही जगह ही भाषा की दृष्टि में सुधार हुआ । इस प्रकार हिन्दी साहित्य का एक संस्कृत देव ने कौन प्रकार से उन्मुख किया हिन्दी साहित्य को एक संस्कृत देव का प्रदेय गान है ।

सहायक ग्रन्थ सूची
सहायक ग्रन्थ सूची

संस्कृत ग्रन्थ

लैला-लैलापनिषद्

रवीन्द्र प्रज्ञा

सत्यम् आ प्रज्ञा

मैत्रि उपनिषद्

मन्द कठोपनिषद्

मन्दोपनिषद्

मीनप्रमाणवत् मीमा - मीमांस्य मीमांस्य

नारद पालि सूत्र

आ सूत्र

रस्य मीमांस्य

मैत्र्यान्व कापीतु

विद्वान्त्व रत्नाञ्जलि - हरिश्चन्द्र

हरिश्चन्द्र रत्नाञ्जलि - रत्न मीमांस्य

निम्बार्क पाण्य - आ सूत्र

नारदपालि सूत्र

निम्बार्कपत्र वत् लोकी - हरिश्चन्द्र

हिन्दी-ग्रन्थ संस्करण

महाभाषा - हरिश्चन्द्र

कल्याण वर्ण - १६ वें ४

मीमांसा - श्रीमान्ध वाचस्पति

महाकाव्य - श्री मद्र

मुक्ति वृत्ति - डा० कदेवप्रसाद मिश्र

वृत्तान्त और वृत्त सम्प्रदाय - श्रीवीरभद्र गुप्त

विहारी रत्नाकर - श्री जगन्नाथ रत्नाकर

वृत्तान्त और वृत्त

वृत्त वाचस्पति का वृत्तान्त - डा० वल्लभ

निम्बार्क सम्प्रदाय विद्वान्ध और वाचस्पति - डा० प्रेमारायण मीमांसा

मि. वन्धु विनीत

श्री वृत्त उत्पत्ति मणिमात - श्रीरूपरसिक

वित्ताविहार महाकाव्य - रूपरसिक

सम्प्रदाय प्रदीप

मराठी वाचस्पति का वृत्तान्त - डा० पानीकर

परशुरामाष्टक - डा० रामप्रसाद वर्मा

निम्बार्क चम्पुदास - कुम्भामर्तु हिन्दी कवि - डा० नारायणदास झा

परशुरामाचार - ललितानन्द झा

श्री लालमोहन - सम्पादक कुम्भामर्तु

मानन्द । कुम्भामर्तु । डा० डा० विश्वनाथदास मिश्र

निम्बार्क वेदान्त - आचार्य ललितकुम्भामर्तु

कबीर कुम्भामर्तु - कबीरदास

विन्ध्यामणि परशुराम - रामचन्द्र कुम्भामर्तु

परशुराम पदावली - रामचन्द्र कुम्भामर्तु

परशुराम देव वाणी - रामचन्द्र कुम्भामर्तु

परशुराम चरण - उद्गाता - सम्पादक डा० डा० पी० श्रीराम

उद्गाता - श्री विष्णुजी विश्वेश्वर

विष्णुजी - विश्वेश्वर